जे त्रिजग उदरमझार प्राणी तपतअति दुद्धर खरे।
तिन अहित हरण सुवचन जिनके परम शीतलता भरे॥
तसु भ्रमरलोभित घ्राण पावन सरस चन्दन घसि सचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरु निर्ग्रंथनितपूजा रचूं।

दोहा

चन्दन शीतलता करै, तपतवस्तु परवीन।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरुतीन॥ २॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा॥

यह भवसमुद्रअपार तारण के निमित्त सुविधि ठई।
अति दृढ़ परम पावन जथारथ भक्ति वर नवका सही॥
उज्जल अखंडित सालि तंदुल पुंजधर त्रयगुण जचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरु निर्ग्रंथनितपूजा रचूं॥

दोहा

तंदुल सालि सुगन्ध अति, परम अखंडित बीन।
जासों पूजूं परमपद देवशास्त्रगुरु तीन॥ ३॥

ओं ह्रीं देवशास्त्र[illegible]यपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति [illegible]

जे विनयवंत सुभव्य उर अम्बुज प्रकाशन भान हैं।
जे एकमुखचारित्रभाषत त्रिजगमाहिं प्रधान हैं॥
लहि कुन्दकमलादिक पहुप भव भव कुवेदनसोंबचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थ नितपूजा रचूं॥

दोहा

विविधभांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन।
तासों पूजूं परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ४॥

ओं ह्रीं देवगुरुशास्त्रेभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पंनिर्वपामीति स्वाहा॥

अतिसबलमद कन्दर्प जाको क्षुधा उरग अमान है।
दुस्सह भयानकतासनाशनको सु गरुड़समान है॥
उत्तम छहों रस युक्त नित नैवेद्यकर घृत में पचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धान्त गुरु निर्ग्रन्थपद पूजा रचूं॥

दोहा

नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन॥ ५॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

जे त्रिजग उद्यमनाशकीनों मोहतिमिरमहावली ।
तिहकर्मघातीजानिदीपप्रकाश जोतिप्रभावली ॥
इहभांति दीपप्रजालकंचनके सुभाजनमें खंचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रंथनितपूजा रचूं ॥

दोहा ॥

स्वपरप्रकाशन जोति अति, दीपक तमकर हीन ।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्रगुरु तीन ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥

जे कर्म ईंधन दहन अग्नि समूह सम उद्धतलसै ।
वर धूपतास सुगन्धताकर सकलपरिमलता हंसै ॥
इहभांति धूप चढ़ाय नित भवज्वलनमाहिं नहीं पचूं ।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनितपूजा रचूं ॥

दोहा ॥

अग्निमाहि परिमल दहन, चन्दनादि गुण लीन ।
जासों पूजूं परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपंनिर्व-
पामीति

सोचत सुरसना घ्रान उर, उत्साहके करतार हैं।
मोपै न उपमा जाय वरणी सकल फल गुणसार हैं॥
सो फल चढ़ावत अरथ पूरन, सकल अमृतरसचूं।
अरहंतश्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनितपूजा रचूं॥

दोहा॥

जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण रसलीन।
जासों पूजो परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन॥ ८॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्पचरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध बहुजनमके पातक हरूं॥
इहभांतिअर्घचढ़ायनितभवि करत शिवपंकति मचूं।
अरहंत श्रुतसिद्धान्तगुरुनिर्ग्रन्थनित पूजा रचूं॥

दोहा॥

वसुविधि अर्घ संजोयके, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजूं परमपद, देवशास्त्र गुरु तीन॥ ९॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

अथ जयमाल ॥

॥ दोहा ॥

देवशास्त्रगुरुरत्नशुभ, तीनरत्नकरतार ।
भिन्नभिन्न कहुं आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥१॥

॥ पद्धड़िछन्द ॥

चउकर्मकी त्रेसठ प्रकृति नाशि। जीते अष्टादशदोष राशि जे परमसुगुणहैंअनंतधीर। कहवतकेछयालिसगुणगंभीर॥२॥ शुभसमवशरणशोभा अपार। शत इन्द्र नमतकर शीसधार। देवाधिदेव अरहंत देव। वंदों मन वच तनकर सुसेव ॥ ३ ॥ जिनकीधुनि है ओंकाररूप। निरअक्षरमय महिमा अनूप। दशअष्टमहाभाषासमेत। लघुभाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥ सो स्यादवादमय सप्तभंग। गणधर गूंथे बारह सुअंग। रवि शशिनहरैसोतम हराय। सोशास्त्रनमूं बहुप्रीतल्याय ॥ ५ ॥ गुरु आचारज उवझायसाध। तन नग्न रत्नत्रयनिधिअगाध। संसारदेह वैरागधार। निरवांछितपें शिवपद निहार ॥ ६ ॥ गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस। भवतारण तरणजिहाज ईस। गुरुकीमहिमावरणीनजाय। गुरुनामजपोंमनवचनकाय॥७॥

घत्ता—सोरठा

कीजे शक्ति प्रमान, शक्ति विना सरधा धरै ।

द्यानत श्रद्धावान, अजर अमरपद भोगवै ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

इति देवशास्त्रगुरुकी समुच्चय भाषा पूजा समाप्ता ॥

(३) सिद्धपूजा ॥

ऊर्ध्वाधोरयुतं सविन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं

वर्गापूरितदिग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्वान्वितम् ।

अन्तःपत्रतटेष्वनाहतयुतं ह्रींकारसंवेष्टितम्

देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो वैरीभकण्ठीरवः ॥

ओं ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर । संवौषट् । ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।

वन्देऽहं परमात्मानममूर्त्तमनुपद्रवम् ॥ १ ॥

(ऐसा कहकर सिद्धयन्त्र की स्थापना करना चाहिये)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं । हानादिभावरहितं

भववीतकायम् ॥ रेवापगावरसरोयमुनोद्भवानां ।
नीरैर्यजे कलशगैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ १ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतयेसिद्धपरमेष्ठिनेजन्ममृत्युविनाश-
नायजलंनिर्वपामीतिस्वाहा ।
आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं
सम्यक्त्वशर्मगरिमं जननार्तिवीतं ।
सौरभ्यवासितभुवं हरिचन्दनानां
गन्धैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥
ओंह्रींसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविना
शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ॥
सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् ।
सौगन्ध्यशालिवनशालिवराक्षतानाम्
पुञ्जैर्यजे शशिनिभैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतयेसिद्धपरमेष्ठिनेअक्षयपदप्राप्तयेअ-
क्षतान्निर्वपामीतिस्वाहा ॥
नित्यं स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञम्
द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् ।

मन्दारकुन्दकमलादिवनस्पतीनाम्
पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतयेसिद्धपरमेष्ठिनेकामबाणविध्वंस-
नायपुष्पंनिर्वपामीतिस्वाहा
ऊर्द्धस्वभाव गमनं सुमनोव्यपेतम्
ब्रह्मादिबीजसहितं गगनावभासम् ।
क्षीरान्नसाज्यवटकैरसपूर्णगर्भै,-
र्नित्यं यजे चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविध्वं-
सनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तं
निर्द्वन्द्वभावधरणं महिमानिवेशम् ।
कर्पूरवर्ति बहुभिः कनकावदातै-
र्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥
ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्टिने मोहान्धकार
विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥
पश्यन्समस्तभुवनं युगपन्नितान्तम्
त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रदीपम् ।
सद्द्रव्यगन्धघनसारविमिश्रितानां

धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

सिद्धासुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रै र्
ध्येयं शिवं सकलभव्यजनैः सुवन्द्यम् ।
नारिङ्गपूगकदलीफलनारिकेरैः
सोऽहं यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

गन्धाढ्यं सुपयोमधुव्रतगणैः संगं वरं चन्दनम्
पुष्पौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं चरुं दीपकम् ।
धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सेनोत्तरं वाञ्छितम् ॥९॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

ज्ञानोपयोगविमलं विशदात्मरूपम्
सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् ।
कर्मौघकक्षदहनं सुखशस्यबीजम्

वन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्ध परमेष्ठिने महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ जयमाला

त्रैलोक्येश्वरवन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीम्
येनाराध्य निरुद्धचण्डमनसः सन्तोऽपि तीर्थंकराः ।
सत्सम्यक्त्वविबोधवीर्यविशदाव्याबाधताद्यैर्गुणैर्
युक्तांस्तानिह तोष्टवीमि सततं सिद्धान् विशुद्धोदयान् ॥१०॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अथ जयमाला ।

विरागसनातनशान्तनिरंश । निरामय निर्भयनिर्मल हंस । सुधामविबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ १ ॥ विदूरितसंसृतभाव निरङ्ग । समामृतपूरित देव विसङ्ग ॥ अबन्धकषायविहीनविमोह । प्रसीदविशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥ निवारितदुःकृतकर्मविपाश । सदामलकेवलकेलिनिवास ॥ भवोदधिपारगशान्त विमोह । प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ३ ॥ अनन्तसुखामृतसागर धीर । कलङ्करजोमलभूरिसमीर ॥ विखण्डि-

तकाम विरामविमोह । प्रसीदविशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ४ ॥ विकारविवर्जित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्र विलोकत लोक ॥ विहार विराव विरङ्ग विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥ रजोमलखेदविमुक्त विगात्र । निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ॥ सुदर्शनराजितनाथविमोह । प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ६ ॥ नरामरवन्दित निर्मल भाव । अनन्तमुनीश्वरपूज्यविहाव ॥ सदोदय विश्वमहेशविमोह ।प्रसीद विशुद्धिसुसिद्धसमूह ॥७॥ विदंभ वितृष्न विदोष विनिद्र । परापर शङ्कर सारवितन्द्र ॥ विकोप विरूपविशङ्कविमोह । प्रसीद विशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ८ ॥ जरामरणोज्झित वीतविहार । विचिंतित निर्मल निर्हङ्कार ॥ अचिन्त्यचरित्र विदर्प विमोह । प्रसीदविशुद्धसुसिद्धसमूह ॥ ९ ॥ विवर्णविगन्धविमानविलोभ । विमायविकायविशब्दविलोभ । अनाकुल केवल सर्व विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥ १० ॥

घत्ता ।

असमसमयसारं चारुचैतन्यचिन्हं परपरणतिमुक्तंपद्मनन्दीन्द्रवन्द्यम् ॥ निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रंविशुद्धं स्मरति नमति यो वा स्तौति सोभ्येतिमुक्तिम् ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अर्घं महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

अडिल्लछन्द ।

अविनाशी अविकार परमरसधाम हो ।
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हो ॥
शुद्धबोध अविरुद्धअनादि अनंत हो ।
जगतशिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥
ध्यानअगनिकर कर्म कलंक सबै दहे ।
नित्य निरंजनदेव सरूपी हो रहे ॥
ज्ञायके आकार ममत्वनिवारिकै ।
सो परमातम सिद्ध नमूं सिरनायकै ॥ २ ॥

दोहा ।

अविचलज्ञानप्रकाशतैं, गुण अनन्त की खान ।
ध्यान धरै सो पाइये, परमसिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

(४) सप्त ऋषि पूजा ।

॥ छप्पय ॥

प्रथम नाम श्री मन्व दुतिय स्वर मन्व ऋषीश्वर । तीसर मुनि श्री निचयसर्व सुंदर चौथोवर ॥ पंचम श्री

जयवान विनय लालस षष्टम भनि। सप्तम जय मित्राख्य सर्व चारित्र धाम गनि॥ ये सातों चारण ऋद्धि धर करों तास पद थापना। मैं पूजों मन बच काय कर जो सुख चाहूं आपना॥ ओं ह्रीं चारण ऋद्धि सहित आजमान सप्त ऋषीश्वर जिनाय अत्र अत्र वतरं संबौ षटह्वानन अत्र तिष्ट तिष्ट ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहिता भव भव बिषट संधीश करणं॥ अथाष्टक गीता छंद॥ शुभ तीर्थ उद्भव जल अनूपम मिष्ट शीतल ल्याय के। भव तृषा कंद निकंद कारण शुद्ध घट भरवाय के॥ मन्वादि चारण ऋद्धि धारक मुनिन की पूजा करों। ता करैं पातिक हरैं सारे सकल आनंद बिस्तरों॥ ओं ह्रीं श्री मन्वस्वरन न्व निचय सर्वसुंदर जयवान विनय लालस जय मित्र सप्त चारण ऋषिभ्यो॥ जलं॥१॥ श्री खण्ड कदली नंद केसरि मन्द मन्द घिसाय के। तसु गंध प्रसरित दिह दिगंतर भरि कटोरी भाय के॥ मन्वादि०॥ सुगंधं॥ २॥ अति धवल अक्षित खण्ड बरजित मिष्ट राजन भोग के। कल धौत थारा भरित सुन्दर चुनित शुभ उपयोग के॥ मन्वादि०॥ अक्षतं॥ ३॥ बहु वर्ण सुवरण सुमन आछे अमल

कमल गुलाब के। केतुकी चम्पा चारु मरुआ चुने निज कर चाव के ॥ मन्वादि० ॥ पुष्पं ॥४॥ पक्वान्न नाना भांति चातुर रचित शुद्ध नये २। सद शिष्ट लाडू आदि भर बहु पुरट के थारा लए ॥ मन्वादि० ॥५॥ कल धौत दीपक जड़ित नाना भरित गो घृत सार सो। अति ज्वलित जग मग जोति याकी तिमिर नाशन हार सो॥मन्वादि० ॥दीपं॥ ६ ॥ दिक चक्र गंधित होत जाकर धूप दशअंगी कही ॥ सो ल्याय मन वच काय शुद्ध लगाय कर खेऊं सही ॥ मन्वादि ॥ धूपं ॥ ७॥ वर दाख खारक अमित प्यारे मिष्ट २ चुनाय के। द्रावड़ी दाड़िम चारु पुंगी थाल भर भर भाय के ॥ मन्वादि० ॥ फलं ॥८॥ जल गन्ध अक्षत पुष्प चरु वर दीप धूप सुल्यावना। फल ललित आठो द्रव्य मिश्रित अर्घ कीजे पावना ॥मन्वादि०॥अर्घं ॥[जयमाल] त्रिभंगी छन्द॥ वन्दों ऋषिराजा धर्म जहाजा निज पर काजा करत भलें। करुणा के धारी गगन बिहारी दुख अपहारी भरम दलें ॥ काटत यम फन्दा भव जलफन्दा करतअनन्दा चरणन में। जो पूजें ध्यावें मंगल गावें फेर न आवें भव बन में ॥ [पद्धड़ी छन्द] जय श्री म व मुनि राजा महंत। त्रस थावर की रक्षा करंत ॥जय मिथ्या-

तम नाशक पतंग। करुणा रस पूरित अंग अंग ॥१॥ जय श्री स्वर मन्त्र अकलंक रूप। पद सेव करत नित अमर भूप जय पंच अक्ष जीते महान। तप तपत देह कंचन समान ॥ २ ॥ जय निश्चय सप्त तत्वार्थ भ्यास। तप रमा तनो मन में प्रकाश ॥ जय विषय रोध सम्बोध भान। पर पर णति नाशन अचल ध्यान ॥ ३ ॥ जय जयहि सर्व सुन्दर दयाल। लखि इन्द्र जालवत जगत जाल ॥ जय तृष्णाहा- री रमण राम। निज परणत में पायो आराम ॥४॥ जय आनन्द घण कल्याण रूप। कल्याण करत सबको अनूप जय मद नाशन जयवान देव। निरमद विचरत सब करत सेव ॥ ५॥ जय जय विनय लालस अमान। सब शत्रु मि- त्र जानत समान ॥ जय कृशित काय तप के प्रभाव। छ- वि छटा उठति आनन्द दाय ॥६॥ जय मित्र सकल जग के सुमित्र। अन गिनत अधम कीने पवित्र ॥ जय चन्द्र बदन राजीव नयन। कबहू विकथा बोलत न बयन ॥७॥ जय सातो मुनिवर एक संग। नित गगण गमन करते अ- भंग ॥ जय आये मथुरापुर मझार। तहां मरी रोग का अति प्रचार ॥ ८॥ जय जय तिन चरणों के प्रसाद। सब

सरी देव कृत भई वादि॥ जय लोक करे निर्भय समस्त। हम नवत सदा तिन जोड़ हस्त ॥ ९ ॥ जय ग्रीष्म ऋतु पर्वत मझार। नित करत अतापन योग सार॥ जय तृषा परीषह करत जेर। कहुं रंच चलत नहीं मन सुमेर ॥१०॥ जय मूल अट्ठाइस गुणन धार। तप उग्र तपत आनन्दकार। जय वर्षा ऋतु में वृक्ष तीर। तहां अति शीतल झेलत समीर ॥११॥ जय शीतकाल चौपट मझार। कै नदी स-रोवर तट बिचार॥ जय निवसत ध्यानारूढ़ होय। रं-चक नहीं मटकत रोम कोय ॥१२॥ जय मृतकासन वज्रा-सनीय। गौ दूहन इत्यादिक गनीय॥ जय आसन नाना भांति धार। उपसर्ग सहित ममता निवार ॥ १३ ॥ जय जपत तिहारो नाम कोय। लख पुत्रपौत्रकुल वृद्धि होय जय भरे लक्ष अतिशय भंडार। दारिद्र तनो दुख होय क्षार ॥१४॥ जय चोर अग्नि डांकिन पिशाच। अरु ईति भीति सब नसत सांच॥ जय तुम सुमरत सुख लहत लोक सुर असुर नवत पद देत धोक ॥ १५ ॥

। घत्ता छन्द ।

ये सातों मुनिराय महा तप लक्ष्मी धारी। परम पू-ज्य पद धरें सकल जग के हितकारी। जो मन वच तन

शुद्ध होय सेवे और ध्यावें। सो मन रंग लाल अष्ट ऋ-
द्धिन को पावें॥ ॥ दोहा॥

नमन करत चरणनि परत, अहो गरीब निवाज।
पंच परा वर्तननि से निरवारो ऋषिराज॥ इति।

[५] अथ शान्तिपाठ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथों से पुष्पवृष्टि कर-
ते जाना)

दोधकवृत्तम्।

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम्।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम्॥१॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थंकरंप्रणमामि २
दिव्यतरुःसुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ॥
आतपवारणचामरयुग्मेयस्य विभाति च मण्डलतेजः॥३॥
तं जगदर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मह्यमरं पठते परमांच॥४

वसन्ततिलकावृत्तम्।

येऽभ्यर्चितामुकुटकुण्डलहाररत्नैःशक्रादिभिःसुरगणैःस्तुतपा

दपद्माः । ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थङ्कराः सततशान्तिकराभवन्तु ॥ ५ ॥

उपजातिवृत्तम् ।

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम्
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञःकरोतु शान्तिंभगवान्जिनेन्द्रः ६ ॥

स्रग्धरावृत्तम् ।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतुबलवान्धार्मिको भूमिपालः
काले काले च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौरमारीक्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रंप्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

॥ श्लोक ॥

प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतः शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ ८ ॥

अथेष्टप्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासोजिनपतिनुतिः सङ्गतिः सर्वदार्य्यैः
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे
सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ १० ॥

आर्यावृत्तम्

तव पादौ मम हृदये, ममहृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥ ११ ॥

प्राकृत आर्य्यावृत्तम्

अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च ज मए भणियं।
तं खमउ णाणदेव य मज्झवि दुःक्खक्खयं दितु ॥ १२ ॥
दुःक्खखओ कम्मखओ समाहि मरणं च बोहिलाहोय
मम होउ जगतबंधव जिणवर तव चरणसरणेण ॥ १३ ॥

परिपुष्पाञ्जलिंक्षपेत्।

अथ विसर्जनं

ज्ञानतोऽज्ञानतोवापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया।
तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥
आह्वानं नैव जानामि नैव जानामि पूजनम्।
विसर्ज्जनंन जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ २ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैव च।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ ३॥
आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथाक्रमम्।
ते मयाऽभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तुयथास्थितिम् ॥ ४ ॥

इति नित्यपूजाविधानं समाप्तम् ॥

॥ ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥

[६] सहस्रनाम स्तोत्रम् ।

स्वयंभुवेनमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूतंवृत्तये चिन्त्यवृत्तये ॥ १ ॥
नमस्तेजगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे नमोनमः ।
विदांवर नमस्तुभ्यं नमस्ते वदतांवर ॥ २ ॥
कामशत्रुहणं देवमामनन्ति मनीषिणः ।
त्वामानुमःसुरेमौलिस्त्रग्मालाभ्यर्चितक्रमम् ॥ ३ ॥
ध्यानदुर्घणनिर्भिन्नः घनघातीमहातरुः ।
अनन्तभवसन्तानजयोध्यासीरनन्तजित् ॥ ४ ॥
त्रैलोक्यविजयेनोप्तदुर्दर्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजंविजित्यासीज्जन्ममृत्युञ्जयोभवान् ॥ ५ ॥
विधूताशेषसंसारो बन्धुर्नोभव्यबान्धवः ।
त्रिपुरारिस्त्वमीशोसि जन्ममृत्युजरान्तकृत् ॥ ६ ॥
त्रिकालविषयाशेष तत्स्वभेदात्त्रिधोच्छिदम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोसि त्वमीशिता ॥ ७ ॥

त्वामन्धकान्तकंप्राहुर्मोहान्धासुरमर्द्दनात् ।
अर्द्धन्ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोस्यतः ॥ ८ ॥
शिवः शिवपदाध्यासाद् दुरितारिहरोहरः ।
शङ्करःकृतशंलोके संभवस्त्वंभवन्सुखे ॥ ९ ॥
वृषभोसि जगज्ज्येष्ठः गुरुर्गुरुगुणोदयैः ।
नभियो नाभिसंभूतेरिक्ष्वाकुः कुलनन्दनः ॥ १० ॥
त्वमेकःपुरुषस्कन्धस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने ।
त्वंत्रिधाबुधसन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञानधारकः ॥ ११ ॥
चतुःशरणमाङ्गल्य मूर्त्तिस्त्वं चतुरः सुधीः ।
पञ्चब्रह्ममयोदेवः पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥ १२ ॥
स्वर्गावतारिणे तुभ्यं सद्योजातात्मने नमः ।
जन्माभिषेकवामाय वामदेव नमोस्तुते ॥ १३ ॥
संनिःक्रान्ताय घोराय परं प्रशमसीयुषे ।
केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय नमोस्तु ते ॥ १४ ॥
पुरुस्तत् पुरुषस्तुभ्यं विमुक्तपदभागिने ।
नमस्तत्पुरुषावस्थां भावनानर्घे बिभ्रते ॥ १५ ॥
ज्ञानावरणनिर्ह्रास नमस्तेनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदर्शने ॥ १६ ॥
नमो दर्शनमोहघ्नेक्षायिकामलदृष्टये ।

नमस्त्वारिकर्महन्त्रे विरागाय महौजसे ॥ १७ ॥
नमस्तेऽनन्तवीर्याय नमोऽनन्तसुखाय ते।
नमस्तेऽनन्तलोकाय लोकालोकविलोकिने ॥ १८ ॥
नमस्तेऽनन्तदानाय नमस्तेऽनन्तलब्धये।
नमस्तेऽनन्तभोगाय नमोऽनन्ताय भोगिने ॥ १९ ॥
नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये।
नमः परमपूताय नमस्ते परमर्षये ॥ २० ॥
नमः परमविद्याय नमः परमतच्छिदे।
नमः परमतत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥ २१ ॥
नमः परमरूपाय नमः परमतेजसे।
नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥ २२ ॥
परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः।
नमः पारेतमः प्राप्त धाम्ने ते परमात्मने ॥ २३ ॥
नमः क्षीणकलङ्काय क्षीणबन्धनमोऽस्तु ते।
नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥ २४ ॥
नमः सुगतये तुभ्यं शोभनागतमीयुषे।
नमस्तेऽतीन्द्रियज्ञान सुखायानिन्द्रियात्मने ॥ २५ ॥
कायबन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते।

नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामपि योगिने ॥ २६ ॥
अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परमयोगीन्द्रवन्दिताङ्घ्रिद्वयायते ॥ २७ ॥
नमः परमविज्ञान नमः परमसंयम ।
नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ॥ २८ ॥
नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशकस्पृशे ।
नमो भव्येतरावस्थाव्यतीयाय विमोक्षणे ॥ २९ ॥
संज्ञासंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायकदृष्टये ॥ ३० ॥
अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेपारमीयुषे ॥ ३१ ॥
अजराय नमस्तुभ्यंनमस्तेऽतीतजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाक्षरात्मने ॥ ३२ ॥
अलमास्तां गुणास्तोत्रमनन्तास्तावकागुणाः ।
त्वन्नामस्मृतिमात्रेण परमंशंप्रशास्महे ॥ ३३४ ॥
प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्धलक्षणास्त्वं गिरांपतिः ।
नाम्नामष्टसहस्रेणत्वां स्तुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ ३ ॥
एवंस्तुत्वाजिनंदेवं भक्त्यापरमया सुधीः ।

पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्रं पापशान्तये ॥ ३५ ॥
श्रीमान्स्वयंभूर्वृषभः शंभवः शंभुरात्मभूः ।
स्वयंप्र(भुः) भः प्रभुर्भोक्ताविश्वभूरपुनर्भवः ॥ ३६ ॥
विश्वात्मा विश्वलोकेशोविश्वतश्चक्षुरक्षरः
विश्वविद्विश्वविद्येशोविश्वयोनिरनीश्वरः ॥ ३७ ॥
विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशोविश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतोविश्वतोमुखः ॥ ३८ ॥
विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठोविश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृक्विश्वभूतेशोविश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ३९ ॥
जिनोजिष्णुरमेयात्मा विष्णुरीशोजगत्पतिः ।
अनन्तजिदचिंत्यात्माभव्यबंधुरबंधनः ॥ ४० ॥
युगादिपुरुषोब्रह्मापंचब्रह्ममयः शिवः ।
परःपरतरः सूक्ष्मः परमेष्ठीसनातनः ॥ ४१ ॥
स्वयं ज्योतिरजोजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः ।
मोहारिविजयीजेताधर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ४२ ॥
प्रशांतारिरनंतात्मायोगीयोगीश्वरार्चितः ।
ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्वज्ञोब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥ ४३ ॥
सिद्धोबुद्धःप्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।

सिद्धसिद्धान्तविद्ध्येयः सिद्धसाध्योजगद्धितः ॥ ४४ ॥
सहिष्णुरच्युतोऽनंत प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोजय्योभ्राजिष्णुर्धीश्वरोव्ययः ॥ ४५ ॥
विभावसुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ ४६ ॥

॥ इति श्रीमच्छतं ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षादमाश्वरः ॥ ४७ ॥
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजाविरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत्केवलीशान्तः पूजार्हः स्नातकोमलः ॥ ४८ ॥
अनंतदीप्तिर्ज्ञानात्मास्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।
भक्तःशक्तोनिराबाधोनिष्कलोभुवनेश्वरः ॥ ४९ ॥
निरंजनोजगज्ज्योतिर्निरुक्तोक्तिर्निरामयः।
अचलस्थितिरक्षोभ्यःकूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥ ५० ॥
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ताधर्मपतिर्द्धर्मोधर्मात्माधर्मतीर्थकृत् ॥ ५१ ॥
वृषध्वजोवृषाधीशोवृषकेतुर्वृषायुधः ।

वृषोवृषपतिर्भर्तावृषभांकोवृषोद्भवः ॥ ५२ ॥
हिरण्यनाभिर्भूतात्माभूतभृद्भूतभावनः ।
प्रभवोविभवोभास्वान्भवोभावो भवांतकः ॥ ५३ ॥
हिरण्यगर्भःश्रीगर्भःप्रभूतविभवोद्भवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथोजगत्प्रभुः ॥ ५४ ॥
सर्वादिः सर्वदृक्सर्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मासर्वलोकेशः सर्ववित् सर्वलोकजित् ॥ ५५ ॥
सुगतिः सुश्रुतःसुश्रुक्सुवाक्सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतोविश्वतः पादोविश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ ५६ ॥
सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ५७ ॥
इति दिव्याशतम् ॥ २ ॥
स्थविष्ठः स्थविरोज्येष्ठः प्रष्ठः प्रेष्ठोवरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठोगरिष्ठोबंहिष्ठःश्रेष्ठोनिष्ठोगरिष्ठगीः ॥
विश्वभृद्विश्वसृट्विश्वेट्विश्वभुग्विश्वनायकः ।
विश्वाशीविश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितांतकः ५८
विभवोविभयोवीरोविशोको विजरोजरन् ।
वि[illegible]ोविरतोसंगोविविक्तोवीतमत्सरः ॥ ६० ॥

विनेयजनतावन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः ।
वियोगोयोगविद्विद्वान्विधाताऽसुविधिः सुधीः ६१ ।
क्षांतिभाक्पृथिवीमूर्तिःशांतिभाक्सलिलात्मकः
वायुमूर्त्तिरसंगात्मावन्हिमूर्तिरधर्मधृक् ॥ ६२ ॥
सुयज्वायजमानात्मासुत्वासुत्रामपूजितः ।
ऋत्विक्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगममृतंहविः ॥ ६३ ॥
व्योममूर्तिरमूर्तात्मानिर्लेपोनिर्मलोचलः ।
सोममूर्तिःसुसौम्यात्मासूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥ ६४ ॥
मंत्रविन्मंत्रकृन्मंत्रीमंत्रमूर्तिरनंतकः ।
स्वतंत्रस्तंत्रकृत्स्वांतः कृतांतांतः कृतांतकृत् ॥ ६५ ॥
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
नित्योमृत्युंजयोमृत्युरमृतात्मामृतोद्भवः ॥ ६६ ॥
ब्रह्मनिष्ठःपरंब्रह्मब्रह्मात्मा ब्रह्मसंभवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेट् महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ ६७ ॥
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।
प्रशमात्माप्रशांतात्मापुराणपुरुषोत्तमः ६८ ॥

॥ इतिस्थविष्ठशतं ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजोशोकःकःस्रष्टापद्मविष्टरः ।
पद्मेशःपद्मसंभूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ ६९ ॥

पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ ३० ॥
गणाधिपो गण ज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरो गुणांभोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ॥ ३१ ॥
गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥ ३२ ॥
अगण्यः पुण्यधीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥ ३३ ॥
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।
निर्द्वंद्वो निर्मदः शांतो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥ ३४ ॥
निर्निमेषो निराहारो निःक्रियो निरुपप्लवः ।
निष्कलंको निरस्तैना निर्धूतागो निराश्रयः ॥ ३५ ॥
विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिंत्यवैभवः ।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुकृत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ३६ ॥
एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥ ३७ ॥
पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः ।
त्राता भिषक्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ॥ ३८ ॥

कविः पुराणपुरुषोवर्षीयानृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठाप्रभवोहेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ७९ ॥
॥ इति महाशतं ॥ ४ ॥
श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णोलक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षःपुण्डरीकाक्षः पुष्कलःपुष्करेक्षणः ॥ ८० ॥
सिद्धिदःसिद्धसंकल्पःसिद्धात्मा सिद्धिसाधनः ॥
बुद्धबोध्योमहाबोधिर्वर्धमानोमहर्धिकः ॥ ८१ ॥
वेदांगोवेदविद्वेद्योजातरूपोविदांवरः ।
वेदवेद्यः स्वयंवेद्योविवेदोवदतांवरः ॥ ८२ ॥
अनादिनिधनोव्यक्तोव्यक्तवाक्व्यक्तशासनः ।
युगादिकृद्युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ॥ ८३ ॥
अतीन्द्रोतीन्द्रियोधींद्रोमहेंद्रोतींद्रियार्थदृक् ।
अनिंद्रियोहमिंद्रार्च्योमहेंद्रमहितोमहान् ॥ ८४ ॥
उद्भवः कारणंकर्तापारगोभवतारकः ।
अगाह्योगहनंगुह्यं परार्ध्यः परमेश्वरः ॥ ८५ ॥
अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिंत्यर्द्धिः समग्रधीः । प्राग्र्यः
प्राग्रहरोभ्यग्रःप्रत्यग्रोग्रयोग्रिमोग्रजः ॥
महातपामहातेजामहोदर्कोमहोदयः ।
महायशामहाधामामहासत्वोमहाधृतिः ॥ ८७ ॥

महाधैर्योमहावीर्यो महासंपन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महामूतिर्महाद्युतिः ॥ ८८ ॥
महामतिर्महानीतिर्महाक्षांतिर्महोदयः ।
महाप्राज्ञोमहाभागो महानन्दोमहाकविः ॥ ८९ ॥
महामहामहाकीर्तिर्महाकांतिर्महावपुः ।
महादानोमहाज्ञानोमहायोगोमहागुणः ॥ ९० ॥
महामहपतिप्राप्त महाकल्याणपंचकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशोमहेश्वरः ॥ ९१ ॥
॥ इति श्रीवृक्षशतं ॥ ५ ॥
महामुनिर्महामौनी महाध्यानीमहादमः ।
महाक्षमोमहाशीलो महायज्ञोमहामखः ॥ ९२ ॥
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः ।
महामैत्रीमयोऽमेयो महोपायोमहोदयः ॥ ९३ ॥
महाकारुणिकोमंता महामंत्रोमहामतिः ।
महानादोमहाघोषो महेज्योमहसांपतिः ॥ ९४ ॥
महाध्वरधरोधुर्यो महौदार्योमहेष्टवाक् ।
महात्मानमसांधाम महर्षिर्महितोदयः ॥ ९५ ॥
महाक्लेशांकुशःशूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।

महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ॥ ९६ ॥
महाभवाब्धिसन्तारिर्महामोहाद्रिसूदनः ।
महागुणाकरःक्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ॥ ९७ ॥
महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मामहाव्रतः ।
महाकर्मारिहात्मज्ञो महादेवोमहेशिता ॥ ९८ ॥
सर्वक्लेशापहःसाधुः सर्वदोषहरोहरः ॥
असंख्येयोप्रमेयात्मा शमात्माप्रशमाकरः ॥ ९९ ॥
सर्वयोगीश्वरोचिन्त्यः श्रुतात्माविष्टरश्रवाः ।
दांतात्मादमतीर्थेशोयोगात्मा ज्ञानसर्वगः ॥ १०० ॥
प्रधानमात्मा प्रकृतिःपरमःपरमोदयः ।
प्रक्षीणबन्धःकामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥ १०१ ॥
प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
प्रमाणंप्रणिधिर्दक्षोदक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ॥ १०२ ॥
आनंदोनंदनोनंदोवंद्योनिंद्योभिनंदनः ।
कामहाकामदः काम्यः कामधेनुररिञ्जयः ॥ १०३ ॥

इतिमहामुनिशतं ॥ ६ ॥

असंस्कृतसुसंस्कारोप्राकृतोवकृतांतकृत् ।
अंतकृत्कांतगुःकांतश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥ १०४ ॥

अजितोजितकामारिरमितो मितिशासनः ।
जितक्रोधोजितामित्रोजितक्लेशोजितांतकः ॥ १०५ ॥
जिनेंद्रः परमानंदोमुनींद्रोदुंदुभिस्वनः ।
महेंद्रवंद्योयोगींद्रोयतींद्रोनाभिनंदनः ॥ १०६ ॥
नाभेयोनाभिजोजातः सुव्रतोमनुरुत्तमः ।
अभेद्योनत्ययोनाश्वानधिकोधिगुरुःसुधीः ॥ १०७ ॥
सुमेधा विक्रमीस्वामीदुराधर्षोनिरुत्सुकः ।
विशिष्टःशिष्टभुक्शिष्टःप्रत्ययःकामनोनघः ॥
क्षेमीक्षेमंकरोक्षय्यः क्षेमधर्मपतिःक्षमी ।
अग्राह्योज्ञाननिग्राह्योध्यानगम्योनिरुत्तरः ॥ १०९ ॥
सुकृतीधातुरिज्यार्हःसुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥ ११० ॥
सत्यात्मासत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीःसत्यसंधानःसत्यःसत्यपरायणः ॥ १११ ॥
स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्योगरीयसाम् ॥ ११२ ॥
सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ॥ ११३ ॥

सुघोषः सुमुखः सौम्यः सखदः सुसितः सुहृत् ।
सुगुप्तोगुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षोदमेश्वरः ॥

॥ इति असंस्कृतशतं ॥ ७ ॥

वृहन्वृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषीधिषणोधीमान् शेमुषीशोगिरांपतिः ॥११५
नैकरूपोनयोत्तुंगोनैकात्मानैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञःकृतलक्षणः ॥ ११६ ॥
ज्ञानगर्भोदयागर्भो रत्नगर्भःप्रभास्वरः ।
पद्मगर्भोजगद्गर्भो हेमगर्भःसुदर्शनः ॥ ११७ ॥
लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिनईशिता ।
मनोहरोमनोज्ञांगोधीरोगभीरशासनः ॥ ११८ ॥
धर्मयूपोदयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधोदेवः कर्महा धर्मघोषणः ॥ ११९ ॥
अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोमोघशासनः ।
सुरूपःसुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ॥ १२० ॥
सुस्थितः स्वास्थ्यभाक् स्वस्थोनीरजस्कोनिरुद्धवः ।
अलेपोनिष्कलङ्कात्मा वीतरागोगतस्पृहः ॥ १२१ ॥
वश्येन्द्रियोविमुक्तात्मा निःसपत्नोजितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोनन्तधामर्षिर्मंगलंमलहानघः ॥ १२२ ॥

अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तोमूर्तिमानेकोनैकोनानैकतत्त्वदृक् ॥ १२३ ॥
अध्यात्मगम्योगम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगःसदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥
शंकरःशंवदोदान्तोदमीक्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥ १२५ ॥
त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रि स्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥

॥ इति बृहच्छतं ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शीलोकेशो लोकधातादृढव्रतः ।
सर्वलोकातिगःपूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १२७ ॥
पुराणपुरुषःपूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
आदिदेवःपुराणाद्यःपुरुदेवोधिदेवता ॥ १२८ ॥
युगमुख्योयुगज्येष्ठोयुगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णःकल्याणकल्यः कल्याणलक्षणः ॥
कल्याणप्रकृतिर्दीप्तः कल्याणात्माविकल्मषः ।
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नःकलाधरः ॥ १३० ॥
देवदेवोजगन्नाथोजगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।

जगद्धितैषीलोकज्ञः सर्वगोजगदग्रजः ॥ १३१ ॥
चराचरगुरुर्गोप्योगूढात्मागूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्माज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥ १३२ ॥
आदित्यवर्णोभर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णोरुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ॥ १३३ ॥
तपनीयनिभस्तुंगोबालार्काभोनलप्रभः ।
संध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ १३४ ॥
निष्टप्तकनकच्छायःकनत्कांचनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुंभनिभप्रभः ॥ १३५ ॥
द्युम्नभाजालरूपाभोदीप्तजांबूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तोहाटकद्युतिः ॥ १३६ ॥
शिष्टेष्टःपुष्टिदःपुष्टः स्पष्टःस्पष्टाक्षरक्षमः ।
शत्रुघ्नोप्रतिघोमोघः प्रशास्ताशासितास्वभूः ॥
शांतिनिष्ठोमुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शांतिदः शांतिकृच्छांतिः कांतिमान्कामितप्रदः ॥
श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थितः स्थावरः स्थाणुःप्रथीयान्प्रथितःपृथुः ॥

॥ इति त्रिकालशतं ॥ ९ ॥

दिग्वासावातरसनोनिर्ग्रंथेशोदिगम्बरः ।
निष्किंचनोनिराशंसोज्ञानचक्षुरमोमुहः ॥ १४० ॥
तेजोराशिरनंतौजः ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ॥ १४१ ॥
जगच्चूडामणिर्दीप्तःशंवान् विघ्नविनायकः ।
कलिघ्नःकर्मशत्रुघ्नोलोकालोकप्रकाशकः ॥ १४२ ॥
अनिद्रालुरतंद्रालुर्जागरूकः प्रमामयः ।
लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥ १४३ ॥
मुमुक्षुर्बंधमोक्षज्ञोजिताक्षोजितमन्मथः ।
प्रशांतरसशैलूषोभव्यपेटकनायकः ॥ १४४ ॥
मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नोमूलकारणः ।
आप्तोवागीश्वरःश्रेयान्श्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ।
प्रवक्तावचसामीशोमारजिद्विश्वभाववित् ।
सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतोहतदुर्नयः ॥ १४६ ॥
श्रीशःश्रीश्रितपादाब्जोवीतभीरभयंकरः ।
उत्सन्नदोषोनिर्विघ्नोनिश्चलोलोकवत्सलः ॥
लोकोत्तरोलोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनतपूतवाक् ॥ १४८ ॥

प्रज्ञापारमितःप्राज्ञोयतिर्नियमितेंद्रियः ।
भदंतोभद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षोवरप्रदः ॥ १४९ ॥
समुन्मूलितकर्मारिःकर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यःकर्मठःप्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥ १५० ॥
अनंतशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यंबकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १५१ ॥
समंतभद्रःशांतारिर्धर्माचार्योदयानिधिः ।
सूक्ष्मदर्शीजितानंगः कृपालुर्धर्मदेशकः ॥ १५२ ॥

॥ इति दिग्वासः शतं ॥

शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालोजगत्पालोधर्मसाम्राज्यनायकः ॥ १५३ ॥

॥ इति शुभंय्वष्टकम् ॥ १० ॥

धाम्नांपतेतवामूनिनामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान् पूतस्मृतिर्भवेत् ॥
गोचरोपिगिरामासांत्वमवाग्गोचरोमतः ।
स्तोतातथाप्यसंदिग्धंत्वत्तोभीष्टफलंलभेत् ॥ १५५ ॥
त्वमतोसिजगद्बंधुस्त्वमतोसिजगद्भिषक् ।
त्वमतोसिजगद्धातात्वमतोसिजगद्धितः ॥ १५६ ॥

त्वमेकंजगतांज्योतिस्त्वंद्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वंत्रिरूपैकमुक्त्यंगंस्वोत्थानंतचतुष्टयः ॥ १५७ ॥
त्वं पंचब्रह्मतत्वात्मापंचकल्याणनायकः ।
षड्भेदभावतत्वज्ञस्त्वंसप्तनयसंग्रहः ॥ १५८ ॥
दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वंनवकेवललब्धिकः ।
दशावतारनिर्धार्योमांपाहिपरमेश्वर ॥ १५९ ॥
युष्मन्नामावलीदृब्धाविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवन्तंवरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाणनः ॥ १६० ॥
इदंस्तोत्रमनुस्मृत्यपूतोभवतिभाक्तिकः ।
यः सपाठं पठत्येनंसस्यात्कल्याणभाजनं ॥ १६१ ॥
ततःसदेदंपुण्यार्थीपुमान्पठतु पुण्यधीः ।
पौरुहूतींश्रियंप्राप्तुंपरमामभिलाषुकः ॥ १६२ ॥
स्तुत्वेतिमघवादेवंचराचरजगद्गुरुं ।
ततस्तीर्थविहारस्यव्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥ १६३ ॥
भगवन् भव्यशस्यानां पापावग्रहशोषणम् ।
धर्मामृतप्रसेकः स्यात्त्वमेव शरणं प्रभो ॥ १६४ ॥
भव्यसार्थाधिपः प्रोद्यद्दयाध्वजविराजितः ।
धर्मचक्रमिदं यंत्रं त्वं सयोद्योगसाधनः ॥ १६५ ॥

निर्धूय मोहवृत्तान्तं मुक्तिमार्गोपरोधनी ।
तवोपदिष्टसन्मार्गकालोऽयं समुपस्थितः ॥ १६६ ॥
इति प्रबुद्धतत्त्वस्य स्वयंभर्तुर्जिगीषतः ।
पुनरुक्ततरा वाचा प्रादुरासीच्च तत्कृता ॥ १६७ ॥
कृतानि जिनसेनेन जिननामानि सार्थकम् ।
अष्टोत्तरसहस्राणि सर्वाभीष्टकराणि च ॥ १६८ ॥
त्वं देवंत्रिदशाधिपार्चितपदंघातिक्षयानंतरं ।
प्रोत्थानंतचतुष्टयंजिनमिनंभव्याब्जनीनामिनं ॥
मानस्तंभविलोकनानतजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं ।
प्राप्ताचिंत्यवहिर्विभूतिमनघंभक्त्याप्रवंदामहे ॥

इति श्रीजिनसेनाचार्यविरचितं जिनाष्टोत्तर
सहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

॥ श्रीजिनाय नमः ॥

॥ पण्डित हेमराज जी कृत ॥

(७) भाषा भक्तामरस्तोत्र ॥

॥ दोहा ॥

आदिपुरुषआदीशजिन,आदिसुविधिकरतार ।
धरमधुरंधरपरमगुरु, नमोंआदिअवतार ॥ १ ॥

चौपाई [१५ मात्रा]

सुरतन मुकट रतन छवि करैं। अंतर पाप तिमिर सब हरैं। जिनपद बंदों मन बचकाय। भवजलपतत उधरनसहाय ॥ १ ॥ श्रुतिपारक इन्द्रादिक देव। जाकी थुति कीनी करसेव ॥ शब्द मनोहर अरथ विशाल। तिसप्रभु को बरनों गुनमाल ॥ २ ॥ विबुधबंद्यपद मैं मतिहीन। होय निलज थुति मन साकीन ॥ जलप्रतिबिंव बुद्ध को गहै। शशिमंडल बालक ही चहै ॥ ३ ॥ गुनसमुद्र तुम गुन अविकार। कहत न सुरगुर पावैं पार ॥ प्रलय पवन उद्धत जलजंतु। जलधि तिरै को भुज बलवंतु ॥ ४ ॥ सो मैं शक्तिहीन थुति करूं। भक्तिभाववस कछु नहिं डरूं ॥ ज्यों मृग निजसुतपालन हेत। मृगपति सन्मुख जाय अचेत ॥ ५ ॥ मैं शठ सुधी हंसन को धाम। मुझ तव भक्ति बुलावै राम ॥ ज्यों पिक अंबकली परभाव। मधुऋतु मधुर करै आराव ॥ ६ ॥ तुम जस जंपत जिन छिनमाहिं। जनमजनम के पाप नशाहिं ॥ ज्यों रवि उगै फटै तत्काल। अलिवन नील निशातमजाल ॥ ७ ॥ तुम प्रभावतैं करहुं विचार। होसी यह थुति जनमन

हार ॥ ज्यों जल कमलपत्रपै परै । मुक्ताफलकी दुत विस्तरै ॥ ८ ॥ तुमगुन महिमा हतदुखदोष । सो तो दूर रहो सुखपोष ॥ पापविनाशक है तुम नाम । कमलविकाशी ज्यों रविधाम ॥ ९ ॥ नहीं अचंभ जो होंहि तुरंत । तुम से तुम गुन बरनत संत ॥ जो अधीनको आप समान । करै न सो निंदित धनवान ॥ १० ॥ इकटक जन तुम को अविलोय । और विषैं रति करै न सोय ॥ को कर खीर जलधिजलपान । क्षारनीर पीवे मतिमान ॥११॥ प्रभु तुम वीतराग गुन लीन । जिन परमानु देह तुमकीन ॥ हैं तितने ही ते परमान । यातैं तुम समरूप न आन ॥ १२ ॥ कहं तुम मुख अनुपम अविकार । सुरनर नागनयनमनहार ॥ कहां चन्द्रमंडल सकलंक । दिन मैं ढांकपत्र समरंक ॥ १३ ॥ पूरनचन्द्र जोति छविवंत । तुम गुन तीन जगत् लाघंत ॥ एक नाथ त्रिभुवन आधार । तिन विचरत को करै निवार ॥ १४ ॥ जो सुरतिय विभ्रम आरंभ । मन न डिग्यो तुम तौ न अचंभ ॥ अचल चलावै प्रलय समीर । मेरुशिखर डगमगय न धीर ॥ १५ ॥ धूमरहित वाती गतनेह । परकाशक त्रिभुवन

घर येह ॥ बातगम्य नाहीं परचंड । अपर दीप तुम बली अखंड ॥ १६ ॥ छिपहु न लुपहु राहु की छांहिं। जग परकाशक हो छिन नांहिं॥घन अनवर्त्त दाह विनिवार। रवितैं अधिक धरो गुणसार ॥ १७ ॥ सदा उदित विदलिततममोह। विघटितमेघ राहुअविरोह ॥ तुम मुखकमल अपूरवचन्द। जगतविकाशी जोति अमंद ॥१८॥ निशदिन शशिरविको नहिं काम। तुममुखचन्द हरै तमधाम॥ जो स्वभावतैं उपजै नाज। सजल मेघतैं कौनहु काज ॥ १९ ॥ जो सुबोध सो है तुममांहिं। हरिहर आदिक में सो नाहिं॥ जो दुति मणिहारनमैं होय। काचखंड पावैं नहिं सोय ॥ ११ ॥

नाराच।

सराग देव देख मैं भला विशेष मानिया। स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया ॥ कछू न तोह देखकैं जहां तुही विशेषिया। मनोग चित्तचोर और भूलहूं न देखिया ॥ २१ ॥अनेक पुत्रवंतनी नितंबनी सपूत हैं। न तो समान पुत्रऔर माततैं प्रसूत हैं॥ दिशा धरंत तारका अनेक कोटको गिनै। दिनेश तेजवंत एक पूर्वही

दिशा जनै ॥ २२ ॥ पुरान हो पुमान हो पुनीत पुनवान हो। कहैं मुनीश अंधकार नाशको सुभान हो ॥ महंत तोहि जानके न होय वश्य कालके। न और मोखमोख-पंथ देवतोहिटालके ॥ २३ ॥ अनंत नित्य चित्तको अगम्यरम्य आदि हो। असंख सर्वव्यापि विष्णुब्रह्महो अनादिहो ॥ महेश काम केतु जोग ईश जोग ज्ञान हो। अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो ॥ २४ ॥ तुही जिनेश बुद्ध हो सुबुद्धि के प्रमानतैं। तुही जिनेश शंकरो जगत्रय विधानतैं ॥ तुही विधात है सही सुमोखपंथ धारतैं। नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतैं ॥ २५॥ नमो करूं जिनेश तोहि आपदा निवार हो। नमो करूं सुभूरि भूमिलोकके सिंगार हो ॥ नमो धरूं भवाब्धिनीरराश शोख हेतु हो। नमो करूं महेश तोहि मोखपंथ देतु हो ॥ २६ ॥ चौपाई॥ तुम जिन पूरन गुनगनभरे। दोष गरँभ करतुम परहरे ॥ और देवगन आश्रय पाय। सुपन न देखे तुम फिर आय ॥ २७ ॥ तरु अशोक तस किरण उदार। तुम तन शोभित है अविकार ॥ मेघ निकट ज्यों तेज फुरन्त। दिन कर दिपे तिमरनिहनन्त॥

२८॥ सिंहासन मणि किरन विचित्र। तापर कंचनवरन पवित्र॥ तुमतन शोभित किरन विथार। ज्यों उदयाचल रवितमहार॥ २९॥ कुंदपहुप शितचमर ढरंत। कनकवरन तुम तन शोभंत॥ ज्यों सुमेरुतट निर्मलकांति। झरना झरैं नीर उमगांति॥३०॥ ऊंचे रहैं सूरि दुति लोप। तीन छत्र तुम दिपैं अगोप॥ तीन लोककी प्रभुता कहै। मोती झालरसों छवि लहै॥ ३१॥ दुंदुभि शब्द गहरगंभीर। चहुंदिश होय तुम्हारे धीर॥ त्रिभुवनजन शिवसंगम करे। मानों जय जय रव उच्चरैं॥३२॥ मंद पवन गंधोदक इष्ट। विविध कल्पतरु पहुपसुवृष्ट॥ देव करैं विकसित दल सार। मानो द्विजपंकति अवतार॥ ३३॥ तुम तन भामंडल जिन चंद। सब दुतिवंत करत है मन्द॥ कोटि शंख रवितेज छिपाय। शशिनिर्मल निशि करत अछाय॥ ३४॥ स्वर्ग मोख मारग संकेत। परम धर्म उपदेश न हेत॥ दिव्य वचन तुम खिरैं अगाध। सबभाषा गर्भित हितसाध॥ ३५॥

दोहा—विकसित सुवरन कमल दुति, नख दुतिमिल चमकाहि। तुम, पदपदवी जहं धरैं, तहं सुर कमल

रथाहिं ॥ ३६ ॥ ऐसी महिमा तुमविष, और धरै नहिं कोय । सूरज में जो जोत है, नहिं तारागन होय ॥३७॥

॥ षट्पद ॥

मदअवलिप्तकपोल, मूल अलिकुल झंकारैं । तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोधउद्धृत अति धारैं ॥ कालबरन विकराल, कालवत सनमुख आवै । ऐरावत सो प्रबल, सकल जन-भय उपजावै ॥ देख गयंद न भय करै, तुम पद महिमा लीन । विपतिरहितसम्पतिसहित, बरतै भक्त अदीन ३८ अतिमदमतगयंद, कुम्भथल नखन विदारै । मोती रक्त समेत, डार भूतल सिंगारै ॥ बांकी दाढ़ विशाल, वदन में रसना रोलै । भीम भयानक रूप देख, जन थरहर डोलै ॥ ऐसे मृगपति पग तलैं, जो नर आयो होय । सरन गये तुम चरन की, बाधा करैन सोय ॥ ३९ ॥ प्रलय पवन कर उठी, आग जो तास पटंतर । बमैं फुलिंग शिखा, उतंग परजलै निरंतर ॥ जगत समस्त निगल, भस्म करहैंगी मानों । तड़तड़ाट दव अनल, जोर चहुंदिशा उठानो ॥ सो इक छिन में उपशमें, नाम नीर तुम लेत । होय सरोवर परिणमें, बिकसितकमलसमेत ॥४०॥

कोकिलकंठ समान, श्यामतन क्रोध जलंता। रक्तनयन फुंकार, मारविषकन उगलंता॥ फनको ऊंचा करै, वेगही सनमुख धाया। तब जन होय निशंक, देख फनपति को आया। जो चापे निज पांव से, व्यापे विष न लगार। नागदमनि तुम नाम की, है जिनके आधार॥ ४१॥ जिस रनमांहि भयान, शब्द कर रहे तुरंग। घन से गज गरजांहि मत मानों गिरि जंगम॥ अति कोलाहल मांहि, बात जहं नाहिं सुनीजै। राजनको परचंड, देख बल धीरज छीजै॥ नाथ तिहारे नाम तैं, सो छिन माहिं पलाइ। ज्यों दिन कर परकाशतैं, अंधकार विनशाइ॥४२॥ मारे जहां गयंद, कुम्भ हथियार विदारे। उमगे रुधिर प्रवाह, वेग जल से बिस्तारे॥ होय तिरन असमर्थ, महा जोधा बल पूरे। तिस रन में जिन तोय, भक्त जे हैं नर सूरे॥ दुर्जय अरिकुल जीति, के जयपावैं निकलंक। तुम पदपंकज मन बसैं, तेनर सदा निशंक॥ ४३॥ नक्र चक्र मगरादि, मच्छकर भय उपजावै। जासैं बड़वा अग्नि, दाहतैं नीर जलावैं॥ पार न पावै जास, थाह नहिं लहिये जाकी। गरजै अतिगंभीर, लहर की गिनति न

ताकी ॥ सुखसों तिरैं समुद्र कोजे तुम गुन सुमिराहिं। लोल कलोलन के शिखर, पारयान ले जाहिं ॥ ४ ॥ महा जलोदर रोगभार पीड़ित नर जे हैं। वात पित कफ कुष्ट, आदि जो रोग गहे हैं ॥ सोवत रहैं उदास, नाहिं जीवन की आशा। अती घिनावनि देह, धरैं दुर्गंध नि-वासा ॥ तुम पद पंकज धूल को, जो लावैं निज अंग। ते नीराग शरीर लहि, छिन में होयं अनंग ॥ ४५ ॥ पांव कंठतैं जकर, बांध सांकल अति भारी। गाढ़ी बेड़ी पैर मांहि, जिन जांघ विदारी ॥ भूख प्यास चिंता शरी-र, दुख जे विललाने। सरन नाहिं जिन कोय, भूप के बंदीखाने ॥ तुम सुमरत स्वयमेव ही, बंधन सब खुल जाहिं। छिन में ते सम्पति लहैं, चिंताभय विनशाहिं ॥४६॥ महामत्त गजराज, और मृगराज दवानल। फल पतिरन परचंड, नीरनिधिरोग महाजल ॥ बन्धन ये भय आठ, डरप कर मानों नाशै। तुम सुमरतछिन मांहि, अभय थानकपरकाशै ॥ इस अपार संसार में, शरन नाहिं प्रभु कोय। यातैं तुम पद भक्त को, भक्ति सहाई होय ॥४७॥ यह गुन माल विशाल, नाथ तुम गुनन सम्हारी। विविध

वर्णमय पहुप, गूंथ मैं भक्ति विथारी ॥ जे नर पहरैं कंठ, भावना मन मैं भावैं। मानतुंग ते निजाधीन, शिवलक्ष्मी पावैं ॥ भाषा भक्तामर कियो, हेमराज हितहेत। जे नर पढ़ैं सुभावसों, ते पावैं शिवखेत ॥ ४८ ॥

॥ इति समाप्तम् ॥

(नं० ८) कल्याणमन्दिर ॥

॥ दोहा ॥

परमज्योतिः परमात्मा, परमज्ञान परवीन।
वंदू परमानंदमय, घट घट अन्तरलीन ॥

॥ चौपाई ॥

निर्भय करण परम परधान। भवसमुद्रजल तारण यान शिवमन्दिर अघहरण अनिन्द। बंदूं पार्श्वचरण अरविन्द ॥ १ ॥ कमठ मान भंजन वरवीर। गरिमा सागर गुण गम्भीर। सुरगुरु पार लहैं नहिं जास। मैं अजान गुण जंपूं तास ॥ २ ॥ प्रभुस्वरूप अतिअगम अथाह। क्योंहम से यह होय निवाह ॥ ज्यों दिनअंध उलूको पोत। कह

न सके रवि किरण उद्योत ॥ ३ ॥ मोहहीन जानैं मनमाहिं । तोहि न तुम गुण वरणे जाहिं ॥ प्रलयपयोधि करै जलबौन । प्रगटहिं रत्न गिने तिहं कौन ॥ ४ ॥ तुम असंख्य निर्मल गुण खान । मैं मतिहीन कहूं निजबान ॥ ज्यों बालक निज बाहिं पसार । सागर परिमित कहै विचार ॥ ५ ॥ जो योगीन्द्र करहिं तप खेद । तेउ न जानहिं तुम गुण भेद ।भक्ति भाव मुझ मन अभिलाष । ज्योंपंछी बोलैं निज भाष ॥ ६ ॥ तुम यश महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन आधार॥ आवै पवन पद्म सर होय । ग्रीष्म तपत निवारे सोय ॥ ७ ॥ तुम आवत भविजन मनमाहिं । कर्म निबन्ध शिथिल हो जाहिं । ज्यों चन्दनतरु बोलैं मोर ।डरहिं भुजंग चलैं चहुंओर ॥८॥ तुम निरखत जन दीनदयाल । संकट तैं छूटें तत्काल ॥ ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर । ते तज भागहिं देखत भोर ॥९॥ तुम भविजन तारक किम होय । ते चितधार तिरहिं लै तोय ॥ यह ऐसे कर जान स्वभाव । तरहिं मशक ज्यों गर्भित बाव ॥ १० ॥ जिन सब देव किये वश वास । ते छिन में जीतो सो काम ॥ ज्यों जल करे अग्नि

कुल हान । बड़वानल पीवै सो पान ॥ ११ ॥ तुम अन-
न्त गुरुवा गुण लिये । क्योंकर भक्त धरैं निज हिये ॥ ह्वै
लघु रूप तरहिं संसार । यह प्रभुमहिमा अगम अपार ॥१२॥
क्रोध निवार कियो मन शान्त । कर्म सुभट जीते किह भान्त ॥
यह पटुतर देखहु संसार । नील वृक्ष ज्यों दहै तुषार ॥१३॥
मुनिजन हिये कमल निजटोंहि । सिद्धस्वरूप सम ध्यावैं
तोंहि । कमल कर्णिका बिन नहिं और । कमल बीज
उपजन की ठौर ॥ १४ ॥ जब तुम ध्यान धरे मुनि कोय ।
तब विदेह परमात्म होय ॥ जैसे धातुशिला तनु त्याग ।
कनक स्वरूप धवैं जब आग ॥ १५ ॥ जाके मन तुम क-
रहु निवास । विनश जाय सब विग्रह तास ॥ ज्यों महंत
बिच आवै कोय । विग्रहमूल निवारे सोय ॥ १६ ॥ कर-
हिं विबुध जो आतम ध्यान । तुम प्रभाव तैं होय नि-
दान ॥ जैसे नीर सुधा अनुमान । पीवत विष विकार
की हान ॥ १७ ॥ तुम भगवन्त विमल गुणलीन । समल
रूप मानहिं मतिहीन ॥ ज्यों निलिया रोग दृग् गहै ।
वर्ण विवर्ण शंख सो कहै ॥ १८ ॥

॥ दोहा ॥

निकट रहित उपदेश सुन, तरुवर भयो अशोक। ज्योंरवि उगते जीव सब, प्रगट होत भुविलोक॥१९॥ सुमनवृष्टि ज्यों सुर करहिं, हेठबीठ मुख सोय। त्यों तुम सेवत सुमन जन बंध अधोमुख होय॥ २०॥ उपजी तुम हिय उदधितें, वाणी सुधा समान। जिह पीवत भवि जनलहैं, अजर अमर पदथान २१ करहिं सार तिहूंलोक को, यह सुर चामरदोय। भाव सहित जो जिन नमैं, तिसगति ऊरध होय ॥२२॥ सिंहासन गिरि मेरुसम; प्रभु धन सुरजत घोर। श्याम सुतन घनरूप लख, नाचत भविजन मोर॥२३॥ छबिहतहोय अशोक दल, तुम भामंडल देख। बीतराग के निकट रह, रहै न राग विशेष ॥२४॥ सीख कहै तिहूं लोकको, यहसर दुंदभिनाद। शिव पथ सारथ बाह जिन, भजो तजोपरमाद ॥ २५ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन उदित, मुक्तागण छवि देत। त्रिविध रूपधर मनुह शशी, सेवतनखत समेत ॥२६॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

प्रभु तुम शरीर दुतिरत्न जेम, परताप पुंज जिम शुद्ध हेम। अति धवल सुयश रूपा समान, तिन के गुण तीन विरा

जमान ॥२७॥ सेवहिं सुरेन्द्र कर नमत भाल, तिन सीस मुकट तज देय माल । तुम चरण लगत लहलहे प्रीत, नहिं रमहिं और जन सुमन रीत २८ । प्रभु भोग विमुख तन कर्म दाह, जन पार करत भवजल निवाह । ज्योंमाटी कलश सुपक्व होय, लेभार अधोमुख तिरे सोय ॥२९॥ तुम महाराज निर्धन निरास, तुम तज विभव सब जग प्रका-श । अक्षर स्वभाव सेहिं लिखेन कोय । महिमा अनंत भ-गवंत होय ॥ ३०॥ कोपियो कमठ निज बैर देख । तिन करी धूलि वरषा विशेष ॥ प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन सो भयो पापिलंपट मलीन ३१ ॥ गरजत घोर घन अन्ध-कार । चमकंत विद्यु जल मुसलधार ॥ वरषंत कमठ धर ध्यान रुद्र । दुस्तरकरंतनिज भव समुद्र ॥ ३२ ॥

॥ वस्तु छन्द ॥

भेजे तुरत पिशाच गण । नाथ पास उपसर्ग कारण ॥
अग्नि जाल झूकंत मुख । धुनि करंत जिमि मत्तवारण ॥
काल रूप विकराल तन रुण्डमाल निज कण्ठ ॥ तुम नि-शंक यह रंक निज करै कर्म दृढ़ गण्ठ ॥ ३३

॥ चौपाई ॥

जे तुम चरण कमल तिहुंकाल । सेवहिं तज माया जं-
जाल ॥ भाव भक्ति मन हर्ष अपार । धन धन जगमें तिन
अवतार ॥ ३४ ॥ भव सागर महिं फिरत अजान । मैं तुम
सुयश सुनो नहिं कान ॥ जो प्रभु नाम मंत्र मन धरै ।
तासों विपति भुजंगनि डरै ॥ ३५ ॥ मन वांछित फल
जिन पद माहिं । मैं पूरब भव पूजे नाहिं ॥ माया मग-
न मैं फिरो अज्ञान । करहिं रंकजन मुझ अपमान ॥३६ ॥
मोह तिमिर छाये दृग मोहि । जन्मान्तर देखो नहिंतोहि
तो दुर्जन संगति मुझ गहै । मरम छेद केकुवचन कहै ३७
सुनो कान यश पूजे पाय । नैन न देखो रूप अघाय ॥
भक्ति हेतु न भयो चितचाव । दुःख दायक क्रिया विन
भाव ॥ ३८ ॥ महाराज शरणागत पाल । पतित उधारण
दीनदयाल । सुमरण करूं नाय निज सीस । मुझ दुःख दूर
करो जगदीश ॥३९॥ कर्म निकंदन महिमासार । अशरण श-
रण सुयश विस्तार । नहिं सेवूं तुमरे प्रभु पाय । तो मुझ
जन्म अकारथ जाय ॥ ४०॥ सुर पति वन्दित दया निधा-
न । जगतारण जग पति जगयान ॥ दुःख सागर ते मोह

निकास । निर्भयथान देहु सुखरास ॥ ४१ ॥ मैं तुम चरण कमल गुणगाय । बहु विधि भक्ति करी मन लाय ॥ जन्म जन्म प्रभु पाऊं तोह । यह सेवा फल दीजे मोह ॥ ४२ ॥

॥ रोडक छन्द ॥

इह विधि श्री भगवंत सुयश जे भविजन भाषहिं । ते निज पुण्य भंडार संच चिर पाप प्रणाशहिं ॥ रोम रोम हुलसन्त अंग प्रभु गुण मन ध्यावैं । स्वर्ग सम्पदा भुंज वेग पंचम गति पावैं ॥ ४३ ॥

॥ दोहा ॥

यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्र की बुद्ध

भाषा कहत बनारसी, कारण समकित शुद्ध ॥ ४४ ॥

इति सम्पूर्णम् ॥

९ विषापहार स्तोत्र भाषा।

॥ दोहा ॥

आतम लीन अनन्त गुण, स्वामी ऋषभ जिनेन्द्र। नितप्रति वन्दित चरण युग, इर नागेन्द्र नरेन्द्र ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

विश्व सुनाथ विमल गुण ईश। विहर मान बन्दों जिन बीस ॥ गणधर गौतम शारदमाय । बर दीजे मोहि बुद्धि सहाय ॥ २ ॥ सिद्ध साधु सत गुरु आधार । करूं कवित्त आत्म उपकार ॥ विषापहार स्तवन उद्धार । सुक्ख औषधी अमृतसार ॥ ३ ॥ मेरा मन्त्र तुम्हारा नाम । तुम ही गारुड़ गरुड़ समान॥ तुमसम वैद्य नहीं संसार । तुम स्याने तिहुं लोक मझार ॥ ४ ॥ तुम विष हरण करन जग सन्त । नमो नमो तुम देव अनन्त ॥ तुम गुण महिमा अगम अपार । सुरगुरु शेष लहैं नहिं पार ॥ ५॥ तुम परमातम परमानन्द । कल्पवृक्ष मह सुखके कन्द ॥ मुदित मेरु नय मण्डित धीर । विद्यासागर गुण गम्भीर ॥ ६ ॥ तुम दधि मथन महाबरवीर । संकट विकट भय भंजन भीर ॥ तुम जग तारण तुम जगदीश । पतित उधारण विश्वे बीश ॥७॥ तुम गुण मणि चिन्तामणि राशि । चित्रबेलि चितहरण चितास ॥ विघ्नहरण तुम नाम अनूप । मन्त्र यन्त्र तुम ही मणिरूप ॥ ८ ॥ जैसे बज्र पर्वत परिहार । त्यों तुम नाम जु विषापहार ॥ नाग दमन तुम नाम सहाय । विषहर विष नाशक क्षणमाय ॥ ९ ॥

तुम सुमरण चिन्ते मनमाहिं । विष पीवे अमृत होजाहि ॥ नाम सुधारस बर्षैं जहां । पाप पंक मल रहै न तहां ॥१०॥ ज्यों पारस के परसे लोह । निज गुण तज कंचन समहोहि ॥ त्यों तुम सुमरण साधे नूंच । नीच जो पावे पदवी ऊंच ॥ ११ ॥ तुमहि नाम औषधि अनुकूल । महा मन्त्र सर जीवन मूल ॥ मूरख मर्म न जाने भेव । कर्म कलंक दहन तुम देव ॥ १२ ॥ तुमही नाम गारुड़ गहगहै । काल भुजंगम कैसे रहै ॥ तुम्ही धनन्तर हो जिनराय । मरण न पावे को तुम ठाय ॥ १३ ॥ तुम सूरज उदया घटजास । संशय शीत न व्यापे तास ॥ जीवे दादुर बर्षैं तोय । सुनबाणी सरजीवन होय ॥ १४ ॥ तुम विन कौन करै सुभ सार । तुम बिन कौन उतारे पार ॥ दयावन्त तुम दीन दयाल । तुम कर्त्ता हर्त्ता किरपाल ॥ १५ ॥ शरण आयो तुम्हरी जिन राज । अब मो काज सुधारो आज ॥ मेरे यह धन पूंजी मूल । साह कहै घर राखो सूत ॥१६ ॥ करों वीनती बारंबार । तुम विन कौन उतारे पार ॥ तुम बिन जिन वर साहस जगधीर । तुम बिन को मेटै मम पीर॥१७॥ विग्रह ग्रह दुःख विपति वियोग । और जु घोर जलंधर रोग ॥ चरण कमल रज टुक तन लाय । कुष्ठ व्याधि दीरघ मिट जाय ॥ १८ ॥ मैं अनाथ तुम त्रिभुवन नाथ ।

मात पिता तुम सज्जन साथ ॥ तुम सा दाता कोई न आन। और कहां जांऊं भगवान ॥ १९॥ प्रभु जी पतित उधारन आह। बांह गहे की लाज निबाह ॥ जहां देखों तहां तूही आय। घट घट ज्योतिर ही ठहराय ॥ २० ॥ बाट सुघाट विषम भय जहां। तुम बिन कौन सहाई तहां ॥ बिकट व्याधि व्यंतर जल दाह। नाम लेत क्षण मांहि बिलाह ॥ २१ ॥ आचार्य मान तुंग अवसान। शंकट सुमिरो नाम निधान ॥ भक्तामर की भक्ति सहाय। प्रण राखे प्रगटे तिस ठाय ॥ २२ ॥ युगल एक नृप विग्रह ठयो। वादि राज नृप देखन गयो ॥ एकी भाव कियो निसंदेह। कुष्ट गयो कंचन सम देह ॥ २३ ॥ कल्याण मंदिर कुमुद चन्द्र ठयो। राजा बिक्रम विस्मय भयो ॥ सेवक जान तुम करी सहाय। पारस नाथ प्रगटे तिस ठाय ॥ २४ ॥ गई व्याधि विमल मति लही। तहां फुनि संनिधि तुम ही कही ॥ भवसुदत्त श्रीपाल नरेश। सागर जल शंकट सुविशेष ॥ २५ ॥ तहां पुनि तुम ही भये सहाय। आनन्द से घर पहुंचे जाय ॥ सभा दुश्शासन पकड़ो चीर। द्रुपदी प्रण राखो कर धीर ॥ २६ ॥ सीता लक्ष्मण दीनो साज। रावण जीत बिभीषण राज ॥ सेठ

सुदर्शन साहस दियो। शूली से सिंहासन कियो ॥ २७ ॥ वारिषेन नृप धरियो ध्यान। ततक्षण उपजो केवल ज्ञान॥ सिंह सर्पादिक जीव अनेक। जिन सुमिरे तिन राखी टेक ॥ २८ ॥ ऐसी कीरति जिन की कहूं। साह कहै श-रणागत रहूं ॥ इस अवसर जीवे यह बाल। मुझ संदेह मिटै तत्काल ॥ २९ ॥ बन्दी छोड़ विरद महाराज। अ-पना विरद निबाहो आज ॥ और आलंब न मेरे नाहिं मैं निश्चय कीनो मन मांहि ॥ ३० ॥ चरण कमल छोड़ों ना सेव। मेरे तो तुम सत गुरु देव ॥ तुम ही सूरज तुम ही चंद। मिथ्या मोह निकन्दन कन्द ॥ ३१ ॥ धर्म चक्र तुम धारण धीर। विषहर चक्र विडारन वीर ॥ चोर अग्नि जल भूत पिशाच। जल जंघम अटवी उदवास ॥३२॥ दर दुश्मन राजा वश होय। तुम प्रसाद गर्जें नहीं कोय हय गय युद्ध सबल सामंत। सिंह शार्दूल महा भयवंत ॥ ३३ ॥ दृढ़ बंधन विग्रह विकराल। तुम सुमरत छूटें तत्काल ॥ पांयन पनही नमक न नाज। ताको तुम दाता गजराज ॥ ३४ ॥ एक उथाप थप्यो पुन राज। तुम प्रभु बड़े गरीब निवाज ॥ पानी से पैदा सब करो। भरी डाल

पुन रीती भरी ॥ ३५॥ हर्त्ता कर्त्ता तुम किरपाल । कीड़ी कुंजर करत निहाल ॥ तुम अनंत अल्प मो ज्ञान । कहं लग प्रभु जी करों वखान ॥ ३६ ॥ आगम पंथ न सूझे मोहि । तुम्हरे चरण विना किम होहि ॥ भये प्रसन्न तुम साहस कियो । दयावन्त तब दर्शन दियो ॥ ३७ ॥ साह पुत्र जब चेतन भयो । हंसत हंसत वह घर तब गयो ॥ धन्य दर्शन पायो भगवन्त । आज अंग मुख नयन लसंत ॥ ३८ ॥ प्रभु के चरण कमल मैं नयो । जन्म कृतारथ मेरो भयो ॥ कर युग जोड़ नवाऊं शीस । मुझ अपराध क्षमो जगदीश ॥ ३९ ॥ सत्रह सौ पन्द्रह शुभ थान । नारनौल तिथि चौदस जान ॥ पढ़े सुने तहां परमानन्द । कल्प वृक्ष महा सुख कंद ॥ ४०॥ अष्ट सिद्धि नव निधि सो लहै । अचल कीर्ति आचार्य कहै ॥ यासे पढ़ो सुनो सब कोइ । मन वांछित फल सहजें होइ ॥४१॥

॥ दोहा ॥

भय भंजन रंजन जगत विषापहार अभिराम ।
संशय तज सुमरो सदा श्रीजिनवर को नाम ॥४२॥

इति श्री विषापहार भाषा स्तोत्र सम्पूर्ण ॥

॥१०॥ एकीभाव स्तोत्र भाषा ॥

॥ दोहा छन्द ॥

वादराज मुनि राज के, चरण कमल चितलाय ।
भाषा एकी भाव की, करूं स्वपर सुखदाय ॥

॥ चौबीस मात्रा काव्य छन्द ॥

जो अति एकी भाव भयो मानो अनिवारी । सो मुझ कर्म्म प्रबंध करत भव २ दुखभारी ॥ ताहि तिहारी भक्ति जगत रवि जो निरवारै । तौ अब और कलेश कौन सो नाहि विदारै ॥ १ ॥ तुम जिन जोति स्वरूप दुरित अंधियारि निवारी । सो गणेश गुरु कहैं तत्व विद्याधन धारी ॥ मेरे चित घर माहि बसौ तेजो मय यावत । पाप तिमिर अवकाश तहां सो क्योंकर पावत ॥ २ ॥ आनंद आंसू बदन धोय तुम सों चित सानै । गद गद सुरसों सुयश मंत्र पढ़ पूजा ठानै ॥ ताके बहु विधि व्याधव्याल चिरकाल निवासी । भाजैं थानक छोड़ देह बंबई के बासी ॥ ३ ॥ दिवतै आवनहार भये भवि भाग उदय बल । पहले ही सुर आय कनक मय कीय महीतल ॥ मन गृह ध्यान दुवार आय निवसे जगनासी ।

जो सुवर्ण तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ४ ॥
प्रभु सब जग के विना हेतु बंधव उपकारी । निरावर्ण
सर्वज्ञ शक्ति जिनराज तिहारी ॥ भक्ति रचित मम चित्त
सेज नित बास करोगे । मेरे दुख संताप देख किम धीर
धरोगे ॥ ५ ॥ भववन में चिरकाल भ्रमों कछु कहिय न
जाई । तुम थुति कथा पियूष बापिका भाग न पाई ॥
शशि तुषार घनसार हार शीतलनहिं जासम । करत
न्हौन तामाहिं क्यों न भव ताप बुझै मम ॥ ६ ॥ श्री
विहार परिवाह होत शुचि रूप सकल जग । कमल
कनक आभाव सुरभि श्रीवास धरत पग ॥ मेरो मन स-
र्वंग परस प्रभु को सुख पावै । अब सो कौन कल्याण जो
न दिन २ ढिग आवै ॥ ७ ॥ भव तज सुख पद बसे काम
मद सुभट संघारे । जो तुम को निरखंत सदा प्रियदास
तिहारे ॥ तुम वचनामृत पान भक्ति अंजुलि सो पीवै
तिनै भयानक क्रूररोग रिपु कैसे छीवै ॥ ८ ॥ मानथंभ
पाषाण आन पाषाण पटंतर । ऐसे और अनेक रत्न
दीखैं जग अन्तर ॥ देखत दृष्टि प्रमाण मान मद तुरत
मिटावै । जो तुम निकट न होय शक्ति यह क्योंकर

पावे ॥ ९ ॥ प्रभतन पर्वत परस पवन उरमें निबहै है। तासों ततछिण सकल रोगरज बाहिर है है। जाके ध्याना हूत बसो उर अंबुज माहीं। कौन जगत् उपकार करण समरथ सो नाहीं ॥ १० ॥ जन्म २ के दुःख सहे सबते तुम जानो। याद किये मुझ हिये लगैं आयुध से मानों। तुम दयाल जगपाल स्वामि मैं शरण गही है। जो कुछ करना होय करो परिमाण वही है ॥ ११ ॥ मरण समय तुम नाम मंत्र जीवक तैं पायो। पापाचारी स्वान प्राण तज अमर कहायो। जो मणिमाला लेय जपै तुम नाम निरंतर। इन्द्र संपदा लहै कौन संशय इस अंतर ॥ १२ ॥ जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित साधै। अनवध सुख की सार भक्ति कूंची नहि हाथै। सो शिव वंछिक पुरुष मोक्ष पट केम उघारे। मोह मुहर दिढ़-करी मोक्ष मन्दिर के द्वारे ॥ १३ ॥ शिव पुर केरोपन्थ पाप तम सो अति छायो। दुःख सरूप बहु कूप खाड़ सो विकट बतायो ॥ स्वामी सुख सो तहां कौन जन-मारग लागै। प्रभु प्रवचन मणि दीप जौन के आगै आ-गै ॥ १४ ॥ कर्म पटल भूमाहिं दबी आत्म निधि भारी।

देखत अति सुख होय विमुखजन नाहिं उघारी ॥ तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चय कर धारैं । थुति कुदाल सों खोद बन्द भू कठिन विदारैं ॥ १५ ॥ स्यादवाद गिर उपज मोक्ष सागर लों धाई । तुम चरणांबुज परस भक्तिगंगा सुखदाई ॥ मोचित निर्मल थयो न्होन रवि पूरव तामें । अब वह हो न मलीन कौन जिन संशय यामैं ॥ १६ ॥ तुम शिव सुखमय प्रगट करत प्रभु चिन्तन तेरे । मैं भगवान समान भाव यों वरते मेरे ॥ यद्यपि झूठ है तवहि तृप्त निश्चल उपजावे । तुम प्रसाद सकलंक जीव बांछित फल पावे ॥ १७ ॥ वचन जलधि तुम देव सकल त्रिभुवन में व्यापै । भंग तरंगिन विकथ बाद मल मलिन उथापै मन सुमेर सों मथै ताहि जे सम्यक ज्ञानी । परमामृतसों तृप्त होहिं ते चिर लों प्राणी ॥१८॥ जो कुदेव छवि हीन वसन भूषण अभिलाषै। बैरी सों भय भीत होय सो आयुध राखै॥ तुम सुन्दर सर्वंग शत्रु समरथ नहिं कोई । भूषण बसन गदादि ग्रहण काहे को होई ॥ १९॥ सुरपति सेवा करै, कहां प्रभु प्रभुता मेरी । सो शलाघ ना लहै मिटै जग सों जग फेरी । तुम भव जलधि जिहाज तोहि शिव कंत उ-

चरये । तुही जगत जनपाल नाथ थुतिकी थुति करिये ॥२०॥ बचन जाल जड़ रूप आप चिन्मूरति झांई । तातै थुति आलाप नाहिं पहुंचे तुम तांई । तो भी निर्फल नाहिं भक्ति रस भीने वायक । सन्तन को सुरतरु समान वांछित बरदायक ॥ २१ ॥ कोप कभी नहिं करो प्रीत कबहूं नहिं धारो । अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारो । तदपि आन जग बहै बैर तुम निकट न लहिये । यह प्रभुता जग तिलक कहां तुम बिन सरधैये ॥ २२ ॥ सुर तिय गावैं सुयश सर्व गति ज्ञान स्वरूपी । जो तुम को थिर होहि नमैं भवि आनन्द रूपी । ताहि छेम पुर चलन वाट बाकी नहिं हो है । श्रुति के सुमरण मांहिं सो न कब ही नर मोहै ॥ २३ ॥ अतुल चतुष्टै रूप तुमैं जो चित में धारै । आदरसों तिहुं काल मांहि जग थुति विस्तारै ॥ सो सुकृत शिव पंथ भक्ति रचना कर पूरै । पंच कल्यानक ऋद्धि पाय निश्चै दुख चूरै ॥ २४ ॥ अहो जगत् पति पूज्य अवधि ज्ञानी मुनि हारे । तुम गुण कीर्तन मांहि कौन हम मंद विचारे ॥ थुति छलसों तुम विषै देव आदर विस्तारे । शिव सुख पूरण हार कल्प तरु येही हमारे ॥ २५ ॥ वा-

दराज मुनि राज शब्द विद्या के स्वामी। वादराज मुनि राज तर्क विद्या पति नामी॥ वादराज मुनि राज काव्य करता अधिकारी। वादराज मुनिराज बड़े भविजन उपकारी॥ २६॥

मूल अर्थ बहुविधि कुसुम। भाषा सूत्र सझार॥
भक्ति माल भूधर करी। करो कंठ सुखकार॥ १॥

इति सम्पूर्णम्॥

११ जिनचतुर्विंशति भाषा स्तोत्र॥

॥ दोहा॥

सकल सुरासुर पूज्य नित, सकल सिद्ध दातार।
जिनपद बन्दूं जोर कर, अशरण शरण अधार॥

॥ चौपाई॥

श्रीसुखवास महीकुलधाम। कीरति हर्षण थल अभिराम॥ सरस्वतीके रति महलमहान्। जयलक्ष्मी को खेलन थान॥ १॥ अरुण वरण वांछित वरदाय। जगतपूज्य ऐसे जिन पाय॥ दर्शन प्रात करे जो कोय। सब शिव थानक सो जन होय॥ २॥ निर्विकार तुम सोम शरीर। श्रवण सुखद वाणी गंभीर॥ तुम आचरण जगतमें सार।

सब जीवनको है हितकार ॥३॥ महानिन्द सब मारुदेश। तहां तुंग तह तुम परमेश॥ सघन छाहिं मण्डित छवि देत। तब पण्डितते वैं सुख हेत ॥४॥ गर्भ कूप तें निकसो आज। अब लोचन उघरे जिन राज ॥ मेरो जन्म सुफल भयो अबै। शिव कारण तुम देखे जबै ॥ ५ ॥ जगजननयन कमल वन खण्ड। विकसावन शशिशोक विहण्ड। आनंद करण प्रभा तुम तनी। सोई अमृतकिरन चांदनी ॥ ६ ॥ सब सुरेन्द्र शेखर शुभ रैन। तुम आसन तट माणक ऐन॥ दोऊ दुति मिल झलकें जोर। मानों दीपमाल दुहुंओर ॥ ७ ॥ यह सम्पति अरु ऐन वेचाह। कहां सर्वज्ञानी शिवनाह ॥ तातें प्रभुता है जग मांहि। वही असम है संशय नाहिं ॥८॥ सुरपति आन अखण्डित वहै। तृण ज्यों राज्य तजो तुम वहै ॥ जिन छिन में जग महिमादली। जीतो मोह शत्रु बहुवली ॥ ९ ॥ लोकालोक अनंत अशेष। कीनो अन्तज्ञान सो देख ॥ प्रभु प्रभाव यह अद्भुत सबै। और देव में मूल न फबै ॥ १० ॥ पात्र दान तिन दिन दिनदियो। तिन चिरकाल महातप कियो ॥ बहु विधि पूजा कारक वही। सर्व शील उन पाले सही ॥ ११ ॥

और अनेक अमलगुणरास। प्राप्त आय भये सब तास ॥ जिन तुम श्रद्धा सों कर टेक। दुर्वल्लभ देख छिन एक॥१२। त्रिजगतिलक तुमगुणगण जेह। भव भुजंग विषहर मणि-तेह। जो उर कानन माहिं सदीव। भूषण कर पहरैं भविजीव ॥ १३ ॥ सो नर महामति संसार। सो श्रुति सागर पहुंचे पार॥ सकल लोक में शोभा लहै। महिमा योग्य जगत् में वहै ॥ १४ ॥

॥ दोहा ॥

सुर समूह ढोलैं चमर, चंदकिरण सम जेम।
नवलनी वधू कटाक्ष से, चपल चलैं अतिएम ॥१५॥
छिन छिन ढलकैं, स्वामीपर सोहत ऐसो भाव।
किधों कहत सिद्धिलछिसों, जिनपति के ढिग आव॥

॥ चौपाई ॥

सीसछत्र सिंहासनतले। दिपोदेहदुति चामर ढुलै॥ बाजैं दुन्दभी बरषैं फूल। ढिग अशोक वाणी सुख मूल ॥१७॥ इह विधि अनुपम शोभामान। सुर नर सभा पद्मिनी भान ॥ लोकनाथ वंदे सिर नाय। सो हम शरण होउ जिनराय ॥ १८ ॥ सुर गज दंत कमल वनमांहि। सुर

नारी गण नाचत जाहिं ॥ बहु विधिवाजे बाजैं थोक। सुन उछाह उपजै तिहुंलोक ॥ १९ ॥ हर्षत हरि जै जै उच्चरैं । सुमन माल अप्सरा कर धर ॥ यों जन्मादि समय तुम होय । जयो देव देवागम सोय ॥ २० ॥ लोय बढ़ावन तुम मुखचंद । जन नयनामृत करण अमन्द सुन्दर दुतिकर अधिक उजास। तीन भवन नहिं उपमा तास ॥ २१ ॥ ताहि निरख सनयन हम भये । लोचन आज सफल कर लये॥ देखन योग्य जगत् में देख । उमग्यो उर आनन्द विशेष ॥ २२ ॥ कैयकयों मानैं मति मन्द । विजित काम विधि ईश मुकंद ॥ ये तो हैं वनिता वश दीन । काम कटक जीतन बलहीन ॥ २३ ॥ प्रभु आगे सुरकामिन करैं । ते कटाक्षसव खाली परैं ॥ तातैं मदन विध्वंसन वीर । तुम भगवंत और नहिं धीर ॥ २४ ॥ दर्शन प्रीति हिये जब जगी । लवैं कख कोंपल बहु लगी ॥ तुम समीप उठ आवन ठयो । तब सों सघन प्रफुल्लित भयो ॥२५॥ अब हूं निज नैनन ढिगआय । मुख मयंक देखो जगराय । मेरो पुण्य दृक्ष इस बार । सुफल फलो सब सुख दातार ॥ २६ ॥

॥ दोहा ॥

त्रिभुवन वन में विसतरी, काम दावानल जोर।
वाणी वरषा भरण सों, शांति करी चहुंओर ॥ २७ ॥
इन्द्र मोर नाचैं निकट, भक्तिभाव धर मोह।
मेघ सघन चौबीस जिन, जैवंते जग होइ ॥ २८ ॥

॥ चौपाई ॥

भविजन कुमुदचन्द सुख दैन। सुरनर नाथ प्रमुख जगनैन ॥ ते तुम देख रमैं इस भांत। पुहप गेह लह ज्यों अलिपांत ॥ २९ ॥ सिर धर अंजलि भक्ति समेत। श्री गृहप्रति प्रदक्षिणा देत। शिव सुख की सी प्राप्ति भई। चरण छांहि सों भवतप गई ॥ ३० ॥ वह तुम पद नख दर्पण देव। परमपूज्य सुन्दर स्वमेव ॥ तामें जो भविभाग विशाल। आनन अविलोक चिरकाल ॥३१॥ कमला कीरत कांति अनूप। धीरज प्रमुख सकल सुख रूप ॥ वे जग मंगल कौन महान्। जो न लहै बहु पुरुष प्रधान ॥ ३२ ॥ इन्द्रादिक श्री गंगा जेह। उत्पति थान हिमाचल येह ॥ जिन मुद्रा मण्डित अति लसै। हष होय देखे दुःख नसै ॥ ३३ ॥ शिखर ध्वजागण सोहैं

येस। धर्म सुतरुवर पल्लव नेम॥ यों अनेक उपमा आधार। जय जिनेश जिनालयसार ॥३४॥ सीस नवाय नमत सुर-नार। केशकांति मिश्रित मनहार॥ नख उद्योत वरतैं जिन-राज। दश दिश पूरित किरण समाज॥३५॥ स्वर्ग नाग नर नायक संग। पूजत पाय पद्म अतुलंग। दुष्टकर्म दल द-लन सुजान। जयवंते वरतो भगवान् ॥ ३६ ॥ सोकर जागै जो धीमान्। पण्डित सुधी सुमुख गुणवान् ॥ आ-पन मंगल हेतु प्रशस्त। अवलोकन चाहै कछु वस्त ॥३७॥ और वस्तु देखे किस काज। जो तुम मुखराजे जिनराज तीन लोकका मंगलथान। प्रेक्षणीय तिहुंजग कल्याण ॥३८॥ धर्मोदय तापस गृह कीर। काव्य बंध वनपिक तुम वीर मोक्ष मल्लिका मधुपर साल। पुण्य कथाकजसरसिम राल३९ तुम जिनदेव सुगुण मणिमाल। सर्व हितंकर दीनदया ल। ताको कौन न उन्नत काय। धरै किरीट माहिं हर्षाय ॥ ४० ॥ केई वांछैं शिवपुर वास। केई करैं स्वर्ग सुख आस। पचे पचानल आदिक ठान। दुःख बन्धे जस बंधे अयान ॥ ४१ ॥ हम श्रीमुख वाणी अनभवैं। श्रद्धा पूर्व हृदय ठवैं॥ तिस प्रभाव आनन्दित रहैं। स्व

र्गादिक सुख सहज लहैं ॥ ४२ ॥ स्नान महोत्सव इन्द्रन कियो । सुरतिय मिल मंगल पढ़ लियो ॥ सुयश शरद् चन्द्रोपम श्वेत । सो गंधर्व गान करलेत ॥ ४३ ॥ और भक्ति जो जो जिस योग । शेष सुरन कीनो सुनि योग अब प्रभु करें कौनसी सेव । हम चित्त भयो हिंडोलो एव ॥ ४४ ॥ जिनवर जन्म कल्याणक होस । इन्द्र आय नाचे कर होस ॥ पुलकित अंग पिता घर आय । नाचत विधि में महिमा पाय ॥ ४५ ॥ अमरी बीन बजावै सार । धरी कुचाग्रह करत झंकार ॥ इहि विधिकौतुक बीतो जबैं । अब सर कौन कह सकै अबैं ॥ ४६ ॥ श्री प्रति बिंब मनोहर एम । विकसत बदन कमल दल जेम ॥ ताहि हेर हर्षे दृग दोय । कहन सके इतनो सुख होय ॥ ४७ ॥ तब सुर संग कल्याणक काल । प्रगट रूप जोवै जगपाल ॥ इकटक दृष्टि एक चित्तलाय । वह आनन्द कहा क्यों जाय ॥ ४८ देख्यो देव रसायन धाम देख्यो नवनिधि को विश्राम । चिन्तारत्न सिद्धि रस अबै जिन गृह दूखत देखे सबै ॥ ४९ ॥ अथवा इन देखें कछु नाहिं । यह अनुगामी फल जग माहिं । स्वामी सरो अपूर्व काज । मुक्ति समीप भई मुझ आज ॥ ५० ॥ अब

विनवै भूपाल नरेश। देखे जिनवर हरण कलेश॥ नेत्र कमल विकसे जगचन्द। चतुर चकोर करण आनन्द ।५१। स्तुति जल सों पावन भयो। पाप ताप मेरो मिट गयो॥ मो चित्त है तुम चरणन माहिं। फिर दर्शन हूजे अब जाहिं॥ ५२॥

॥ छप्पय ॥

इहि विधि बुद्धि विशाल राय भूपाल महा कवि। कियो ललित स्तुति पाठ हिये सब समझ कैं भवि। टीका के अनुसार अर्थ कछु मन में आयो। कहिं शब्द कहिं भाव जोड़ भाषा यश गायो॥ आत्म पवित्र कारण किम पवाल ख्याल सो जानियो। लीजो सुधार भूधरतनी यह बिनती बुध रानियो॥ ५३॥

इति सम्पूर्णम्

ओं नमः सिद्धेभ्यः।

१२ बारहमासा सीताजी का।

सती सीता विनवे शिरनाय। नाथ कर कृपा हरो दुख आय॥ टेक॥ महीना आषाढ़ का आया। जनक गृह जन्म मैंने पाया। हरा सुर आलन की दाया। मात

पितु को दुख उपजाया ॥ दोहा॥ रथनूपुर विजयार्द्ध पर ता वन में सुर जाय । रखा लखा सो भूप चन्द्र गति हित से लिया उठाय ॥ पुत्र कर पाला प्रेम वढ़ाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ १ ॥ चढ़े आवण मले-च्छ भारी । पिता दुख पायो अधिकारी ॥ बुलाये दश-रथ हितकारी । राम तिन की सेना मारी ॥ दोहा ॥ तब रघुपति को तात ने करी सगाई सोर । विधिवश खगपति झगड़ा ठानो आने धनुष कठोर ॥ चढ़ा रघुवर परणी गृह ल्याय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥२॥ भये भादों में शुभ्र वैराग । राज रघुवर को देने लाग ॥ केकई मांगो वर दुर्भाग । भरतको राज लिया तिन मांग॥ दोहा ॥ तब पति चले विदेशको धनुषबाण ले हाथ । सङ्ग चले प्रिय लक्ष्मण देवर मैं भी चाली साथ ॥ चले दक्षिण को चरण उठाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आ-य ॥३॥ क्वार दण्डक वन पहुंचे जाय । हना शंबूक लक्षण असि पाय । फेरि मारा खर दूषण धाय ॥ तहां मैं हरी लंकपति आय ॥ दोहा ॥ मार जटायू मोहिले दशमुख पहुंचो लंक । मित्र भये स्वग्रीव राम के अनुमत वीर

निशंक ॥ लेन सुधि पठये श्रीरघुराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ४ ॥ मिली कातिक में सुधि मेरी । राम लक्ष्मण लंका घेरी ॥ घोर रण भयो बहुत बेरी । लगीं बहु मृतकन की ढेरीं ॥ दोहा ॥ तहां लंकपतिको हनो दियो विभीषण राज । मोहि साथ ले गृह को आये लिया राज रघुराज ॥ भरत तप धरा भये शिव-राय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ५ ॥ कियो अगहन में गर्भाधान । तबे बंटवायो किमिच्छा दान ॥ कर्म वश लोगों गिल्ला ठान । लगाया दूषण मोहि निदान ॥ दोहा ॥ तब पति पठयो विपिन में तीरथ का मिसि ठान ॥ वज्रजंग गृह रोवति देखी ले गयो बहिन बखान ॥ रखो पुर पुंडरीक में जाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ६ ॥ ॥ पूत लवणांकुश जन्मे बाल । बढ़े क्रम से सो भये विशाल ॥ गये बन क्रीड़ा दोनों लाल । मिले नारद बतलायो हाल ॥ दोहा ॥ तब दोनों की रिस बढ़ी भये पिता पर क्रुद्ध । समझाये सो एक न मानी चले करन को युद्ध ॥ चतुर्विधि सेना सङ्ग सजाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ७ ॥ माघ में चले लड़न युग वीर । करे डेरा सरयू के तीर ॥ सुनत आये

लड़ने रघुवीर। चलाये खेंच विविध शर धीर ॥दोहा॥ प्रबल युद्ध पुत्रन किया हरि बल मुहरा फेर। चक्र चलाया तब लछमण ने विकल भयो सो हेर॥ विचारा येही हरि बलराय। नाथ कर कृपा हरो दुख आय॥८॥ फाग में भामंडल हनुमान। कही ये सीता सुत बलवान्॥ मिले तब हरि बल आनंद ठान। अवध में बाढ़ो हर्ष महान॥ दोहा॥ तब सब ने बिनती करी सीता लेहु बुलाय। सो स्वीकार करी रघुवर ने सब नृप लाये धाय मिलन को चली सिया हर्षाय॥ नाथ कर कृपा हरो दुख आय॥ ९॥ चैत्र में बोले राम रिसाय। धीज बिन लिये न आवो धाय॥ तबे बोली सीता बिलखाय। कहो सो लेंहुं धीज दुख दाय॥ दोहा॥ विष खाऊं पावक जलूं करूं जो आज्ञा होय। कही राम पावक में पैठो सीता मानी सोय॥ दयो तब पावक कुंड जलाय। नाथ कर कृपा हरो दुख आय॥ १०॥ जपति वैशाख में प्रभु का नाम। अग्नि में पैठी रघुवर भाम॥ शील महिमा से देव तमाम। अग्निका कीना जल तिस ठाम॥ दोहा॥ कमलासन पर जानकीवैठारी सुर आप। बढ़ा नीर जन डूबन लागे करते भये विलाप॥ करो रक्षा

हन सीता माय । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥११॥
जेठ में राम मिलन चाले। लुंचिकच सिय सन्मुख डाले।
लयी दिक्षा अणुव्रत पाले। किया तप दुर्द्धर अघ आले
॥ दोहा ॥ त्रिया लिंग हनि दिव भयो सोलम स्वर्ग
प्रतेन्द्र। अनुक्रम से अब शिवपुर पै है भाषी एम जि-
नेन्द्र ॥ कहैं यों दयाराम गुण गाय । नाथ कर कृपा
हरो दुःख आय ॥ १२ ॥

॥ इति श्री सीताजीका बारहमासा सम्पूर्णम् ॥

१३ बारहमासा राजल ॥

राग मरहटी [झड़ी]

मैं लूंगी श्री अरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त चार
का सरना। निर्नेम नेम विन हमें जगत क्या करना॥टेक॥

आषाढ़ मास (झड़ी)

सखि आया अषाढ़ घनघोर मोर चहुं ओर मचा रहे
शोर इन्हें समझावो। मेरे प्रीतम की तुम पवन परी-
क्षा लावो। हैं कहां मेरे भरतार कहां गिरनार महाव्रत
धार बसे किस वन में। क्यों बांध मोड़ दिया तोड़
क्या सोची मन में॥ (झर्वटैं)

न जारे पपैया जारे, प्रीतम को दे सम झारे। रही-नौभवसंग तुम्हारे, क्यों छोड़ दई मझधारे॥ (झड़ीं)-क्यों विना दोष भये रोष नहीं सन्तोष यही अफ-सोस बात नहीं बूझी। दिये जादों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझी। मोहि राखो शरण मंझार मेरे भर्तार करो उद्धार क्यों दे गये झुरना। निर्नेम नेम विन०।

श्रावण मास (झड़ीं)।

सखि श्रावण संवर करे समन्दर भरे दिगम्बर धरे क्या करिये। मेरे जी में ऐसी आवे महाव्रत धरिये। सब तजूं हार शृङ्गार तजूं संसार क्यों भव मंझार में जी भरमाऊं। क्यों पराधीन तिरिया का जन्म नहीं पाऊं॥ (झर्वेटें)—सब सुन लो राजदुलारी। दुख पड़गया हम पर भारी। तुम तज दो प्रीत हमारी। करद्दो सं-यम की त्यारी॥ (झड़ी)

अब आगया पावस काल करो मत टाल भरे सब ताल महाजल बरसै। विन परसे श्री भगवन्त मेरा जी तरसै। मैं तजदई तीज सलौन पलट गई पौन मेरा है कौन मुझे जग तरना। निर्नेम नेम विन०।

भादों मास (झड़ी) ।

सखि भादों भरे तलाव मेरे चितचाव करूंगी उछाव से सोलह कारण । करूं दसलछण के व्रत से पाप निवारण । करूं रोट तीज उपवास पञ्चमी अकास अष्टमी खास निशल्य मनाऊं । तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म जलाऊं ॥ (झर्वटें)

सखि दुद्धार रस की धारा । तजिहार चार परकारा। करूं उग्रउग्र तप सारा । ज्यों होय मेरा निस्तारा ॥

(झड़ी)

मैं रत्नत्रय व्रत धरूं चतुर्दशी करूं जगत् से तिरूं करूं पखवाड़ा । मैं सब से छिमाऊं दोष तजुं सब राड़ा । मैं सातों तत्व विचार की गाऊं मल्हार तजा संसार तौ फिर क्याकरना ॥ निर्नेम नेम बिन हमें० ॥

आसौज मास (झड़ी)

सखि आगया मास कुवार लो भूषण तार मुझे गिरनार की देदो आज्ञा । मेरे पाणिपात्र आहार की है परतिज्ञा । लोतार ये चूड़ामणी रतन की कणी सुनों सब जणी खोलदो वेनी । मुझ को अवश्य परभात हि

दीक्षा लेनी। (झर्वेटैं) मेरे हेत कमण्डलु लावो। इक पीछी नई मंगावो। मेरा मतना जी भरमावो। मत-सूते कर्म जगावो॥ (झड़ी)

है जग में असाता कर्म बड़ा वेशर्म मोह के भर्म से धर्म न सूझै। इस के वश अपना हित कल्याण न बूझै जहां मृगतृष्णा की धूर वहां पानी दूर भटकना भूर कहां जल झरना। निर्नेम नेम विन०।

कार्त्तिक मास (झड़ी)

सखि कार्तिक काल अनंत श्री अरहंत की सन्त म-हन्त ने आज्ञा पाली। धर योग यत्न भव भोग की तृ-ष्णा टाली। सजे चौदह गुण अस्थान स्वपर पहचान तजे रुमक्षान महल दिवाली। लगा उन्हैं सिद्ध जिन धर्म अमावस काली॥ (झर्वेटैं)

उन केवल ज्ञान उपाया। जग का अन्धेर मिटाया जिस में सब विश्व समाया। तन धन सब अथिर ब-ताया॥ (झड़ी)

है अथिर जगत् संबन्ध अरी मतिमन्द जगत् का अंध है धुन्ध पसारा। मेरे प्रीतम ने सत जान के ज-गत् विसारा। मैं उन के चरण की चेरी तू आज्ञा देरी

सुन ले मा मेरी है एक दिन मरना । निर्नेम नेम० ।

अगहन मास (झड़ी)

सखि अगहन ऐसी घड़ी उदै में पड़ी मैं रह गई खड़ी दरस नहीं पाये। मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही गंवाये । नहीं मिले हमारे पिया न जप तप किया न संयम लिया अट करही जग में । पड़ी काल अनादि से पाप की बेड़ी पग में ॥

(झवेटैं)

मत भरियो मांग हमारी । मेरे शील को लागे गारी । मत डारो अञ्जन प्यारी । मैं योगन तुम संसारी॥ झड़ी हुये कंत हमारे जती मैं उन की सती पलट गई रती तो धर्म न खडूं । मैं अपने पिता के वंश को कैसे मखडूं । मैं मण्डा शील सिङ्गार अरी नथ तारगयेभर्तार के संग आभरना । निर्नेम नेम विन०

॥ पौष मास (झड़ी)

सखिलगा महीना पोहये माया मोह जगत से द्रोह रु प्रीत करावै । हरे ज्ञाना वरणीज्ञान अदर्शन छावै । परद्रव्य से ममता हरै तो पूरी परेजु सम्बर करे तो अन्तर टूटै। अरु ऊंचनीच कुल नाम की संज्ञा छूटे॥

(झर्वटें)

क्यों ओछी उमर धरावे। क्यों सम्पति को बिल लावे। क्यों पराधीन दुःख पावे। जो संयम में चितलावे॥ (झड़ी) सखि क्यों कहलावे दीन क्यों हो छवि छीन क्यों विद्याहीन मलीन कहावे। क्यों नारि नपुंसक जन्म में कर्म नचावे। वे तजें शील सिङ्गार रुलें संसार जिन्हे दुश्कार नरक में पड़ना। निर्नेम नेम बिन० ॥

माघ मास (झड़ी)

सखि आगया माह वसन्त हमारे कंथ भये अरहन्त वो केवल ज्ञानी। उन महिमा शील कुशील की ऐसे बखानी। दिये सेठ सुदर्शन सूल भई मखतूल वहां बरसे फूल हुई जय वाणी। वे मुक्ति गये अरु भई कलंकित राणी झर्वटें॥ कीचक ने मन ललचाया। द्रुपदी पर भाव धराया। उसे भीम ने मार गिराया। उन किया जैसा फल पाया॥ झड़ी॥ फिर गह्या द्रुयोधन चीर हुई दलगीर जुड़ गई भीर लाज अति आवे। गये पाण्डु जुये में हार न पार बसावे। भये परगट शासन वीर हरी सब पीर बन्धाई धीर पकर लिये चरना। निर्नेम नेम बिन०

फागुन मास (झड़ी)

सखि आया फाग बड़ भाग तो होरी त्याग अठांही लाग के मैना सुन्दर। हरा श्रीपाल का कुष्ट कठोर उदम्बर। दिया धवल सेठने डार उदधिकी धार तो हो गये पार वे उस ही पल में। अरु जा परणी गुणमाल न डूबे जल में॥ (झर्वटैं)

मिली रैन मंजूखा प्यारी। जिन ध्वजा शील की धारी। परी सेठ पे मार करारी। गया नर्क में पापाचारी॥ (झड़ी)

तुम लखो द्रोपदी सती दोष नहीं रती कहें दुर्मती पद्म के बन्धन। हुआ घात की खण्ड जरूर शील इस खण्डन। उन फूटे घड़े मंझार दिया जल डाल तो वे आधार थमा जल झरना। निर्नेम नेम जिन०।

चैत्र मास (झड़ी)॥

सखि चैत्र में चिन्ता करे न कारज सरे शील से टर कर्म की रेखा। मैंने शील से भील को होता जगत् गुरु देखा। सखी शील में सुलसां तिरी सुतारा फिरी खलासी करी श्रीरघुनन्दन। अरु मिली शील परताप प-

रताप पवनसे अंजन ॥ झवँटैं ॥ रावणने कुमत उपाई । फिर गया विभीषण भाई । छिन में जा लंक गमाई । कुछ भी नहीं पार वसाई ॥

(झड़ी)—सीता सती अग्नि में पड़ी तो उस ही घड़ी वो शीतल पड़ी चढ़ी जल धारा । खिल गये कमल भये गगन में जय जय कारा ॥ पद पूजे इन्द्र धनेन्द्र भई शीतेन्द्र श्रीजैनेन्द्रने ऐसा करना। निर्मल नेम जिन०॥

वैशाखमास (झड़ी) ॥

सखी आई वैशाखी मेष लई मैं देख ये क(र्)म रेख पड़ी मेरे कर में । मेरा हुआ जन्म यहीं उग्रसेन के घर में । नहिं लिखा करम में भोग पड़ा है जोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी । है मात पिता अरु भ्रात ये क्षमा हमारी ॥ ॥ झवँट ॥

मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे । घर भोगे भोग अपारे । जो विधि ने अंक हमारे । नहिं टरे किसूके टारे ॥ झड़ी ॥

मेरी सखी सहेली बीर न हो दलगीर धरो चित धीर मैं क्षमा कराऊं ॥ मैं कुल को तुम्हारे कबहुं न दाग लगाऊं । वह ले आज्ञा उठ खड़ी थी मंगल पड़ी बन में जा पड़ी सुगुरु के चरणा ॥ निर्मल नेम जिन० ॥

जेठ मास (झड़ी)

अजी पड़े जेठ की धूप खड़े सब भूप वह कन्या रूप सती बड़ भागन। कर सिद्धन को परणाम किया जग त्यागन। अजि त्यागे सब सिंगार चूड़ियां तार वसन ह्लु धार के लई पिछोटी। अरु पहर के साड़ी स्वेत उपाड़ी चोटी॥ ॥ झर्वटें॥

उन महातप तप कीना। फिर अच्युतेन्द्र पद लीना है धन्य उन्हों का जीना। नहिं विषयन में चित दीना झड़ी-अजी त्रिया वेद मिट गया पाप कट गया पुण्य बढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ। करे धर्म अरथ फल भोग सबे परमारथ। वो स्वर्ग संपदा भुक्ति जायगी मुक्ति जैनकी उक्ति में निश्चय धरना। निर्नेम नेम विन०॥

जो पढ़ें इसे नरनारि बढ़े परिवार सकल संसार में महिमा पावें। सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावें नहिं रहैं दुहागन दुखी होंय सब सुखी मिटे बेरुखी करें पति आदर। वे होंय जगत में महा सतियों की चादर॥ ॥ झर्वटें॥

मैं मानुष कुल में आया। अरु जाति यती कहलाया। है कर्म उदय की माया। विन संयम जनम गंवाया॥

॥झड़ी॥ ग्राम सम्बत् कविवंश नाम ।

है दिल्ली नगर सुवास वतन है खास फाल्गुन मास अठांही आठैं । हों उन के नित कल्याण कृपाकर बांटैं अजी विक्रम अब्द उनीस पै धर पैंतीस श्री जगदीश का लेलौ शरणा । कहै दास नैन सुख दोष पै दृष्टि न धरना ॥ मैं लूंगी श्रीअरहंत सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त धार का सरना निर्नेम नेम० ॥१३॥

॥ सम्पूर्णम् ॥

श्री वीतरागाय नमः ।

१४ बारहमासा श्री मुनिराज जी का

(राग मरहटी)

मैं वन्दूं साधु महन्त बड़े गुणवन्त सभी चित लाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ॥ टेक ॥

चित चेत में व्याकुल रहे काम तन दहे न कुछ बन आवे । फूली बनराई देख मोह भ्रम छावे ॥ जब शीतल चले समीर स्वच्छ हो नीर मअन सुख भावे । किस तरह योग योगीश्वर से बन आवे ॥ (झड)

तिस अवसर श्री मुनि ज्ञानी, रहैं अचल ध्यान में ध्यानी । जिन काया लखी पयानी, जग ऋद्धि खाक

सम जानी ॥ उस समय धीर धर रहैं अनर पद लहैं ध्यान शुभ ध्याके ।. जिन ।अथिर० ॥ १ ॥

जब आवत है वैशाख होय तवा खाक तप से.जल के सब करैं धाम विश्राम पवन झल झल के ॥ ऋतु गर्मी में संसार पहिले नर नार वस्त्र मलमल के । वे जल से करते नेह जो हैं जी स्थल के ॥ (झड).

जिस समय मुनी महराजे. तन नग्न शिखिर गिरि राजे। प्रभु अचल सिंहासन राजे, कहो क्यों न कर्म दल लाजे जो घोर महा तप करैं मोक्षपद धरैं वसैं शिव जाके। जिन अथिर लखा० ॥ २ ॥

जब पढ़े ज्येष्ठ में ज्वाला होय तन काला धूप की मारी। घर बाहर पग नहिं धरैं कोई घरवारी ॥ पानी से छिड के धाम करें विश्राम सकल नरनारी। घर खसकी टटिया छिपैं लूह की मारी ॥ (झड).

मुनिराज शिखिर गिर ठाडे, दिन रैन ऋद्धि अति बाढ़े। अति तृषा रोग भय काढ़े, तब रहैं ध्यान में गाढ़े ॥ सब सूखे सरवर नीर जले शरीर रहैं समझा के जिन अथिर लखा० ॥ ३ ॥

आषाढ़ मेघ का जोर बोलते मोर गरजते बादल। चमके बिजली कड़ कड़े पड़ें धारा जल॥ अति उमड़ें नदियां नीर गहर गम्भीर भरे जल से थल। भोगी को ऐसे समय पड़े कैसे कल॥ (झड़)

उस समय मुनी गुणवन्ते, तरवर तट ध्यान धरन्ते अति काटें जीव अरु जन्ते, नहीं उन का सोच करन्ते वे काटें कर्म जंजीर नहीं दिलगीर रहैं शिव पाके। जिन अथिर लखा० ॥ ४ ॥

श्रावण में हैं त्यौहार झूलती नार चढ़ी हिंडौले। वे गावैं राग मल्हार पहन नये चोले॥ जग मोह तिमिर मन बसे सर्व तन कसे देत झकझोले। उस अवसर श्री मुनिराज बनत हैं भोले॥ (झड़)

वे जीतैं रिपु से लर के, कर ज्ञान खड्ग लेकर के। शुभ शुक्ल ध्यान को धर के, परफुल्लित केवल बर के॥ नहीं सहैं वो यम की त्रास लहैं शिव बास अघात नशाके। जिन अथिर० ॥ ५ ॥

भादव अंधियारी रात सूझे ना हाथ घुमड रहे बादर बन मोरा पपीह कोयल बोलैं दादुर॥ अति मच्छर भिन भिन करें सांप फुंकरें पुकारें थलचर। बहु सिंह बघेरा

गज घूमें बन अन्दर   (झड़)

मुनिराज ध्यान गुण पूरे, तब काटैं कर्म अंकूरे। तनु लिपटत कान खजूरे, मधु मच्छ ततइयें भूरे ॥ चिड़ियों ने बिल तन करे आप मुनि खड़े हाथ लटकाके। जिन॥६॥

आश्विन में बर्षा गई समय नहीं रही दशहरा आया नहीं रही वृष्टि अरु कामदेव लहराया ॥ कामी नर करें किलोल बनावें डोल करें मन भाया। है धन्य साधु जिन आतमध्यान लगाया ॥   (झड़)

बसु यास योग में भीने, मुनि अष्ट कर्म क्षय कीने। उपदेश सबन को दीने. भविजन को नित्य नवीने ॥ हैं धन्य धन्य मुनिराज ज्ञान के ताज नमूं शिर नाके। जिन अथिर लखा० ॥ ७ ॥

कातिकमें आया शीत भई विपरीत अधिक सरदाई। संसारी खेलें जुआ कर्म दुखदाई ॥ जग नर नारीका मेल मिथुन सुख खेल करें मन भाई। शीतल ऋतु कामीजन को है सुखदाई   (झड़)

जब कामी काम कमावें, मुनिराज ध्यान शुभ ध्यावें सरवर तट ध्यान लगावें सो मोक्ष भवन सुख पावें ॥ मुनि महिमा अपरम्पार न पावे पार कोई नर गाके। जिन अथिर लखा० ॥ ८ ॥

अगहनमें दपके शीत यही जगरीति सेज मन भावे। अति शीतल चले समीर देह थरीवे ॥ शृङ्गार करे कामिनी रूप रस ठनी साम्हने आवे। उस समय कुमति नन सब का मन ललचावे ॥ (झड)

योगीश्वर ध्यान धरें हैं. सरिता के निकट खरें हैं। कहां ओले अधिक परे हैं, मुनि कर्म का नाश करे हैं। जब पड़े बर्फ घनघोर करें नहीं शोर जयी दृढ़ता के। जिन अथिर लखा० ॥ ९ ॥

यह पौष महीना भला शीत में धुला कांपती काया। वे धन्य गुरू जिन इस ऋतु ध्यान लगाया ॥ घरबारी घर में छिपें वस्त्र तन लिपें रहें गेडाया। तज वस्त्र दिगम्बर हो मुनि ध्यान लगाया ॥ (झड) ॥

जल के तट जगसुखदाई, महिमासागर मुनिराई। धर धीर खड़े हैं भाई, निज आतम से लवलाई ॥ है यह संसार असार वे तारण हार सकल बसुधा के। जिन अथिर लखा संसार० ॥ १० ॥

है माघ वसन्त वसन्त नार अरु कंथ युगल सुख पाते। वे पहिने बस्त्र बसन्त फिरें मदमाते ॥ जब चढ़ें मयन की शयन पड़े नहीं चैन कुमति उपजाते। हैं बड़े धीर

जन बहुधा वे डिग जाते ॥ (झड़)

तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी. जिन काया लखी पयानी । भवि डूवत बोधे प्रानी. जिन ये वसन्त जिय जानी ॥ चेतन सो खेलें होरी ज्ञान पिचकारी योग जल लाके । जिन अथिर लखा० ॥ ११ ॥

जब लगे महीना फाग करें अनुराग सभी नर नारी। लैं फिरे फैंट में गुलाल कर पिचकारी ॥ जब श्री मुनिवर गुणखान अचल धर ध्यान करें तप भारी । कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी ॥ (झड़)

कीर्ति कुमकुमें बनावें. कर्मों से फाग रचावें । जो बारामासा गावें. सो अजर अमर पद पावें ॥ यह भाखें जीयालाल धर्म गुणलाल योग दर्शाके । जिन अथिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ १२ ॥

इति श्री मुनि जी का बारहमासा समाप्तम् ॥

१५ ॥ बारहमासा बजूदंत

चक्रवर्ति का यति नन्दखदास कृत ॥ सवैया ३१ ॥

वन्दूं मैं जिनंद परमानंद के कंद जगवंद विमलेंदु जड़ता ताप हरन कूं । इन्द्र धरणेन्द्र गौतमादिक गणेन्द्र जाहि सेव राव रंक भव सागर तरन कूं ॥ निर्बंध

निर्द्वन्द दीन बन्धु दयासिन्धु करें उपदेश परमार्थ का-रन कूं । गावैं नैनसुखदास वज्रदन्त बारहमास मेटो भगवंत मेरे जन्म मरन कूं ॥ १ ॥ ॥ दोहा ॥

वज्रदंत चक्रेश की, कथा सुनो मन लाय । कर्म काट शिवपुर गये, बारह भावन भाय ॥ २ ॥ सवैया ॥ ३१ ॥

बैठे वज्रदंत आय आपनी सभा लगाय ताके पास बैठे राय बत्तीस हजार हैं । इन्द्र कैसे भोगसार रानी छा-नवै हजार पुत्र एक सहस्र महान गुणागार हैं ॥ जाके पुण्य प्रचण्ड से नये हैं बलवंड शत्रु हाथ जोड़ मान छोड़ सेवैं दरबार हैं । ऐसो काल पाय माली लायो एक डाली तामें देखो अलि अंबुज मरण भयकार है ३

अहो यह भोग महा पाप को संयोग देखो डाली में कमल तामें भौंरा प्राण हरे हैं । नासिका के हेतु भयो भोग में अचेत सारी रैन के कलाप में विलाप इन करे हैं ॥ हम तो हैं पांचो ही के भोगी भये जोगी नाहिं विषय कषायन के जाल मांहि परे हैं । जो न अब हित करूं जाने कौन गति परूं सुतन बुला के यों वच अनु-सरे हैं ॥ ४ ॥

अहो सुत जग रीति देख के हमारी नीति भई है उदास बनोवास अनुसरेंगे । राजभार सीस धरो परजा का हित करो हम कर्म शत्रुन की फौजन सूं लरेंगे ॥ सुन

त बचन तब कहत कुमार सब हम तो उगाल कूं न अंगीकार करेंगे। आप तुरो जान छोडो हमें जग जाल छोड़ो तुमरे ही संग पंच महाव्रत धरेंगे ॥ ५ ॥ चौपाई॥

सुत आषाढ़ आयो पावस काल । सिर पर गर्जत घन विकराल ॥ लेहुराज सुख करहु विनीत । हम वन जाय बड़न की रीति ॥ ६ ॥

गीता छन्द—जांय तप के हेत वन को भोग तज संयम धरें। तज ग्रंथ सब निर्ग्रंथ हो संसार सागर से तरें। यही हमारे मन बसी तुम रहो धीरज धार के। कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचार के ॥७

चौपाई-पिता राज तुम कीनो वौन। ताहि ग्रहण हम समरथ हों न ॥ यह भौंरा भोगन की व्यथा। प्रगट करत करकंगन यथा ॥ ८ ॥

गीता छन्द-यथा करका कांगना, सन्मुख प्रगट नजरापरे। त्यों ही पिता भौंरा निरखि भव भोग से मन थरहरे ॥ तुम ने तो वन के वास ही को सुख अंगीकृत किया। तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ ९ ॥

चौपाई-श्रावण पुत्र कठिन बनबास। जल थल सीत

पवन के श्वास ॥ जो नहिं पले साधु आचार । तो मुनि भेष लजावे सार ॥ १० ॥

छन्द—लाजे श्री मुनि भेषतातैं देह का साधन करो सम्यक्त युतव्रतपंच में तुम देश व्रत मन में धरो ॥ हिंसा असत चोरी परिग्रह ब्रह्मचर्य्य सुधार के । कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के ॥ ११ ॥

चौपाई—पिता अंग यह हमरो नांहि । भूख प्यास पुद्गल पर छांहि ॥ पाय परीषह कबहु न भजैं । धर संन्यास मरण तन तजैं ॥ १२ ॥

छन्द—संन्यास धर तनकूं तजैं नहिं डंश मंसक से डरैं । रहैं नग्न तन बन खण्ड में जहां मेघ मूसल जल परैं । तुम धन्य हो बड़ भाग तज के राज तप उद्यम किया तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ १३ ॥

चौपाई—भादों में सुत उपजे रोग । आवें याद महल के भोग ॥ जो प्रमाद वस आसन टले । तो न दयाव्रत तुम से पले ॥ १४ ॥

छन्द—जब दयाव्रत नहीं पले तब उपहास जग में विस्तरे । अर्हन्त और निर्ग्रन्थ की कहो कौन फिर

सरधा करे । तातैं करो मुनि दान पूजा राज काज सं-
भाल के । कुल आपने की० ॥ १५ ॥

चौपाई—हम तजि भोग चलेंगे साथ । मिटैं रोग भव भव के तात ॥ समता मन्दिर में पग धरैं । अनुभव अमृत सेवन करैं ॥ १६ ॥

छन्द—करैं अनुभव पान आतम ध्यान बीणाकर धरैं । आलाप मेघ मलहार सोहं सप्त भङ्गी स्वर भरे । धृग् धृग् पखावज भोग कूं सन्तोष मन में कर लिया । तुमरी समझ सोई समझ० ॥ १७ ॥

चौपाई—आसुज भोग तजे नहिं जांय । भोगी जीवन को डसि खांय ॥ मोह लहर जिया की सुध हरे । ग्यारह गुण थानक चढ़ गिरे ॥ १८ ॥

छन्द—गिरे थानक ग्यारवें से आय मिथ्या भूप रे । बिन भाव की थिरता जगत् में चतुर्गति के दुःख भरे । रहे द्रव्य लिङ्गी जगत् में बिन ज्ञान पौरुष हार के । कुल आपने की रीति चालो राज नीति विचार के ॥ १९ ॥

चौपाई—विषे विडार पिता तन कसैं । गिर कन्दर निर्जन बन बसैं ॥ महामन्त्र को लखि परभाव । भोग भुजङ्गम चाले धाव ॥ २० ॥

छन्द-घाले न भोग भुजङ्ग तब क्यों मोह की लहरा चढ़े। परमाद तज परमात्मा प्रकाश जिन आगम पढ़ें। फिर काल लब्धि उद्योत होय सुहोय यों मन थिर किया॥ तुमरी समझ॥ २१॥

चौपाई-कातिक में मुत करें विहार। कांटे कांकर चुभें अपार॥ मारें दुष्ट खैंच के तीर। फाटे उर थरहरे शरीर॥ २२॥

छन्द-थरहरे सगरी देह अपने हाथ काढ़त नहिं बने। नहिं और काहू से कहें तब देह की थिरता हनें। कोई खैंच बांधे थम्भ से कोई खाय आंत निकाल के। कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के॥२३॥

चौपाई-पदपद पुन्य धरा में चलें। कांटे पाप सकल दल मलें॥ क्षमा ढाल तल धरें शरीर। विफल करें दुष्टन के तीर॥ २४॥

छन्द-कर दुष्ट जन के तीर निरफल दया कुंजर पर चढ़ें। तुम संग समता खड्ग लेकर अष्ट कर्मन से लड़ें। धन धन्य यह दिनवार प्रभु तुम योग का उद्यम किया॥ तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया॥२५॥

चौपाई—अगहन मुनि तटनी तट रहैं। ग्रीषम शैल शिखर दुख सहैं। पुनि जब आवत पावसकाल। रहैं साध जन बन विकराल॥ २६॥

छन्द—रहैं बन विकराल में जहां सिंह श्याल सता-वहीं। कानों में बीछू बिल करैं और व्याल तन लिप-टावहीं। दे कष्ट प्रेत पिशाच आन अंगार पाथर डारके। कुल आपने की रीति चालो राजनीति विचार के॥२७॥

चौपाई—हे प्रभु बहुत बार दुःख सहे। बिना केव-ली जाय न कहे॥ शीत उष्ण नर्कन के ताल। करत याद कम्पे सब गात॥ २८॥

छन्द—गात कम्पे नर्क सेलहे शीत उष्ण अथाह ही। जहां लाख योजन लोह पिण्ड सुहोय जल गलजाय ही। असिपत्र बन के दुःख सहे परवस स्ववस तपना किया। तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृपपद क्यों दिया॥ २९॥

चौपाई—पोष अर्थ अरु लेहु गयंद। चौरासी लख लख सुखकंद॥ कोड़ि अठारह घोड़ा लेहु। लाख कोड़ि हल चलत गिनेहु॥ ३०॥

छन्द—लेहु हल लख कोड़ि षटखण्ड भूमि अरु नव निधि वही। लो देश को विभूति हमरी राखि रतन की पढ़ी। धर देहुं सिरपर छत्र तुमरे नगर घोख उचार कै। कुल आप ने की रीति चालो राजनीति विचारकै ॥३१॥

चौपाई—अहो कृपा निधि तुम परशाद्। भोगे भोग सबे मरयाद् ॥ अब न भोग की हमकूं चाह ॥ भोगन में भूले शिव राह ॥ ३२ ॥

छन्द—राह भूले मुक्ति की बहुवार सुरगति संचरे। जहां कल्प वृक्ष सुगन्ध सुन्दर अपछरा मन को हरे। उदधि पी नहिं भया तिरपत ओस पी कैं दिन जिया। तुमरी समझ सोई समझ हमरी हमें नृप पद क्यों दिया ॥ ३३ ॥

चौपाई—साघ सधेन सुरन तैं सोय। भोग भूमिथल-तैं नहिं होय। हर हरि अरु प्रति हरि से बीर। सं-यम हेत धरें नहिं धीर ॥ ३४ ॥

छन्द—संयम कूं धीरज नहिं धरें नहिं टरें रण में युद्ध सूं। जो शत्रु गण गजराज कूं दलमले पकार विरुद्ध सूं। पुनि कोटि सिल मुद्गर समाली देय फैंक उपार के। कुल आपने की७ ॥ ३५ ॥

चौपाई—मास बैशाख सुनत अरदास। चक्री मन उपज्यो विश्वास ॥ अब बोलन को नाहीं ठौर। मैं कहूं और पुत्र कहैं और ॥ ४६ ॥

छन्द—और अब कछु मैं कहूं नहीं रीति जगकी कीजिये। एकबार हमसे राज लेके चाहे जिसको दीजिये। पोता था एक षटमास का अभिषेक कर राजा कियो। पितु संग सब जगजाल सेती निकस बनमार्ग लियो ४७

चौपाई—उठे वज्रदन्त चक्रेश। तीस सहस नृप तजि अलवेश। एकहजार पुत्र बड़भाग। साठ सहस्र सती जग त्याग ॥ ४८ ॥

छन्द—त्याग जगकूं ये चले सब मोह तज ममता हरी। शमभाव कर तिहुंलोक के जीवों से यों बिनती करी। अहो जेते हैं सब जीव जग में क्षमा हम पर कीजियो। हम जैन दीक्षा लेत हैं तुम बैर सब तज दीजियो ॥४९॥

छन्द—बैर सबसे हम तजा अर्हंत का शरणा लिया। श्रीसिद्ध साधुकी शरण सर्वज्ञ के मत चित दिया। यों भाष पिहिताश्रव गुरुन ढिंग जैन दीक्षा आदरी। कर लौंच तजके सोच सबने ध्यान में दृढ़ता धरी ॥ ५० ॥

चौपाई—जेठ मास लू ताती चलैं। सूकैं सर कपिगण

मदगलें ॥ ग्रीष्म काल शिखर के सीस । धरो अतापन योग मुनीश ॥ ५१ ॥

छन्द–धरयोग आतापन सुगुरु ने तब शुक्ल ध्यान लगाइयो । तिहुं लोकभानु समान केवल ज्ञान तिन प्रगटाइयो । धन वज्रदन्त मुनीश जग तज कर्म के सन्मुख भये । निज काज अरु परकाज करके समयमें शिवपुर गये॥५४॥

चौपाई–सम्यक्तादि सुगुण आधार । भये निरंजन निराकार ॥ आवागमन जलांजल दई । सब जीवन कौं शुभगति भई ॥ ५२ ॥

छन्द–भई शुभगति सवन की जिन शरण जिनपति की लई । पुरुषार्थ सिद्धि उपाय से परमार्थ की सिद्धी भई । जो पढ़ें बारामास भावन भाय चित्त हुलसायके । तिन के हों मंगल नित नये अरु विघ्न जाय पलायके । ॥ ५४ ॥

दोहा ॥

नित नित नव मंगल बढ़ें, पढ़े जु यह गुणमाल ।
सुरनर के सुख भोग कर, पावें मोक्ष रिसाल ॥ ५५ ॥

॥ सवैया ॥ ३१ ॥

दो हजार मांहिं तैं तिहत्तर घटाय अब विक्रम को संवत् विचार के धरत हूं । अगहन असि त्रयोदशी शु-

गांक वार अर्द्ध निशा मांहि याहि पूर्ण करत हूं ॥ इति श्रीवज्रदन्त चक्रवर्ति को वृत्तान्त रचके पवित्र नैन आनन्द भरत हूं । ज्ञानवन्त करो शुद्ध जान मेरी बाल बुद्धि दोष पै न रोष करो पायन परत हूं ॥ ५६ ॥

इति श्री वज्रदन्त चक्रवर्ति का बारहमासा सम्पूर्णम् ॥

१८ सामायक पाठ ॥

प्रथम प्रतिक्रमण कर्म ।

काल अनन्त भ्रम्यो जग में सहिये दुख भारी । जन्म मरण नित किये पाप को हो अधिकारी ॥ कोड़ि भवन्तर मांहिं मिलन दुर्लभ सामायक । धन्य आज मैं भयो योग मिलियो शुभदायक ॥ १ ॥ हे सर्वज्ञ जिनेश किये जो पाप जु मैं अब । सो सब मन वच काय योग की गुप्ति बिना सब ॥ आप समीप हुजूर माहिं मैं खड़ो खड़ो अब । दोष कहूं सो सुनो करो नठ दुःख देय जब ॥ २ ॥ क्रोध मान मद लोभ मोह माया वश प्राणी । दुःख सहित जो किये दया तिन कीना आणी ॥ बिना प्रयोजन एकेन्द्रिय बिति चउ पंचेन्द्रिय । आप प्रसादहि मिटै दोष जो लगो मोह जिय ॥ ३ ॥ आपस में इकठौर थाप कर जो दुख दीने । पेल दिये पद तले

दाव कर प्राण हरीने ॥ आप जगत के जीव जिते तिन सब के नायक । अरज करूं मैं सुनो दोष मेटो दुख दायक ॥ ४ ॥ अशुन आदिक चोर महा घन घोर पाप मय । तिन के जो अपराध भये सो छमा छमा किय मेरे जे अब दोष भये सो छमो दयानिधि । यह पढ़ि कोणों कियो आदि षट् कर्म माहिं विधि ॥ ५ ॥

द्वितीय प्रत्याख्यान कर्म ।

जो प्रमाद बश होय बिरोधे जीव घनेरे । तिन को अपराध भयो मेरे अघ ढेरे ॥ सो सब मिथ्या होउ जगति पति के सु प्रसादे । जा प्रसाद से मिलें सर्व सुख दुःख न लादे ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लज्ज दया कर हीन महा शठ । किये पाप अघ ढेर पाप मत होउ चित्त दुठ ॥ निन्दों मैं वार वार निज जिय को गरहों । सब विधि धर्म उपाय पाय फिर पापहि कर हों ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नर जन्म तथा श्रावक कुल भारी । सत्संगति संयोग धर्म जिन श्रद्धा भारी ॥ जिन बचनामृत धार समावर्ते जिन वाणी । तो भी जीव संहारे धिक् धिक् धिक् हम जानी ॥ ८ ॥ इन्द्रिय लंपट होय खोय निज ज्ञान जैसा सब । अज्ञानी जिन करे तिसी विधि हिंसक

हो अब ॥ गमनागमन करते जीव विरोधे भोले । सो सब दोष किये निन्दौं अब मन वच तोले ॥८॥ आलोचन विधि थकी दोष लगे जु घनेरे । सो सब दोष विनाश होउ तुमसे जिन मेरे ॥ बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता । ईर्षादिक से भये निंद ये जो भय भीता १०

तृतीय सामायिक कर्म

सब जीवन में मेरे समता भाव जगो है । सब जि-यको सम समता राखो भाव लगो है ॥ आर्ति रौद्र दु-र्ध्यान छोड़ कर हों सामायक । संयम जो कब शुद्ध होय यह भाव वढ़ायक ॥ ११॥ पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउकाय वनस्पति स्थावर । पंच माहिं तथा त्रस जीव वसे जित ॥ वे इन्द्रिय त्रय चउ पचेंद्रिय माहिं जीव सब । तिन से क्षमा कराऊं मुझ पर क्षमा करो अब ॥ १ ॥ इस अवसर में मेरे सब सम कंचन अरु तृण । महल मसान समान शत्रु अरि मित्रहि सम गण ॥ ज-न्म न मरण समान जान हम समता कीनी । सामायि-क का काल जिते यह भाव नवीनी ॥ १३ ॥ मेरो है एक आत्म ता में ममत्व जु कीनो । और सबै मम भिन्न जान समता रस भीनो ॥ मात पिता सुत बन्धु मित्र

त्रिय आदि सवे यह। मो से न्यारे जान तथार्थ रूप लहों गह ॥ १४ ॥ मैं अनादि जग जाल माहिं फंस रूप न जानो। एकेन्द्रिय दे आदि जन्तु को प्राण हरानो॥ सो अब जीव समूह सुनो यह मेरी अर्जी। भव भव को अपराध क्षमा कीजो कर मर्जी ॥१५॥

चतुर्थ स्तवन कर्म।

नमों वृषभ जिन देव अजित जिन जीत कर्म को। संभव भव दुख हरण करण अभिनंद शर्म को॥ सुमति सुमति दातार तार भव सिन्धु पार कर। पद्म प्रभु पद्माभ भानु भव भीत प्रीति धर॥ १६ ॥ श्री सुपार्श्व कृत पास नाश भव जासशुद्ध कर। श्री चन्द्र प्रभु चन्द्र कान्ति सम देह कांति धर॥ पुष्य दन्त दमि दोष कोष भवि पोष रोष हर। शीतल शीतल करण, हरण भव ताप दोष हर॥ १७ ॥ श्रेय रूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्य जन। वास पूज सत पूज्य वासवादिक भव भय हन॥ बिमल विमल मत देन अन्त गत हैं अनंत जिन। धर्म शर्म दिव करण शान्ति जिन शान्ति विधायिन॥ १८ ॥ कुंथु कुंथु मुख जीव पाल अरनाथ जाल हर। मल्लि मल्ल सम मोह मल्ल मारण प्रचार धर॥

मुनि सुव्रत व्रत करण नवत सुर संगहि नमि जिन। नमिनाथ जिन नेमि धर्म रथ माहिं ज्ञान घन ॥ १९ ॥ पार्श्वनाथ जिन पार्स उपल सम मोक्ष रमापति। वर्द्धमान जिन नमों वमों भव दुःख कर्मकृत। या विधि मैं जिन संघ रूप चउवीससंख्य धर। स्तवों नमों मैं वार वार वंदों शिव सुख कर ॥ २० ॥

पंचम वन्दना कर्म।

वन्दों मैं जिन वीर धीर महावीर सुसन्मति। वर्द्धमान अतिवीर वंदिहों मन वच तन कृत ॥ त्रिशला तनुज महेश धीश विद्यापति वंदों। वंदो नित प्रति कनक रूप तनु पाप निकन्दों ॥ २१ ॥ सिद्धार्थ नृप नन्द द्वन्द दुख दोष मिटावन। दुरित दवानल ज्वलित ज्वाल जग जीव उधारन ॥ कुंडल पुर कर जन्म जगत जिय आनंद कारण। वर्ष बहत्तर आयु पाय सब ही दुख टारन ॥ २२ ॥ दस हस्त तन तंग तंग कृत जन्म मरण भय। बाल ब्रह्म मय ज्ञेय हेय आदेय ज्ञान मय॥ दे उपदेश उधार तार भव सिंधु जीव घन। आप बसे शिव माहिं ताहि वंदों मन वच तन ॥ २३ ॥ जाके वंदन थकी दोष दुख दूरहि जावे। जावे वंदन थकी

मुक्ति त्रिय सन्मुख आवे ॥ जाके बंदन थकी बंद्य होवे सुरगण के। ऐसे वीर जिनेश बंदि हों क्रम युग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक षट् कर्म मांहिं बंदन यह पंचम। बंदे वीर जिनेन्द्र इन्द्र शत बंद्य २ मम ॥ जन्म मरण भय हरो करो अघ शांति शांति भय। मैं अघ कोष सुपोष दोष को दोष विनाशय ॥ २५ ॥

षष्टम कायोत्सर्ग कर्म।

कायोत्सर्ग विधान करों अन्तम सुखदाई। कायत्य-जन मम होय काय सबको दुखदाई ॥ पूर्व दक्षिण नमों दिशा पश्चिम उत्तर में। जिन गृह बन्दन करों हरों भव पाप तिमिर मैं ॥ २६ ॥ शिरो नति मैं करों नमों म-स्तक कर धरके। आवर्तादिक क्रिया करों मन वच मद हरके ॥ तीनलोक जिन भवन मांहि जिन बिम्ब अकृत्रिम। कृत्रिम हैं द्वय अर्द्ध द्वीप मांही बन्दोंजिम ॥ २७ ॥ आठ कोड़ि पर छप्पन लाख रु सहस्त्र सुध्यानू। चार शतक पर असी एक जिन मन्दिर जानू ॥ व्यन्तर ज्योतिष मांहि संख्य रहते जिन मन्दिर। जिन गृह बन्दन करों हरो मम पाप संग कर ॥ २८ ॥ सामायक सम नाहिं और कोई बैर मिटायक।

सामायिक सम नाहिं और कोई मैत्री दायक ॥ श्रावक अनुव्रत आदि अन्त सप्तम गुण थानक । यह आ-वश्यक किये होय निश्चय दुख हानक ॥ २९ ॥ जो भवि आत्म काज करण उद्यम के धारी । सो सब काज वि-हाय करो सामायिक सारी ॥ राग द्वेष मद मोह क्रोध लोभादिक जो सब । बुध महाचन्द्र विलाय जाय ताते कीजो अब ॥३०॥ इति सामायिक पाठ भाषा सम्पूर्ण ॥

श्रीवीतरागाय नमः ॥

१७ बारह भावना

भैयालाल कृत ।

॥ चौपाई ॥

पंच परम गुरु वन्दन करूं । मन वच भाव सहित उर धरूं । बारह भावन पावन जान । भाऊं आत्मगुण पहिचान ॥ १ ॥ थिर नहीं दीखे नयनों वस्त । देहा-दिक अरु रूप समस्त । थिर विन नेह कौनसे करूं । अथिर देख ममता परि हरूं ॥२॥ अशरण तोहि श-रण नहीं कोय । तीन लोक में दृग धर जोय ॥ कोई न तेरो राखन हार कर्म वसे चेतन निरधार ॥ ३ ॥ अरु

संसार भावना येह। पर द्रव्यन से कैसे नेह ॥ तू चेतन वे जड़ सर्बांग। ताते तजो परायो संग ॥ ४ ॥ जीव अकेला फिरे त्रिकाल। ऊरध मध्य भवन पाताल ॥ दूजा कोई न तेरे साथ। सदा अकेला भ्रमे अनाथ ॥ ५ ॥ भिन्न सदा पुद्गल से रहे। भर्म बुद्धि से जड़ता गहे ॥ वे रूपी पुद्गल के खंध। तू चिन्मूरति सदा अबन्ध ॥६॥ अशुचि देख देहादिक अंग। कौन कुवस्तु लगी तो संग अस्थिचाम रुधिरादिक गेह। मल मूत्रनि लख तजो स्नेह ॥ ७ ॥ आस्रव पर से कीजे प्रीत। ताते बंध पड़े विपरीत। पुद्गल तोहि अपन यो नाहि। तू चेतन यह जड़ सब आहि ॥ ८ ॥ सम्बर पर को रोकन भाव। सुख होवे को यही उपाय ॥ आवें नहीं नये जहां कर्म। पिछले रुक प्रगटे निजधर्म ॥ ९ ॥ थिति पूरी ह्वै खिर खिर जाय। निर्जरभाव अधिक अधिकाय ॥ निर्मल होय चिदानंद आप। मिटे सहज परसंग मिलाप ॥१०॥ लोक मांहि तेरो कुछ नाहि। लोक अन्य तू अन्य लखाहि ॥ वह सब षट् द्रव्यन का धाम। तू चिन्मूरति आतमराम ॥ ११ ॥ दुर्लभ पर को रोकन भाव। सो तो दुर्लभ है सुन राव। जो तेरे है ज्ञान अनन्त। सो नहीं

दुर्लभ सुनो महंत ॥ १२ ॥ धर्म स्वभाव आप ही जान । आप स्वभाव धर्म सोई मान ॥ जब वह धर्म प्रगट तोहे होइ । तब परमात्म पद लख सोइ ॥ १३ ॥ येही बारह भावन सार । तीर्थंकर भावें निर्धार । होय विराग महाव्रत लेय । तब भव । भ्रमण जलांजलि देय ॥ १४ ॥ भैया भावो भाव अनूप । भावत होय तुरत शिवभूप । सुख अनंत विलसो निशि दीश । इम भावो स्वामी जगदीश ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥

प्रथमअथिरअशरणजगत्, एकअन्य अशुचान ।
आश्रव संवर निर्जरा, लोक बोध दुलभान ॥ १६ ॥
इति बारहभावना भैयाभगवतीदास कृत सम्पूर्णाः

१८ बारहभावना भूधरदास कृत ।

॥ दोहा ॥

राजा राणा छत्रपति, हथियन के असवार ।
मरणा सब को एक दिन, अपनी अपनी बार ॥१॥
दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार ।
मरती बरियां जीव को, कोई न राखन हार ॥ २ ॥
दाम बिना निर्धन दुःखी, तृष्णा वश धनवान् ।
कहीं न सुख संसार में, सब जग देखो छान ॥ ३ ॥

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
यूं कबही इस जीव का, साथी सगा न कोय ॥ ४ ॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय।
पर संपति पर प्रगटये, पर हैं परिजन लोय ॥ ५ ॥
दिपे चाम चादर मढ़ी, हाड पींजरा देह।
भीतर यासम जगत् में, और नहीं घिन गेह ॥ ६ ॥

॥ सोरठा ॥

मोह नींद के जोर, जगवासी घूमें सदा।
कर्म चोर चहुं ओर, सरबस लूटें सुध नहीं ॥ ७ ॥
सतगुर देय जगाय, मोह नींद जब उपशमें।
तब कुछ बने उपाय, कर्म चोर आवत रुकें ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधे भ्रम छोर।
याविधि बिन निकसे नहीं, बैठे पूर्व चोर ॥ ९ ॥
पंचमहाव्रत संचरण, सुमति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार ॥ १० ॥
चौदह राज उतंग नभ, लोक पुरुष संठान ॥
तामें जीव अनादि से, भरमत है बिन ज्ञान ॥ ११ ॥
याचे सुरतरु देय सुख, चिन्तत चिन्ता रैन।
बिन याचे बिन चिंतवे, धर्म सकल सुख दैन ॥ १२ ॥

धनकन कंचन राज सुख, सबै सुलभकर जान ॥
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान ॥१३॥ इति संपूर्णम् ।

१९ बारहभावना बुधजनदास कृत ।

गीता छन्द ।

जेती जगत् में वस्तु तेती अथिर पर्यंयते सदा । प-
रणमनराखन नाहिं समरथ इन्द्र चक्री मुनि कदा ॥ तन
धन यौवन सुत नारी घर बार जान दामिन दमकता ।
ममता न कीजे धारि समता मानि जल में नमकता ॥१॥
चेतन अचेतन परिग्रह सब हुआ अपनी तिथि लहैं ।
सो रहैं आप करार माफिक अधिक राखे ना रहैं । अब
शरण काकी लेयगा जब इन्द्र नाही रहत हैं । शरण
तो इक धर्म आत्म जाहि मुनि जन गहत हैं ॥ २ ॥ सुर
नर नरक पशु सकल हेरे कर्म चेरे बन रहे । सुख शा-
श्वता नहीं भासता सब विपति में अतिसन रहे ॥ दुःख
मानसी तो देवगति में नारकी दुःख ही भरे । तिर्यंच
मनुज वियोग रोगी शोक संकट में जरे ॥ ३ ॥ क्यों
भूलता शठ फूलता है देख पर कर थोक को । लाया कहां
लेजायगा क्या फौज भूषण रोक को ॥ जानन मरण तुझ
एकले को काल केता होगया । संग और नाही लगे

तेरे सीख मेरी सुन भया ॥ ४ ॥ इन्द्रीन से जाना न जावे तू चिदानन्द अलक्ष है ॥ स्व सम्वेदन करत अनुभव होत तब प्रत्यक्ष है । तन अन्य जड़ जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है । कर भेद ज्ञान सो ध्यान धर निज और बात असत्य है ॥ ५ ॥ क्या देख राचा फिरे नाचा रूप सुन्दर तनलिया । मल मूत्र भांड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया ॥ क्यों सूग नाहीं लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे । तोहि काल गट के नाहिं अट के छोड़ तुझ को गिरपरे ॥ ६ ॥ कोई खरा अरु कोई बुरा नाहीं वस्तु विविधि स्वभाव है । तू वृथा विकलप ठान उर में करत राग उपाव है ॥ यूंभाव आस्रव जनत तू ही द्रव्य आस्रव सुन कथा । तुझ हेतु ते पुद्गल करम बन निमित्त हो देते व्यथा ॥ ७ ॥ तन भोग जगत् सरूप लख डर भविक गुर शरणा लिया । सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्षि रुचि सन्मुख भया । इन्द्री अनिन्द्री दाबि लीनी त्रस रु थावर बध तजा । तब कर्म आस्रव द्वार रोके ध्यान निज में जा सजा ॥ ८ ॥ तज शल्य तीनों बरत लीनो, बाह्याभ्यन्तर तप तपा । उपसर्ग सुरनर जड़ पशु कृत सहा निज आत्म जपा ॥

तब कर्म रस बन होन लागे द्रव्य भावन निर्जरा। सब कर्म हर के मोक्ष वरके रहत चेतन अजरा ॥ ९ ॥ विच लोक नंतालोक माहीं लोक में द्रव सब भरा। सब भिन्न भिन्न अनादि रचना निमित कारण की करा॥ जिन देव भाषा तिन प्रकाशा भर्म नाशा सुन गिरा। सुर मनुष तिर्यंच नार की हुवे ऊर्ध्व मध्य अधोधरा ॥ १० ॥ अनन्त काल निगोद अटका निकस थावर तन धरा। भूवादि तेज बयार व्है के वेइन्द्रिय त्रस अवतरा ॥ फिर हो ते इन्द्री वा चौ इन्द्री पंचेन्द्री मन बिन बना। मन युत मनुषगति होना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥ ११ ॥ न्हाना धोना तीर्थ जाना धर्म नाहीं जप जपा। नग्न रहना धर्म नाहीं धर्म नाहीं तप तपा॥ वर धर्म निज आत्म स्वभावा ताहि बिन सब निष्फला। बुध जन धर्म निज धार लीना तिन ही कीना सब भला १२

॥ दोहा ॥

अथिरशरण संसार है, एकत्व अनित्यहि जान।
अशुचि आस्रव संवरा, निर्जर लोक बखान ॥ १३ ॥
बोध औ दुर्लभ धर्म ये, बारह भावन जान।
इन को भावे जो सदा, क्यों न लहै निर्वाण ॥ १४ ॥

इति बारह भावना बुधजन कृत सम्पूर्णाः

२० बारहभावना रत्नचंद जी कृत ।

॥ सवैया ॥ ३१ ॥

भोग उपभोग जे कहे हैं संसाररूप रमाधन पुत्र औ कलत्र आदि जानिये ॥ ज्यूहीं जल बुद बुद प्रत्यक्ष है लखावतनु विद्युत्चमत्कार थिर न रहानिये । त्यूं ही जग अथिर विलास को असार जान थिर नहीं दीसे सो अनादि अनुमानिये ॥ यह जो विचारे सो अनित्य अनुप्रेक्षा कह प्रथम ही भेद जिनराज जो बखानिये ॥१॥ निर्जन अरण्य माहिं ग्रहे मृग सिंह धाय शरण न दीसे अशरण ताहि कहिये ॥ हरिहरादि चक्रवर्त्ति पदत्यूं अथिर गिनो जन्ममरण सा अनाद ही ते लहिये ॥ याही को विचारिया असार संसार जान एक अवलंब जिन धर्म ताहि गहिये। दृढ़हिये धार जिन आत्म को कर विचार तज के विकार, सब निश्चल हो रहिये ॥ २ ॥ कर्म काण्डदाही यको आत्मा भ्रमण करे नट जैसो नाटक अनन्तकाल करे है । पिता हूते पुत्र होय जनक होय सुतहूते स्वामी हूतेदास भृत्य स्वामी पदधरे है । माता हू ते त्रिया होय कामिनीते माय होय भववन मांहि जीव यूंही संमरे है ॥ ३ ॥ महूं जो

एका की सदा देखिये अनंतकाल एकाकी जन्म मृत्यु बहु दुख सहो है। रोगनग्रसो है एकैपाप फल भुंजे घनो एकै शोकवन्त को उदुतीनाही सहो है। स्वजन न तात मात साथी नहिं कोय यह रत्न‌त्रय साथी निजताहि नहि गहो हैं। एकै यह आत्मध्यावे एकै तपसा क- रावे होय शुद्ध साधे तब मुक्ति पद लहो है ॥४॥ आत्म है अन्य और पुद्गल हूं अन्य लखो आत्म मात तात पुत्र त्रिया सब जानरे। जैसे निशिमाहिं तरुहुपैखग भेलें होंय प्रात उड़जांय ठौर ठौर तिमिमानरे ॥ तैसे वि- नाशीक यह सकल पदार्थ हैं हाट मध्यजन अनेक होंय भेले भानरे। इनहूंते काज कछु सरैनेगो नाहीं भैया अन्यत्वानुप्रेक्षारूप यह पहचानरे ॥ ५ त्वचा पल अस्थिनसाजालमलमूत्र धास शुक्र मल रुधिरकूधातु सम- मई है, ऐसो तन अशुचि अनेक दुर्गंध भरोश्रवैनवद्वार तामें मूढ़ मति दई है ॥ ऐसी यह देह ताहि लख के उदास रहो मानो जीव एक शुद्ध बुद्ध परणई है ॥ अ- शुचि अनुप्रेक्षा यह धारे जो इसी ही भांति तज के विकार तिन मुक्त रमालई है ॥ ६ ॥

॥ चौपाई ॥

आस्रवअनुप्रेक्षाहियधारं। सत्तावन आस्रव के द्वारं॥ कर्मागमपैसार जुहोय। ताको भेद कहुं अब सोय॥ मिथ्या अविरतयोगकषाय। यह सत्तावनभेद लखाय॥ बंधो फिरे इन के बश जीव। भव सागर में रुले सदीव। विकल्प रहित ध्यान जब होय। शुभ आस्रव को कारण सोय॥ कर्म शत्रु को कर संहार। तब पावे पंचम गति सार ॥७॥ आस्रव को निरोधजोठान। सोई सम्वर कहे बखान॥ सम्वर कर सुनिरजरा होय। सो है द्वय पर कारहि जोय॥ इक स्वयमेव निर्जरा पेख। दूजी निर्जरा तपहि विशेष॥ ८॥ पूर्व सकल अवस्था कही। संवर करजो निर्जरा सही॥ सोय निर्जरा दोपरकार। सविपाकी अविपाकी सार॥ सविपाकी सब जीवन होय। अविपाकी मुनि वरके जोय॥ तप के बलकर मुनि भोगाय। सोई भाव निर्जरा आय। बंधे कर्म छूटे जिह घरी। सोई द्रव्य निर्जरा खरी॥ ९॥ अधोमध्य अर ऊरध जान। लोकत्रय यह कहे बखान॥ चौदह राजुसबे उतंग। वात त्रय बेढे सर्व अंग॥ घनाकार राजू गण ईस। कहे तीन से तैतालीस॥ अधोलोक चौकूंटो जान। मध्य लोक झालरी समान॥ ऊ-

है लोक मृदंगाकार । पुरुषाकार त्रिलोकविहार । ऐसो निज घर लखे जु सोय ॥ सो लोकानुप्रेक्षा यह होय ॥ १० ॥ दुर्लभ ज्ञान चतुरगति माहिं । भ्रमत भ्रमत मानुष गति पाहिं ॥ जैसे जन्म दरिद्री कोय । मिलो रत्न निधि ताको सोय ॥ त्यूं मिलियो यह नर परयाय । आर्यखंड सांच कुल पाय ॥ आयु पूरण पंचइन्द्री भोग॥ मंदकषाय धर्म संयोग ॥ यह दुर्लभ है या जग माहिं । इन बिन मिले मुक्तिपद नाहिं ॥ ऐसी भावना भावे-सार । दुर्लभ अनुप्रेक्षा सुविचार ॥ ११ ॥ पाले धर्म यत्नकर कोइ । शिव मंदिर ते लहे जु सोई ॥ धर्म भेद दशविधि निर्धार । उत्तम क्षमा जु मार्दव सार ॥ आर्जव सत्य शौच पुन जान ॥ संयमतप त्यागहि पहिचान ॥ आकिंचन ब्रह्मचर्य गनेव ॥ यह दश भेद कहे जिनदेव धर्महि ते तीर्थंकर गति । धर्महि ते होवे सुरपति । धर्म ही ते चक्रेश्वर जान । धर्म ही ते हरि प्रतिहरि मान । धर्म ही ते मनोज्ञ अवतार । धर्म ही ते हो भवदधिपार । रत्नचन्द्र यह कहे वखान । धर्महि ते पावे निर्वान ॥

इति ॥

॥ ॐ श्रीवीतरागायनमः ॥

२१ बाईस परीषह

॥ भैया भगवतीदास जी कृत ॥

दोहा—पंचपरम पद प्रणमिके, प्रणमूं जिनवर बानि ।
कहों परीषह साधु की, विंशति दोय बखानि १

२२ परीषहों के नाम । कवित्त ।

धूप शीत क्षुधाजीत तृषा डंसभयभीत, भूमिसैन बधबंध सहै सावधान है । पथत्रास तृणफांस दुरगंध रोगभास, नगनकीलाज रात जीते ज्ञानवान् है ॥ तीय मान अप मान थिर कुवचनवान, अजाची अज्ञान प्रज्ञा सहित सुजान है । अदर्शन अलाभ ये परीषह हैं बीस द्वय, इन्है जीते सोई साधु भाखे भगवान् है ॥ २ ॥

१ ग्रीष्म परीषह ।

ग्रीषम की ऋतुमांहिं जलथल सूख जांहिं, परतप्रचंड धूप आगिसी बलत है । दावाकीसी ज्वाल माल बहत बयार अति, लागत लपट कोऊ धीर न धरत है ॥ धरती तपत मानों तवासी तपाय राखी, बड़वा अनलसम शैल जो जरत है । ताके शृंग शिला पर जोर युगपांव धर करत तपस्या मुनि कर्म रहत है ३

२ शीत परीषह।

शीतकी सहाय पाय पानी जहां जम जाय, परत तुषार आय हरे वृक्ष झाड़े हैं। महाकारी निशा मांहिं घोर घन गरजाहिं, चपलाहू चमकाहिं तहां दृग गाढे हैं॥ पौन की झकोर चले पाथर हैं तेहू हिलें, ओराग के ढेर लगे तामें ध्यान बाढ़े हैं। कहां लों बखान कहूं हेमाचलकी समान, तहां मुनिरायपाय जोर दृढ़ठाढ़े हैं

योग देके योगीश्वर जंगल में ठाढ़े भये, वेदनीके उदै तें परीषह सहत हैं। कारी घन घटा लागै भारी भयानक अति गाज विज्जु देखे धीर कोऊ न गहत हैं। मेह की भरन परे मूसरसी धारा मानो, पौनकी झकोर किधों तीर से बहत हैं। ऐसी ऋतु पावस में पावत अनेक दुःख, तोऊ तहां सुख वेद आनन्द लहत हैं॥ ५॥

३ क्षुधा परीषह।

जगतके जीव जिहं जेर कीतराखे अति, जाके जोर आगे सब जोरावर हारे हैं। मारत सरीरे नहिं छोरे राजा रंक कहूं, आंखिन अंधेरी ज्वर सब दे पछारे हैं। दावाकीसी ज्वाला जो जराय डारे छाला छवि, देवन को लागे पशुनपंछीको विचारे हैं। ऐसी क्षुधा जोर भैया कहित कहांलों और, ताहजीत मुनिराज ध्यान थिर

धारे हैं ॥ ६ ॥ ४ तृषा परीषह ।

धूप की धखनि परे आग सो शरीर जरे, उपचार कौन करे दहे द्वार आन के । पानी की प्यास जेती कहै को बखान तेती, तीनों जोग थिर सेती सहै कष्ट जान के ॥ एक छिन चाहनाहिं पानी के परीसेनाहिं प्राण किन नाशें जाहिं रहे सुखमान के । ऐसी प्यास मुनि सहे तब आय सुख लहै, भैया इस भांति कहै वंदिये विधान के ॥७॥ ५ डंसमशकादि परीषह ॥

सिंह सांप ससा स्याल सूअर औ स्वान, भालु, बाघ बीछी बानर सु बाजने सताये हैं । चीता चील्ह चरख चिरैया चूहा चेंटी चेंटा, गज गोह गाय जो गिलहरी बताये हैं ॥ मृग मोर मांकरी सु मच्छर जो मांखीमिल भौंरा भौंरी देख के खजूरा खरे धाये हैं । ऐसे डंस मस कादि जीव हैं अनेक दुष्ट, तिन की परीषह जीतें साधु जू कहाये हैं ॥८॥ ६ शय्या परीषह ।

शुद्ध भूमि देख रहे दिन सेती योग गहै, आसन सु एक लहै धरे पद टेक है । कैसो छिन कष्ट परै ध्यान सेती नाहिं टरै देह को ममत्व हरे हिरदै विवेक है ॥ तीनों योग थिर सेती सहत परीषह जेती. कहै को ब-

खोल तेती होय जे अनेक हैं। ऐसे निशि शयन करै अचल सु अंग धरै, भव्य ताके पांय परै धन्य मुनि एक हैं।

७ वधबंध परीषह ।

कोऊ बांधो कोऊ मारो कोऊ किनगह डारो, सवन के संकट सुबोध तैं सहतु हैं । कोऊ गिर आग धरो कोऊ पील प्राण हरो, कोऊ काट टूक करो द्वेष न गहतु है ॥ कोऊ जल माहिं बोरो कोऊ लैके अंग तोरो, कोऊ कह चोर मारो दुःख दे दहतु है । ऐसे वधबंध के परीषह को जीतै साधु, 'भैया' ताहि वार वार वंदन कहतु है ॥ १० ॥

८ चर्यापरीषह ॥ छप्पय ॥

जब मुनि करहिं विहार, पंथ पग धरहिं परक्खत । कंट हाथ परवान, दृष्टि युग भमि परक्खत ॥ चलत ईरया समिति, पंच इन्द्रिय वश कीन । दशहुं दिशा मन रोक, एक करुणारस भीनें ॥ इम चलत पूज्य मुनिराज जब, होय खेद संकट विकट। तिहं सहहिं भाव थिर राख के, तब धावें भव उदधितट ॥ ११ ॥

९ तृण फांस परीषह ॥ छप्पय ॥

परत आंखि महं कछुक, काढिनहिं डारत तिन को

चुभत फांस तन मांहि, सार नहिं करसैं जिन को, लागत चोट प्रचंड, खेद नहीं काहूं जनावत। आणादिक बहु शस्त्र, कहत कहुं पार न आवत, इम सहत सकल दुख देह दमि, रागादिक नहिं धरत मन। भैया त्रिकाल बंदत चरण, धन्य धन्य जग साधु धन ॥ १२ ॥

१० ग्लानि परीषह ॥ छप्पय ॥

लगत देह में मैल, धोय नहिं तिन को कारत। द्रेहादिकतैं भिन्न, शुद्ध निज रूप विचारत॥ जल थल सब जिय जंत, संत हू याहि सताऊं। सब हीं मोहि समान देत दुख मैं दुख पाऊं॥ इम जान सहत दुरगंध दुख, तब गिलान विजयी भवत। भैया त्रिकाल तिहं साधु के, इन्द्रादिक चरणन नमत ॥ १३ ॥

११ रोग परीषह। छप्पय ॥

वात पित्त कफ कुष्ट, स्वास अरु खांस खेश गनि। शीत ताप शिरवाय, पेट पीड़ा जु शूल भनि॥ अतीसार अधसीस, अरश जो होय जलंधर। एकांतर अरु रुधिर, बहुत फोड़ा जु भगंदर॥ इम रोग अनेक शरीर महिं, कहत पार नहिं पाइये॥ मुनिराज सबन जीते रहैं औषध भाव न भाइये ॥ १४ ॥

दोहा—ये एकादश वेदिनी. कर्म परीषह जान ।

मोह सहित बलवानहैं, मोह गये बलहान ॥१४॥

१२ नग्न परीषह ॥ कवित्त ॥

नगन के रहिबे को महाकष्ट सहिबे को, कर्म वन दहबे को बड़े महाराज हैं । देह नेह तोरबे को लोक लाज छोरबे को, परम प्रीति जोरबे को जाको जोर काज हैं ॥ धर्म थिर राखबे को परभाव नाशबे को, सुधारस चाखबे को ध्यान को समाज हैं । अंबर के त्यागे सों दिगम्बर कहाये साधु, छहों काय के आराध यातैं शिरताज हैं ॥

१३ रति अरति परीषह ॥ कवित्त ॥

आंखनि की रति मान दीपक पतंग परे, नासिका की रतिमान भ्रमर भुलाने हैं । कानन की रति मृग खोवत है प्राण निज, फरस की रति गज भये जो दिवाने हैं ॥ रसना की रति सब जगत सहत दुःख, जानत है यह सुख ऐसे भरमाने हैं ॥ इन्द्रिन की रति मान गति सब खोटी करै, ताहि मुनिराज जीत आप सुख माने हैं ॥ १७ ॥ छप्पय ।

प्रकृति विरुद्ध अहार, मिले मुनि जो दुःख पावै । सोहि अरति परिणाम, तहां समता रस भावै । औरहु

परसंयोग होत दुख उपजैं तन में, तहां अरति परणाम, त्याग थिरता धरै मनमें। इन सहत साधु दुख पुंज बहु तबहु क्षमा नहीं उर टरत। भैया त्रिकाल मुनिराज सो अरति जीत शिव पद वरत ॥ १८ ॥

१४ स्त्री परीषह ॥ कवित्त ॥

नारी के निहारत विचार सब भूलि जाय, नारी के निहारे परिणाम फिरे जात हैं। नारी निहारत अज्ञान भाज आय झके, नारी के निहारत ही शीलगुण घात हैं॥ नारी के निहारत न शूरवीर धीर धरै, लोहन के सार जे अडिग ठहरात हैं। ऐसी नारी नागनि के नैन को निसेष जीत, भये हैं अजीत मुनि जगत् विख्यातहैं।

१५ मान अपमान परीषह ॥ कवित्त ॥

जहां होय मान तहां मानत महान सुख, अपमान होय तहां मृत्यु के समान है। मान के गुमान आप महाराज मान रहे, होत अपमान मह हरै दशों प्राण हैं। मान ही की लाज जग सहत अनेक दुःख अपमान होत धरै नरक निदान है॥ ऐसे मान अपमान दोऊ दुष्टभाव तज, गनत समान मुनि रहै सावधान है ॥ २० ॥

१६ थिर परीषह । छप्पय ।

जब थिर होहिं मुनिन्द, एक आसन दृढ़ धरई। जब

थिर होहिं मुनिन्द, अंग एको नहिं टरई ॥ जब थिर होहिं मुनिन्द, कष्ट छिन आवहिं केते । जब थिर होहिं मुनिन्द, भावतों सहै जु तेते ॥ इम सहत कष्ट मुनिराज अति, रोगदोष नहिं धरत मन । उत्कृष्ट होहिं इक वेर जो, सब उन ईस परीस भन ॥ २१ ॥

१७ कुवचन परीषह ॥ छप्पय ॥

कुवचन बाण समान, लगै तिहिं भार गरावहिं । कुवचन अगनि समान, वैठि गुण पुंज जलावहिं ॥ कुवचन वज्र विशाल, भाग गिर ढाहैं पलमें । कुवचन विष की झाल, मोह दुःख दै बहु छल में ॥ कुवचन महादुःख पुंज यह, लगे वचैं नहिं जगत् जन । 'भैया, त्रिकाल मुनि राज तिहं, लील लहैं निज अक्षय धन ॥ २२ ॥

१८ अयाची परीषह (घनाक्षरी ३२ वर्ण)

अयाची धरत व्रत याचना करत नाहिं, इन्द्री उमंग हरत महा सन्तोष करकें । रागादि टरत भाव क्रोधादि बंध गरत, वरत स्वभाव शुद्ध मनोविकार हरकें ॥ सरण सों डरत न करत तपस्या जोर, दरत अनेक कष्ट क्षमा खड्ग धरकें। दया भंडार भरत बरत सु साधु ऐसे, 'भैया' प्रणाम करत त्रिकाल पांय परकें ॥ २३ ॥

१९ अज्ञानपरीषह छप्पय ।

सम्यक् ज्ञान प्रकाश, होहिं मुनि कोय तुच्छ मति । सुनहिं जिनेश्वर वैन. याद नहिं रहै हृदय अति ॥ ज्ञान वरण प्रसाद, बुद्धि नहिं प्रगटै जाको । पूरब भव थित बन्ध, यहां कछु चलत न ताको ॥ इम सहत कष्ट मुनि ज्ञान के, होहिं परीषह प्रबलजिय । तिहँ जीत प्रीति निजरूप सो, लहत शुद्ध अनुभव हिय ॥ २४ ॥

२० प्रज्ञा परीषह छप्पय ॥

प्रज्ञा बल नहिं होय, तहां विद्या नहिं आवै । प्रज्ञा बल नहिं होय, तहां नहिं पढ़ै पढावै ॥ प्रज्ञा प्रबल न होय, तहां चर्चा नहिं सूझै । प्रज्ञा प्रबल न होय, तहां कछु अर्थ न बूझै ॥ इम बुद्धि विशेष न होय जित, तित अनेक परिषह सहत । 'भैया' त्रिकाल मुनिराज तिहँ, जीत शुद्ध अनुभव गहत ॥ २५ ॥

२१ अदर्शन परीषह छप्पय ।

समय प्रकृति मिथ्यात, जासु उरतैं नहिं टरई । सो जिय है गुनवंत, तथा वेदक पद धरई । दर्शन निर्मल नाहिं मोह की प्रकृति लखावे ॥ सहैं अदर्शन कष्ट, कहत कैसे बन आवे । परिणाम खेद बहु बिधि करत, तो हू नि-

मैल होय नहिं। 'भैया' त्रिकाल मुनिराज तिहँ, जीत रहे निज आप महिं ॥ २६ ॥

२२ अलाभ परीषह ॥ कवित्त ॥

अन्तराय कर्म के उदयतै जो अलाभ होय, ताके भेद दोय कहे निश्चय व्यवहार है। निश्चय तो स्वरूप में न थिरता विशेष रहै, वह अन्तराय जो रहै न एक सार है॥ व्यवहार अन्तराय मिलै न अहार योग, और अनेक भेद अकथ अपार है। ऐसे तो अलाभ का परीषह को जीत साधु, भये हैं अतीत 'भया' वंदै निरधार है॥२७॥

बाईस परीषह विजयी मुनिराज की स्तुति।

॥ कुण्डलिया ॥

सहा परीषह बीस द्वय, तिहँ जीतन को धीर। धन्य साधु संसार में, बड़े शूरवर वीर।
बड़े शूरवर वीर, भीर भवकी जिहँ टारी॥
कर्म शत्रु को जीत, भये शिव के अधिकारी॥
धारी निजनिधि संच, पंच पद को जिहँ लहा। भैया करहि प्रणाम, परीषह विजयी सु महा॥ २८ ॥

छप्पय

सत्रह से उनचार मास, फागुण सुखकारी। सुदि बारस गुरुवार, सार मुनिकथा सवांरी॥ विकट परीषह

जीत, होत जे शिवपद गामी । ते त्रिभुवन के नाथ, प्रगट जग अन्तरजामी ॥ तिहँ चरण नमत हिरदै हरखि, कहत गुणन की माल यह । कवि भैया हृयकर जोर के, बन्दन करहि त्रिकाल लह ॥ २९ ॥

हृदयराम उपदेश तैं, भये कवित्त ये सार ।

मुनि के गुण जे सरदहैं, ते पावहिं भवपार ॥२८॥

॥ इति ॥

॥ ओं श्रीवीतरागाय नमः ॥

२२ बाईस परीषह ।

भूधरदास जी कृत ।

छप्पय ।

क्षुधा तृषा हिम उष्ण दंशमंशक दुःखभारी । निरावरण तन अरति खेद उपजावत नारी । चर्या आसन शयन दुष्टवायक वधबंधन । यांचें नहीं अलाभ रोग तृणस्पर्शनिबन्धन । मलजनितमानसन्मानवशप्रज्ञा और अज्ञानकर । दर्शनमलिन बाईससबसाधुपरीषह जान नर ॥

दोहा ।

सूत्रपाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम ।

इनके दुःख जे मुनि सहैं, तिन प्रतिसदा प्रणाम ॥

१ क्षुधा परीषह सवैया ।

अनशन ऊनोदर तप पोषत हैं पक्ष मास दिन बीत गये हैं । जो नहीं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं । तब तहां दुस्सह भूख की वेदन सहित साधु नहीं नेक नये हैं । तिन के चरण कमल प्रति २ दिन हाथ जोड़ हम सीस नये हैं ॥

२ तृषा परीषह ।

पराधीन मुनिवर की भिक्षा पर घर लेय कहैं कछु नाहीं । प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यास की त्रास तहां हीं । ग्रीष्मकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरैं जब जाहीं । नीर न चहैं सहैं तिसना मुनि जयवन्तों वर्तो जग माहीं ॥

३ शीत परीषह ।

शीतकाल सब ही जन कांपैं खड़े जहां बन वृक्ष दहे हैं । झंझा वायु बहे वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं । तहां धीर तटनी तटचौपट ताल पाल पर कर्म दहे हैं सहैं सम्हाल शीतकी बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥

४ उष्ण परीषह ।

भूख प्यास पीड़े उर अन्तर प्रज्वले आंत देह सब दागे । अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषम की ताती बाल झाल-

सी लागे। तपै पहाड़ तापतन उपजै कोप पित्त दाह-ज्वर जागे। इत्यादिक गर्मी की बाधा सहैं साधु धैर्य्य नहीं त्यागें॥ ५ दंशमशक परीषह॥

दंश मशक माखी तनु काटैं पीड़ैं बन पक्षी बहुतेरे। डसें व्याल विषहारे बिच्छू लगें खजूरे आन घनेरे। सिंह स्याल शुण्डाल सतावें रीछ रोझ दुःख दें घनेरे। ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे॥

६ नग्न परीषह।

अन्तरविषय वासना वर्त्तें बाहिर लोक लाज भय भारी। तातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नहीं सकें दीन संसारी। ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषह जीतें साधु शील व्र-तधारी। निर्विकार बालक वत् निर्भय तिनके पायन धोक हमारी॥ ७ अरति परीषह।

देश काल को कारण लहिके होत अचैन अनेक प्र-कारैं। तब तहां खिन्न होयें जगवासी कलमलाय थिर-ता पन छारैं। ऐसी अरति परीषह उपजत तहां धीर धैर्य्य उर धारैं। ऐसे साधुन के उर अन्तर बसो निर-न्तर नाम हमारे। ८ स्त्री परीषह।

जे प्रधान केहरि को पकड़े पन्नग पकड़ पान से चं-

पत। जिनकी लनक देख भौं बांकी कोटिन सूर दीनता जरूपत। ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेद पयंपत। धन्य धन्य ते साधु साहसी मन सुमेरु जिनको नहीं कम्पत॥ ९ चर्या परीषह।

चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि इत उत नहीं तानैं। कोमल पांय कठिन धरती पर धरत धीर बाधा नहीं मानैं। नाग तुरंग पालकी चढ़ते ते स्वाद उरयाद न आनैं। यौं मुनिराज सहैं चर्या दुःख तब दृढ़ कर्म्म कुलाचल भानैं॥

१० आसन परीषह।

गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसैं जहां शुद्ध भू हेरैं। परिमित काल रहैं निश्चल तन बारबार आसन नहिं फेरैं। मानुषदेव अचेतन पशु कृत बैठे विपत आन जब घेरैं। ठौर न तजैं भजैं थिरतापद ते गुरु सदा बसो उर मेरे। ११ शयन परीषह।

जे महान सोने के महलन सुन्दर सेज सोय सुख जोवैं। ते अब अचल अंग एकासन कोमल कठिन भूमि पर सोवैं। पाहन खंड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर

नहीं होवैं। ऐसी शयन परीषह जीतत ते मुनि कर्म्म कालिमा धोवैं। १२ आक्रोश परीषह।

जगत् जीवयावन्त चराचर सबके हित सब को सुख दानी। तिन्हें देख दुर्वचन कहैं शठ पाखंडी ठग यह अभिमानी। मारो याहि पकड़ पापी को तपसी भेष चोर है छानी। ऐसे वचन बाण की बरियां क्षमा ढाल ओटैं मुनिज्ञानी॥ १३ बधबंधन परीषह॥

निरपराध निर्वैर महामुनि तिन को दुष्ट लोग मिल मारैं। कोई खैंच खंभ से बांधें केई पावक में परिजारैं तहां कोप नहीं करैं कदाचित् पूर्व कर्म्म विपाक विचारैं। समरथ होय सहैं बध बंधन ते गुरु सदा सहाय हमारैं॥ १४ अयाचना परीषह॥

घोर वीर तप करत तपोधन भये क्षीण सूखी गलबांही। अस्थिचाम अवशेष रहे तनु नसा जाल झलके जिस मांही। औषधि अशन पान इत्यादिक प्राण जाएं पर याचित नाहीं। दुर्द्धर अयाचिक व्रत धारैं करहिं न मलिन धर्म्म परछाहीं॥

१५ अलाभ परीषह ।

एक वार भोजन की बरियां मौन साध बस्ती में आवें। जो नहीं बने योग्य भिक्षाविधि तो महन्त मन खेद न लावें। ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तब तप वृद्धु भावना भावें । यों अलाभ की परम परीषह सहें साधु सोही शिवपावें ॥

१६ रोग परीषह ॥

बात पित्त कफ शोणित चारों ये जब घटें बढ़ें तनु माहीं । रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव कायर होजाहीं । ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहें सूर उपचार न चाहीं । आत्मलीन विरक्त देह से जैनयती निज नेम निबाहीं ॥

१७ तृण स्पर्श परीषह ।

सूखे तृण और तीक्ष्ण कांटे कठिन कांकरी पांय विदारें । रज उड़ आन पड़े लोचन में तीर फांस तनु पीर विथारें ॥ तापर पर सहाय नहीं वांछत अपने करसों काढ़न डारें । यों तृणस्पर्श परीषह विजयी ते गुरु भव भव शरण हमारें ॥

१८ मल परीषह ।

यावज्जीव जलन्हौन तजो जिन नग्न रूपवन थान खड़े हैं । चले पसेव धूप की बरियां उडत धूल सब अंग

भरे हैं। मलिन देहको देख महा मुनि मलिन भावउर नाहिं करें हैं। यों मल जनित परीषह जीतैं तिन्हैं पाय हमसीस धरे हैं।

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह।

जे महान् विद्यानिधि विजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं। तिनकी विनय वचन सों अथवा उठ प्रणाम जन नाहिं करे हैं। तौ मुनि तहां खेद नहीं मानैं उर मलीनता भाव हरे हैं। ऐसे परम साधु के अहोनिशि हाथ जोड़ हम पांय परे हैं॥

२० प्रज्ञा परीषह।

तर्कछन्द व्याकरण कलानिधि आगम अलंकार पढ़ जानैं। जाकी सुमति देख पर वादी विलखे होंय लाज उर आनैं॥ जैसे सुनत नाद केहरि को बनगयंद भाजत भय मानैं। ऐसी महाबुद्धिके भाजन ये मुनीश मद रंच न ठानैं।

२१ अज्ञान परीषह।

सावधान वर्तैं निशिबासर संयम शूर परम वैरागी। पालत गुप्ति गये दीर्घ दिन सकल संग ममता परत्यागी॥ अवधिज्ञान अथवा मन पर्य्यय केवल ऋद्धि अज

हूं नहीं जागी । यों विकल्प नहीं करैं तपोधन सो अ-
ज्ञान विजयी बड़भागी ॥

२२ अदर्शन परीषह ।

मैं चिरकाल घोर तपकीने अजहूं ऋद्धि अतिशय
नहीं जागे । तप बल सिद्धि होय सब सुनियें सो कुल
बात झूठ सी लागे । यों कदापि चित में नहीं चिंतत
समकित शुद्ध शांति रस पागे। सोई साधु अदर्शन वि-
जयी ताके दर्शन से अघ भागे॥

किस कर्मके उदय से कौन परीषह (कवित्त)

ज्ञानावरणी से दोय प्रज्ञा और अज्ञान होय एक महा
मोह तें अदर्शन बखानिये । अन्तराय कर्म सेती उपजे
अलाभ दुःख सप्त चारित्र मोहनी के बल जानिये । नग्न
निषध्यानारी मानसन्मान गारि याचना अरति सब
ग्यारह ठीक ठानिये । एकादश बाकी रही वेदनी उ-
दय से कही बाईस परीषह उदय ऐसे उर आनिये ॥

॥ अडिल्ल छन्द ॥

एकबार इन माहिं एक मुनि के कही । सर्व उन्नीस
उत्कृष्ट उदय आवें सही ॥ आसन शयन विहार दोइ
इन माहिं की । शीत उष्ण में एक तीनये नाहिं की ॥

इति सम्पूर्णम्।

॥ ॐश्रीवीतरागाय नमः ॥

२३ ॥ बाईस परीषह ॥

॥ रत्नचन्द कृत ॥

सवैया इकतीसा।

क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशकादि नग्न, अरति, व स्त्री, चर्या, निषद्यावखांनिये। शय्या, आक्रोश, बधबंधन, त्रदलस हीयाचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, जानिये ॥ मलस्पर्श सत्कारतिरस्कार प्रज्ञा कही एकबीस अज्ञान यह अनुमानिये। अदर्शन सहित ये बाईस परीषह भेद भिन्न २ कहूं अब सूप उर आनिये ॥

१ क्षुधा परीषह छन्द परमादी।

पाखमान उपवास ठानत श्रीमुनिराई। धारैं अति दृढ़ ध्यान क्षुधा सहैं अधिकाई ॥ सूकैं गल और बांही तनपिंजर हो जाई। तब भी चिगते नाहीं वन्दूं तिनके पांई ॥

२ तृषा परीषह। पुनः।

लागे प्यास अपार ग्रीष्म ऋतु के मांही। कोपै उर अति पित्त सूकै कंठ तहां ही ॥ ध्यान सुअमृत सींच तीक्ष्ण तृषा निवारै। चलै चित्त तिन नांहि तिन पद

हम सिर धारैं ॥ ३ शीतपरीषह।

शीतकाल के मांहि जगजन कंपैं सोई। तरवर कानन माहिं हिम सो सूखैं जोई। वहै जु झंझा वाय सर सरता तट ठाढ़े। बाधा सहैं अपार ते मुनि ध्यान हि माढे ॥ ४ उष्ण परीषह।

ग्रीष्म ताप प्रचण्ड मारुत अग्नि समाना। सूखैं सरवर नीर दुख को नांहि प्रमाना ॥ सैल शिखर मुनि ध्यान धारैं कर्म नसावैं। सहैं परिषह उष्ण तिन के हम गुन गावैं ॥ ५ दंशमशक परीषह।

दंशमशक अहि व्याल पीड़ैं तन बहुतेरे। मृगपति भल्लक स्याल वृश्चिक और गुहेरे॥ सहत कष्ट इमिघोर लौ निज आत्म लागी। दंशमशक इहि भांति जीतत ते बड़भागी॥ ६ नग्न परीषह।

लोकलाज सब छांड़ विहरति नग्न महीपै। धरैं दिगम्बर रूप हीये विकार नहीपै॥ शील सव्रत दृढ़ लीन ध्यावत ते शिवनारी। निर्भय वाल समान तिन प्रति धोक हमारी॥ ७ अरति परीषह।

उपजै काल जु आई जो कहुं देश मझारा ॥तौ जगवासी जीवविकलप करे अपारा। धीरज तजहिं न

साध ते परमात्म ध्यावें ॥ विजई अरति परीष वे गुरु शिवपद पावें ॥

८ स्त्री परीषह । छन्दहरी गीता ।

जे शूर पन्नग को गहें कर पकर मृगपति को रहें । वक्र भौंह विलोकिजिन की कोटि योधाभय गहें । रूप सुन्दर जोषिता युत करति क्रीड़ा मन रमें । ते साधु निश्चल कनक नग सम तिनहीं के हम पद नमें ॥

९ चर्य्या परीषह ।

चार कर सोधत सुपथ ते दृष्टि इत उत नहिं करें। महा कोमल पाद जिन के कठिन धरती पर धरें ॥ चढ़त ते हय नाग शिवका तास यादि न लावेंहीं । सहें चर्य्या दुःख वह गुरु तिन हि हम सिर नावेंहीं ॥

१० निषद्या परीषह ।

शैल सीस समान कानन गुफा मध्यवसें सदा । तहां आन उपजहि कष्ट कौनहु कर्म योगन तें तदा । मनुष सुर पशु अरु अचेतन बिपत आन सतावें ही । ठौर तजि नहिं भजें ही थिर पद निषद विजयि कहावेंहीं॥

११ शय्या परीषह ।

हेम महलन चित्रसारी सेज कोमल सोवते । विकट

वन में एकले ह्वै कठिन भुव तह जोवते। गडत पाहनखंड अतिही तास को कायर नहीं। ऐसी परीषह सयन जीतन नमों तिन के पद तही।

१२ आक्रोश परीषह।

जगत जन मुनि देखिकै तिन दुरवचन भाषे कुधी। पाखंडी ठग अति है जुतस्कर मारिये यह दुरबुधी। वचन ऐसे सुनत जिन के तिना ढाल जु ओढ़ें हीं। तिन ही के हम पद सुपरस हिं मान मद जे छोड़ें हीं॥

१३ वधबन्धन परीषह।

गहैं समता भाव सब सों दुष्ट मिलि मारैं जिन्हें। बांधई पुनि खंभ सों ले अग्नि में जारैं तिन्हें॥ करति कोप कदाचि नाहीं पूर्व कर्म विचारैं हीं। सहैं वधबन्धन परीषह ते सकल अघटारैं हीं॥

१४ याचना परीषह।

रोग कवहु जो आनि उपजै तन सकल दुरबल भयो। नसाजाल जु रुधिर सूखे अस्थि चाम सु रहिगयो। सहैं धीर जु कष्ट वे मुनि महा दुद्धर व्रत धरैं॥ असन भेषज पान आदिक याचना कभु ना करैं॥

१५ अलाभ परीषह ।

एक वार अहार वरियां मौन ले वस्तीधरें । जो मिले नाहि योग भिक्षा तौ न खेद हियें लसें। भ्रमत वहु दिन वीत जांई भावना भावें खरे । सो अलाभ परीष वि-जई ते सु सिवरमनी वरे ॥

१६ रोग परीषह । पद्धरी छन्द ।

तन वात पित्त कफ रक्त आदि । बाढ़ें तन जब वहु लहि विषाद ॥ ते सहें वेदना मुनि अगाध । आतम सु लीन मैं नमो साध ॥

१७ तृणस्पर्श परीषह ।

तीक्ष्ण कांटे कंकर अपार । सूखे तृण तिनके पग वि-दार ॥ रज उडि लोचन में परहि आय। काढ़ैं न, न चाहें पर सहाय ॥ १८ मल परीषह ।

जल न्हौन तजो जावत सु एव । पुनि चलै अंग में बहु पसेव । उठि कै जु धूल लिपटै सुअंग । तिनके सु-भाव वरते अभंग ॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह ।

जे विद्या निधि विजई महान । चिर तपसी गुनको

नहिं प्रमान ॥ नहि करहि विनय तिन की जु कोय । तो विकलप उर आनें न सोय ॥

२० प्रज्ञा परीषह हरिगीता छन्द ।

तर्क छन्द जु व्याकरण गुन कला आगम सब पढे । देखि जाकी सुमति वादी विलष लज्यो में गढे । सुनत जैसे नाद केहर बन गयन्द जु भाजही । महामुनि इमि प्रज्ञा भाजन रंच मद नहिं छाजही ॥

२१ अज्ञान परीषह ।

करो दीरघकाल बहु तप कष्ट नानाविधि सहो । तीन गुप्ति सम्हार निश दिन चित्त इत उत नाहि वहो। अवध मनपर्य्य जु केवल ज्ञान अज हूं नहि जगे । तजै इहि विधि साधु विकलप ते सुनिज आत्म पगे ॥

२२ अदर्शन परीषह ।

काल बहु व्रत नेम पाले सावधान रहे सदा । होय तप सो सिद्ध शिव की भूठ सो लागे कदा ॥ यह भाव मुनि उरमें न आने परम समता धारेंहीं । सो अदर्श परीष विजई सकलकर्म निवारेंहीं ।

परीषह उदय सवैया ।

ज्ञानावर्णी के उदय प्रज्ञा व अज्ञान युग्म दर्शना

वर्षो तें अदर्शन वखानिये । अन्तराय के प्रकाश उपजै अलाभ जास वरनो चारित्र मोह सातों ठीक ठानिये । नग्न निषद्यारति स्त्रीक्रोस याचना सत्कार तिरस्कार जु एकादश आनिये । एकादश बाकी रही वेदनी उदय से कही बाईस परीषह सब ऐसी भांति मानियें ।

अडिल्ल ।

एक वार इन मांहि एक मुनिकै कही । सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवें सही । आसन सयन विहार दोय इन मांहिने । शीत उष्णमें एक तीन ये नाहिं ने ॥

ओं श्रीवीतरागाय नमः ।

(२४) बाईस परीषह ।

नन्दलाल कृत ।

॥ लावनी ॥

१ क्षुधा परीषह ।

थिर अचल मेरु सम रहैं परीषह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥ टेक ॥ षष मास व्रती मुनिराज असनके काज नगर में आते । विधि योग मिलै नहीं जोय फिरें हैं सोय नहीं विल लाते ॥ सहैं दुःख से वेदना भूख जाय तन

सूख खड़ नहीं लाते ॥ निज पौरुष सा कर यतन करें तप कठिन सीस हुन जाते ॥

२ तृषा परीषह । झड़ी ।

ग्रीष्म ऋतु गरमी भारी । तन दह दाह दुख कारी । तप तपैं तपो व्रतधारी । फिर रैन छाई अंधियारी ॥

३ शीत परीषह । शेर ।

सरदी समय सर ताल गिर पर बरफ ऊपर छा रहे । धर ध्यान तटनी तट प्रभु चौपट नित आतम ध्या रहे । जब जीव सब आवास कर ऋतु सरद से घरा- रहे ॥ नहीं शीत सो भय भीम तप में आप सो सुखिया रहे ॥ ४ ग्रीष्म परीषह । ढाल

तपै ऋतु ग्रीष्म ऊपर भान । बाय जिम लागै ती- ब्रबयान । तपै भू तेज अग्नि समान । पशु पंछी जा बैठे छांन ॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे सब ताल सरोवर सूके । सुन प्यारे मुनि तपैं शिखर गिर जूके । सुन प्यारे प्रभु ध्यान अग्नि अरि फूंके ॥ शेर ॥ तबैं काया सेती ममत निज- चेती सतमति ॥ विभौसारी त्यागी परम बैरागी शुभ गति ॥ बराजोरी कर ठानैं करमरिपु भानैं दृढ मति । जपूं ऐसे ज्ञाता को मैं मस्तक निवाता वरजति ॥

५ दंशमशकादि परीषह ॥ चौपाई ।

डांस मासमाखी तन फारे । लिपटे बिषियारे अलि कारे ॥ सिंह स्याल गज राज दुखारे । देत कष्ट विन दे-खाभारे ॥ तोड़ ॥ इस सहैं परीषह नाथ न मोड़ें गात दयाचित आनी । थिर अचल मेरु सम रहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥

६ नग्न परीषह । तोड़ ।

जब गृह बीच थे भूप संवारे थें सब कारज तन के । तन तनक उघारा जान शंक चित आन लजे जगजनसे । सो लख असार संसार परम पदधार रहे मगन से । सहैं नग्न परीषह सार लहैं अविकार मुनि धन धन से ॥

७ रतिअरति परीषह । झड़ी ।

द्रव्य इष्टअनिष्ट निहारी । लख इन्द्रिनको दुःखकारी ॥ नहीं खेदलहैं व्रतधारी । धर ध्यान रहैं अविकारी ॥ दोहा ॥ राग दोष नहिं परसहैं अरति परीषह जीत । ते गुरु मेरे उर बसो, शुद्ध परम परतीत ॥

८ स्त्री परीषह । शेर ।

सुरसुरी मानुष्यनी तिरयंचणीचित्राम की । लख त्रि-या चहुं बिधि न उपजे रंच इच्छाकाम की । मिलनेकी जिनको जो है गी आशा मुक्ति धामकी ॥ शीलव्रत-

धारी सो श्रीमुनि वन्दू मैं परनाम की ॥

९ चर्या परीषह । ढील ।

पुरुष पथ प्रथम देख कर चाल । चलैं मुनि नीची दृष्टि निहार । नरम पग कठिन भूमि आधार । नहीं बाधा करते मन में ॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे जे गज रथ घोटक चाले । सुन प्यारे ते पांवन चलैं दयाले । सुन प्यारे पर रहे नग्न पग छाले ॥–१० थिर परीषह । चौपाई ।

गुफा मसान गिरन वन माहीं । ध्यान धरैं जर मनता नाहीं ॥ लख निर्दोष जगह जम जाहीं । डिगै न चाहे डिगावो काहीं ॥ तोड़ ॥ दृढ़ जीव द्रव्य पहिचान तजैं नहिं थान मुनीश्वर ध्यानी । थिर अचल मेरु सम रहैं परीषह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥

११ शय्या परीषह । तोड़

जो सोवैं थे सुख सेज इतर आमेज सुफल फूलों में । ते सोवैं भूम कठोर कांकरी कोरगड़ें नित तनमें । इक आसन अचल शरीर रहैं थिर धीर पड़ें पाहन सें । यों कठिन परीषह जीत भये जिन मीत नमूं तिहूं पन में ॥

१२ कुवचन परीषह । झड़ी ।

मुनिजन जग को सुखदाई । बिन कारण बन्धु भाई जिनै देख दुष्ट अन्याई । दुर्वचन कहैं मन आई ॥ दोहा॥ ऋषी भेष कोई चोर ठग कहे कोई कपटेश । धन्यमुनि यह वचन सुन क्षमा तजें नहिं लेश ॥

१३ वधबन्धन परीषह । शेर ।

रिपु से मीमुनि होय निर्भय उर में समता धारते । दुष्ट तिनको बांध लाठी लात मुक्का मारते॥ पर बन्धते ठूंठा समझ चेतन गिनै उपकार ते । सामर्थ्य ही बन्धते न सहैं ते क्रोध जो नहीं धारते ॥

१४ अयाची परीषह । ढील ।

घोर तप करैं तपी तप धाम । गयो गलसूख छांह और घाम । अस्थि पर नहीं मास को नाम । प्रकट नस जालभयो तन में ॥ झड़ी॥ सुन प्यारे औषध अन्नादिक पाना । सुन प्यारे मांगे न डिगे चाहे प्राना । सुन प्यारे मुनिअयाचीक व्रतमाना ॥

१५ अलाभ परीषह । चौपाई ।

भोजन समय एक वर मौनी । बस्ती में जाते अघवौनी ॥ जो विधि जोग मिले नहीं होनी । तौ फिर क्या

न धरैं गुर मौनी ॥ तोड़ ॥ यों अभय भवित सब जाल भावना भात अषेधन ध्यानी। थिर अचल मेरु समरहैं परीषपह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥

१६ रोग परीषह । तोड़ ।

कफ शोणित पित उत्पात कठिन अधिकात वेदनालाते। कष्टादिक रुचिसों लीन जगत जन दीन अति विललाते धन मुनी मेरु सम धीर सहैं यह पीर सीस हम नाते। निज पर सों प्रीत न जान रोग उलहान सुधन गुणगाते

१७ तृण फांस परीषह ॥ कड़ी

तीक्ष्ण कांटे तिन कोरे । पग लगन कांकरी फोरे ॥रज उड़ आंखन में बोरे । तीर आदि फांस तन तोरे ॥ दो० तो भी न काढ़ैं हाथ से चहैं न पर उपकार । विजयी परीषह यों सहैं, पर सन्मुख सुखधार ॥

१८ ग्लानि परीषह । शेर ॥

जिस तन के चन्दन मुश्क तेलादिक लगैया आन के। तिस तन को नांगा कर दहैं तपकर बचैं अस्नान से ॥

१९ मान अपमान परीषह । ढोल ।

विजय की विथा न मनमें मान शांत रस रसिया गुण की खान । न तिन की विनय करत अज्ञान । मूढ़ शठ

तनक न मन सोचे ॥ झड़ी ॥ सुन प्यारे सत्कार परीषह हाने । सुन प्यारे ते गुरु हमने पहिचाने ॥

२० प्रज्ञा परीषह । चौपाई ।

तर्क छन्द व्याकरण वखाने । आगम अलंकार पढ़ जाने जिन्हें देखवादी भय मानें । ज्यों हैं मुनिवर सब गुण खाने ॥ तोड़ ॥ यों प्रज्ञा परीषह हान करें नहीं मान अगल हिल हानी । थिर अचल मेरु सम रहें परीषह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी ॥

२१ अज्ञान परीषह । तोड़ ।

तप संयम चारित्र पाल गंवायोकाल गुप्ति तिहुं पाली नहीं अवधलई सुख दान न केवल ज्ञान हुं अब तक खाली ॥ यह करत न विकलप मील धरम सों प्रीत न तजते लाली । अज्ञान परीषह जीत राग तज वीत काया घट पाली ॥ २२ अदर्शन परीषह । झड़ी ।

मैं घोर किया तप भारी । नहीं भया कोई व्रतधारी यो सुनयत ग्रंथ संझारी । तप से ऋद्धि सिद्धि सुखकारी ॥ दोहा ॥ सो कुकलागे झूठसी, यह नहीं चिंतत रंच । विजय अदर्शन ते मुनि, पूजूं छोड़ परपंच ॥

शैर।

यों सहैं बाईस परीषह परम गुरु पद धार कै। सूत्रके अनुसार मैं भाषैं परम हितकार कैं। वीनती गुनियों से है यह भूल चूक सुधार कैं। शोधकर द्यो शुद्ध मुझ को बाल बुद्धि निहार कैं॥ ढील॥ आप तिर तारे भविजन आन॥ भवो दधितारण तरण सुजान॥ धर्म दशधार धरैं सुर ज्ञान। लगी लौ जिन की शिवपुर से॥ झड़ी सुन प्यारे अठवीश मूल गुण धरते। सुन प्यारे नहिं तन सो ममता करते॥ चौपाई॥ अब दरशन प्रभु हमको दीजे। करम रोग को दूर करीजे॥ जगत् बन्धु से भिन्नता कीजे। अरज मेरी यह ही सुन लीजे॥ तोड़॥ यों नमत जोड़ नन्दलाल करो प्रतिपाल महिमा बखानी थिर अचल मेरु सम रहैं परीषह सहैं मुनीश्वर ज्ञानी॥

इति बाईस परीषह सम्पूर्णम्।

२५ प्रश्नोत्तर॥

श्री नेमनाथ जी और राजलजी के॥

विनवै उग्रसेन की लाडलडी करजोर के नेमिके आगे खड़ी। तुम काहे पिया गिरनार चढे हमसेती कहोकहा

चूक पड़ी ॥ यह समय नहीं पिय संयम को तुम काहे को ऐसी चित धरी । कैसे बारह मास बितावोगे तुम समझावो मोहि को सगरी ॥ १ ॥

तुम आगे अषाढ़ में क्यों न लिया व्रत काहे को एती बरात बुलाई । छप्पन कोड़ जुड़े यदुवंशी व्याहन आये निशान बजाई ॥ संग समुद्रविजय बलभद्र मुरारिहु को तुम्हें लाज न आई । नेमिपिया उठ आवो घरै इन बातन में कहो कौन बड़ाई ॥ २ ॥ बड़ाई कहा करिये सुन राजल जीवन है निश को सुपनो । सुत बन्धु वधू सब जात चले जल बून्द जैसे तन है अपनो । दिन चारक के महमान सबैं थिरता न कछू सब है खिपनो । तिहतैं यह जान अनित्य सबैं हमरे अब सिद्धनको जपनो॥३॥

पिया सावन में व्रत लीजे नहीं घनघोर घटा जुर आवेंगी । चहुं ओर तें मोर झकोर करैं बन कोकिल कहक सुनावेंगी ॥ पिय रैन अंधेरी में सूझै नहीं कछू दामन दमक डरावेंगी । पुरवाई की झोक सहोगे नहीं छिन में तप तेज छुड़ावेंगी ॥ ४ ॥ या जीव को कोई न राखनहार कहो किसको शरणागत जैये । काल बली सब से जग में तिस से निशवासर देख डरैये ॥ इन्द्र

नरेन्द्र धनेन्द्र सबै जब आन परै तब बांध बधैये । यातैं कहा डर सांवल को सुन राजल चित्त को यों समझैये ॥ ५ ॥ पिय भादव की बरषा बरषै कैसे दिन रैन भ-वांवोगे । चहुं ओरतैं पौन झकोर करे तब क्यों कर बूंद बचावोगे । घर ही क्यों न आय के योग करो बन में बहुते दुःख पावोगे । कहे राज मती पिय मान कह्यो शिव सुन्दर यों नहीं पावोगे ॥ ६ ॥ या जग में सुख नैकन राजल दुःख में काल अनंत गंवायो । योनिहिं लाख चौरासी फिरेगत चारूं ही जाय महा दुःख पायो । रोग ही शोक वियोग भरे फिर आसन नरक अनेक सतायो । भादवकी बरषा छिन में हम नरक निगोदन में फिर आयो ॥ ७ ॥ पिय लागेगो मास असोज जबै तब शीतल वृन्द सुहावेगी । कितहूं गर्जे कितहूं बरषे कितहूं दुति चन्द दिखावेगी ॥ छिण वायु बहे छिण ग्रीष्मता छिण में ऋतु तीन जनावेगी । कहे राजमती पिय मान कह्यो छिन ही छिन चित्त डुलावेगी ॥ ८ ॥ कैसेक चित्त डुलै सुन राजुल एक से एक समाधि लगावे । एक फिरे तिहूं लोक में हंडत एक बिना फिर एक न पावे ॥ जाय जहां तहां है एकलो इकलो बिढ़वै इकलोई गंवावे । आवत जात अकेलो रहै यह आदि

अनादि अकेलो ही ध्यावे ॥ ९ ॥

पिय कातिक में मन कैसे रहै जब भामिन भौंन बनावेंगी। रचि चित्र विचित्र सुरंग सबै घर ही घर मंगल गावेंगी ॥ पिय नूतन नार सिंगार किये अपनो पिय टेर बुलावेंगी। पिय बारहिबार बरे दियरा जियरा तुमरा तरसावेंगी ॥ १० ॥ तो जियरा तरसै सुन राजल जो तन को अपनो कर जाने। पुद्गल भिन्न है भिन्न सबैं तन छाड़ि मनोरथ आन समाने ॥ बूड़ेगो सोई कलिधार में जड़ चेतन को जो एक प्रमाने। हंस पिवे पय भिन्न करे जल सो परमातम आतम जाने ॥ ११ ॥

हिम की ऋतु आवेगी नाथ जबै तब शीतल पौन सुहावेगी ॥ सब शीतल नीर समीर लगै तन अरुवर भीत जनावेगी। सब भोजन पान सुहान लगे सगरे तनताप बुझावेगी ॥ कहे राजमती अगहन जबै ऋतु नायक लायक आवेगी ॥ १२ ॥ यह देह अपावन खेह भरी सुन राजल यामें कहा थिर है। यह चामकी चादर ओट दिये इस में कसकीटन को घर है ॥ यह मूतन पीव परीख भरी यह हाडर पिंजर को घर है। तिस तैं इस का हम नेह तज्यो हम को अब शीत को का डर है ॥ १३ ॥

पिय पौष में जाड़ो परैगो घनो बिन सौड़ के शीत कैसे भर हो। कहा ओढ़ोगे शीत लगै जब हो किधौ पातन की धुवनी धर हो॥ तुमरो प्रभु जी तन कोमल है कैसे काम की फौजन सो लरहो। जब आवैगी शीत तुरङ्ग सबै तब देखत ही तिन को डर हो॥ १४॥ आ-स्रव होय जहां पर शोभित शीत लगै और पौन झ-कोरै। इन्द्रिय पंच पसाय जहां तहां रागरुद्वेष सो नातो ही जोरै॥ आठ महामद मांते रहैं परद्रव्य को देख जहां चित्त दौरै। जो पर आप विचारन राजल तो गृह आपनैं आप ही बोरै॥ १५॥

पिय माघ तुषार परैगो घनो तब पाथर ते परिहो गिरकै। यह मानुष देह कहा वपुरी बिन अंबर शीत नहीं ठरकै॥ कि न पावक होय सहाय जहां नहीं शीत तुषार नहीं हरकै। राजमती उठ मान कह्यो जु सनैसिर योग लियो फिरकै॥ १६॥ संवर अंबर में रह राजल शीत तुषार अनन्त बचाऊं। रागद्वेष बयार बहै तब छाय क्षमा तन गानि छवाऊं। इन्द्रिय पांच नि-रोध किये करुणा करके मद आठ गवाऊं। आप लखौं

परद्रव्य तजों समता गहिके मन को समझाऊं ॥ १७ ॥
लागेगो फागुन मास जबै तब गावेगी चहुंओर तें होरी। केसर की पिचकारी लिये कर फैंकें गुलालन की भर झोरी ॥ गावत गीत धमार बजावत ताल, मृदङ्ग लिये डफ गोरी। भूलोगे पिया तब बात सबै जब खेलन आवेंगी सब होरी ॥ १८ ॥ हम होरी खेलें सुन राजलयों अपने घर ऐसे खेल मचाऊं। पांच सखी अपने संग लेकर द्वादश भान्त के नाच नचाऊं ॥ पांच सखी अपने संग लेकर निर्जरा से सब कर्म जराऊं। खेल रचों शिव सुन्दर सों मैं तो आठहि कर्म की धूल उड़ाऊं १९
पिय लागेगो चैत बसंत सुहावनो फूलैगी बेल सबै बनराई। फूलेगी कामन जाको पिया घर फूलेंगे फूल सबै बनराई ॥ खेलहिंगे ब्रज के बन में सब बाल गोपाल कुंवर कन्हाई। नेमि पिया उठ आवो घरै तुम काहे को करहो लोग हंसाई ॥२०॥ तीनहुं लोक को जानें सबै पुरुषाकर चौदह राज ऊंचाई। ताके कहूं घनाकार सबै तीन से तेतालीस है चौराई ॥ वात बलैन सौं वेढ्य रह्यो हरता करता न कोई ठहराई। यह आदि अनादि से आयो चल्यौ सुन राजल या में कहा है हंसाई ॥ २१ ॥

पिय मास वैशाख की ग्रीष्मता ऋतु शीतल नीर को प्यास लगैगी। क्यों गिर पै रहो नाथ मेरे अति घाम परै सब देह दहैगी॥ ऐसे कठोर भये कब तैं ममता तजके सब प्रीति पगैगी। नेमि पिया उठ आवो घरै कुछ एकहि बार न सिद्धि जगैगी ॥ २२ ॥ धर्म से सिद्धि नजीकहे राजल धर्म्म किये तैं कहा नहीं आवैं। धर्म तैं इन्द्र नरेन्द्र धनेन्द्र सुरेन्द्रन का सब ही पद पावैं॥ धर्म सुदर्शन ज्ञानचरित्र करे तिहतैं शिव सर्व पावैं। धर्म महंत वही जग में जहां जीव दया तहां धर्म कहावैं॥ २३ ॥ धर्म की बात तो सांची है नाथ तपै जेठ में कैसे धर्म रहैगो। लूह चलैं सरबान कमान ज्यों घाम परै गिर जेठ दगैगो॥ पक्षी पतङ्ग सबैं डरहैं अपने घर को सब कोई चहैगो। भूख तृषा अति देह दहे तब ऐसो महाब्रत क्योंन बहैगो॥ २४॥ दुर्लभ है नर को भव राजल दुर्लभ श्रावक योनि हमारी। दुर्लभ धर्म जुहै दश लक्षण दुर्लभ षोडश भावना भारी॥ दुर्लभ श्री जिनराज को मार्ग दुर्लभ है शिव सुन्दर नारी। यह सब दुर्लभ जान तबैं जब दुर्लभ है सन्यास की न्यारी

॥ २५ ॥ बारह मास जे पूरे भये तब नेमिहि राजलजाय
बुझाये । नेमिहि द्वादश भान्ति तबैं उठपीछे सों राजल
को समझाये ॥ राजल ने तब संयमले सब निर्जरा के
बहुधर्मजराये । राजल के पति नेमि जिनेश्वर उत्तर
लालविनोदी ने गाये ॥ २६ ॥

॥ इति सम्पूर्णम् ॥

२६ नेमि व्याह, खेमचंद कृत ।

दोहा—समुद्रविजय यादवनृपति तिन सुत नेमिकु-
मार । जूनागढ़ व्याहन चले उग्रसेन दरबार ॥१॥ रेखता॥

साजे गजराज बांध व्याह को चले । यादव बहुरंग
संग साथ हैं भले ॥ नाचैं बहुविधि अनेक बाजे बाजे ।
खग पशु बिललायं कहो किसके काजे ॥ तिनकी पुकार
सुनी करुणा आई । कारण यह बात कहो कौन सुनाई
सारथी पुकारे सुन साहिब मेरे । इन सब का घात
होय कारण तेरे ॥ १ ॥ दोहा ॥

सुनत बात ठाड़े भये जीव दये छुड़वाय । इन अप-
राध क्षमा करी लिलियो बिछुड़े आय ॥ ॥रेखता॥

उतर आप रथ से सब जीव छुड़ाये। हमरे इस काम
प्राण बहुत सताये ॥ डारे अपके उतार कंकण तोड़े ।

छोड़ो संसार प्रेम तप से जोड़ो ॥ छोड़े सब तात मात बात विचारी । छोड़ घर द्वार सबे राजुल नारी ॥ छोड़े सब भोग योग चित में दीनों । चढ़ के गिरिनारि महाव्रत को लीनो ॥ २ ॥ दोहा ॥

सुधि पाई धाई गई राजुल करति पुकार । नेमि पिया गिरि को गये कौन उतारे पार ॥ रेखता ॥

किया किन प्रपंच बात कौन यह भई । कौन हेतु दिक्षा इस वयस में लई ॥ तीर्थंकर प्रथम और बहुत तो भये । करके तिन भोग योग जाय फिर लये ॥ जैहों पिय पास सुनों बात हमारी । हमरे भर्त्तार मोह बिछुड़न डारी ॥ भई मैं उदास आस पति की लागी । जाऊं गिरिनारि आस सब की त्यागी ॥ २ ॥

दोहा—धैर्य घर मेरी धिया मत मन में पछिताहि । सुन्दर सो वर ढूंढ़ि के ताको देउ विवाह ॥ रेखता ॥

ढूंढो भूखंड नगर द्वीप घनेरे । ढूढ़ों भूचार खूट कारण तेरे ॥ विप्र को बुलाय फेर लग्न लिखाऊं । नोतों सब भूप व्याह फेर रचाऊं ॥ लीनों उन योग जाय कहा तो भई । अपने घर आय बैठ मानले कही ॥ रूप को

निधान देख गुण को भारी। ताको परनाय देउं राजुल प्यारी ॥ ४ ॥ ॥ दोहा ॥

कहिये बात बिचार के सुनिये तात सुजान। बात कहत ऐसे लगो दाहत हो मो प्राण ॥ रेखता ॥

काहे मति चालि गई तात तुम्हारी। आवै ना लाज कहत मुख से गारी ॥ तुम्हरे परिणाम और सब को मानो। मेरा भर्त्तार एक यदुपति जानो। लिखी जो ललाट नहीं मेटै कोई। जैसी कछु होनहार तैसी होई॥ बोलते कुबोल सुनो कैसे नेरी । कहीं गिरनारि बात सुन ले मेरी ॥ ५ ॥ दोहा ॥

लगनि लगी प्रभु नेमि से चित्त धरे ना धीर।
जैसे मीन पपीहरा तड़फत है बिन नीर रेखता ॥

ल्यावे प्रभु को मनाय जग मेंकोई। ताकी बहुभांति भांति कीरति होई ॥ लागी मो प्रीति कछू और न भावे। मेरा भरतार कोई आन मिलावे॥ अब तो तहां जाउं जहां नाथ हमारे। चाली उस पन्थ जहां कन्थ पियारे ॥ पक्षी पशु जंतु कछू देखत नाहीं। चालीं प्रभु पास धसी बनके माहीं ॥ ६ ॥

दोहा—गिरन पर्वत धाई चलीं पहुंची गिर के पास।
प्राणरहे घट में खंगे नेमि पिया के पास॥
रेखता—पहुंची प्रभु पास लगी आस तुम्हारी। बोली जिन राज सुनो बात हमारी॥ लागो अपराध कहा मेरेतांई खोलो टुक नयन वचन बोलो साई॥ सुनी है पुकार नाथ जीवों केरी। ठाडी बिलखाउं बात सुनिये मेरी॥७॥ दोहा—आई तुम्हें चितारि के देखत भई निहाल कर जोड़ीं बिनती करीं हम पर होहु दयाल॥ रेखता।
छूजिये दयाल चलो नगर आपने। कीजे सब राज काज सुक्ख से घने॥ कीजे सब सुख सुभोग दिनके नारी। नातर पछिताउ याद करो हमारी॥ लागो प्रभु तुम से अतिप्रेम हमारो। मनमें दिन रात्रि जपों नाम तुम्हारो काहे अनबोल भये बोलत नाईं। कहति हों पुकार अर्ज सुनिये साईं॥८॥ दोहा॥
नेमि कुंवर उत्तर दियो सुनले राजुल बाल। राज करो सुख भोगवो हम गिरि से ना जाल॥ रेखता॥
अब तो तुम लौट जाव देश आपने। कीजो सब राज काज सुख से घने॥ छोड़ो घर जाउ सर्व आस हमारी। लीनो हम योग लगी मुक्ति पियारी॥ तोड़ी

मन चित्त से स्नेह हमारो। मानो यह सीख बाल चित्त विचारो ॥ जो थी भवतव्य भई सो तुम जानो। लौटो तुम अह बात हमारी मानो ॥ ९ ॥ दोहा।

राजमती उत्तर दियो सुन लीजे भर्त्तार। राज करो सुख भोगवो विनती सुनो हमार ॥ रेखता ॥

वारी है वयस अभी नाथ तुमारी। ऐसी क्या जान बात चित्त विचारी ॥ खांडे की धार योग जानिये सही। कैसे तप होय नाथ लो कही ॥ ऐसो मन में विचार हलो तुमारो। काहो मंजूर व्याह करो हमारो ॥ मांगत हों बात एक हम को दीजे। दूजिये दयालु और यश को लीजे ॥ १० ॥ दोहा ॥

नेमि कुमर उत्तर दियो सुन राजुल यह बात। भोग बुरे भव रोग हैं देखो सब संसार ॥ रेखता ॥

खोटे भव रोग भोग होत ये घने। देखो करके विचार चित्त आपने। सोवत ज्यों स्वप्न देखि नयन देखियो। तैसो संसार सबै सुख सुलेखियो। छोड़ी जग रीति प्रीति योग से भई। पायो तिन सुख सुमुक्ति कामिनी लई ॥ ऐसी हम जानी तब बात विचारी। मानो यह सीख सुनो राजुल नारी ॥ ११ ॥ दोहा

भोग भलो या योग है देखो इस संसार। वार वार वहु को कहो देखो चित्त विचार॥ रेखता॥

राजुल कर जोड़ कहै सुनो हमारी। आस तो निरास भई नाथ तुम्हारी॥ लागी वहु प्रीत नहीं छूटत साईं। अब तो हम जाय शरण किस के ताईं॥ दिक्षा निज देव सीख गहों तुम्हारी। बूड़ति भवसिंधु बांह गहो हमारी॥ लीनो योग साधि स्वर्ग सोलहे गई। अशुभ कर्म जालि सुगति देव की लई॥ १२॥

॥ दोहा॥

नेमीश्वर केवल लयो महिमा कही न जाय। गणधर पार न पावही कवि क्यों कहै बनाय॥ रेखता

आश्विनि सुदि एकम को केवली भये। आय चउ प्रकार देव चरण तल नये॥ रत्न मयी शमोशरण रचना कीना। भक्ति ठान सुरपद का लाहो लीना॥ सोहे श्याम रंग शंख लक्षण सूरे। इन्द्र कहे सहस्र नाम गुण के पूरे॥ कमलासन॥ तीन छत्र सिर पर सोहैं। शोक रहित देख २ सुर नर मोहैं॥ १॥ दोहा

दोष अठारह रहित प्रभु रहित सुगुण छालीस। चौसठि चमर विशाल अति ढोरत सुरपति ईश॥

॥ रेखता ॥

गावें सुर कंठ देव तूर बजावें। झालर मिरदंगताल बहुत सुहावें ॥ देवी सब देव करें नृत्य आय के। पूजत जिनराज अष्ट द्रव्य लाय के ॥ नाशि के अघाति चार शुद्ध परणये। आषाढ़ सुदी अष्टमी को मुक्त प्रभु भये॥ खेम तो बनाय कहैं सुक्ख खानी। तुम्हरी महिमा अपार जग में जानी ॥ १४ ॥ इति समाप्तम्।

२७ नेमि ब्याह, विनोदीलाल कृत।

॥ सवैया ॥

मौर धरो शिर दूलह के कर कंकण बांध दई कस डोरी। कुंडल कानन में झलकें अति भाल में लाल विराजत रोरी ॥ मोतिन की लड़ शोभित है छवि देखि लजैं बनिता सब गोरी। लाल बिनोदी के साहिब को मुख देखन को दुनियां उठ दौरी ॥ १ ॥ छत्र फिरे शिर दूलह के तब आरत ल्ल शिवादेवी मैया। कृष्ण फतें बलभद्र उतें कर ढोरत चमर चले दोऊ भैया॥ भूप समुद्र विजय सब संग चले वसुदेव उछाह करैया लाल बिनोद के साहिब की बनिता सब ही मिलि लेत बलैया ॥ २ ॥ गौंड़े गये जब नेम प्रभू प[illegible]

टेंच पुकार करी है। नाथ से नाथन के प्रतिपाल दयाल सुनो बिनती हमरी है॥ बन्दि पड़े बिललांय सबे बिन कारण बिपदा आनि परी है। पूछत लाल विनोदी के साहिब सारथी क्यों इन बन्दि भरी है॥ ३॥ सारथी ने कर जोड़ कही सुन नाथ इन्हे जु बिदारेंगे अब। यादव संग जुरे सबरे तिन कारण ये सब मारेंगे अब॥ अब इन के बच्चा बन में बिलपें इन को वे आज संहारेंगे अब। ताते तुम से फर्याद करें हमरी गति नाथ सुधारेंगे अब॥ ४॥ बात सुनी उतरे रथ से पशु पच्छिन की सब बन्दि छुड़ाई। जादो सबे अपने थल को हमरो अपराध छमा करो भाई॥ धृक है ऐसो जीनो जग में तब ही प्रभु द्वादश भावना भाई। देव लौकान्तिक आय गये जिन धन्य कहैं सब यादव राई॥ ५॥ प्रभु तो बिन ऐसी कौन करे औ को जग में यह बात बिचारे। कौन तजे सुत बन्धु बधू अरु को जग में ममता निर्वारे॥ को वसु कर्मनि जीत सके जनु आप तरे अरु औरन तारे। लाल विनोद के साहबने यश जीतलयो जनः जीतन हारे॥६॥ नेम उदास भये जब से कर जोड़ के सिद्ध का नाम लयो है। अम्बर भूषण डार

दिये शिर मौर उतार के डार दयो है। रूप धरो मुनि का जबही तबही चढ़िके गिरि नारि गयो है। लाल विनोदी के साहिब ने तहां पंच महाव्रत योगठयो है ॥ ७ ॥ नेम कुमार ने योग लियो जब होने को सिद्ध करी मन इच्छा। या भव के सुख जान अनित्य सो आदर एक उदंड की भिक्षा ॥ स्नेह तजो घरवार तजो नहीं भोग विलासन की मन शिक्षा। लाल विनोदीके साहब के संग भूप सहस्र लई तब दिक्षा ॥ ८ ॥ काहू ने जाय कही सुन राजुल तेरो पिया गिर नारि चढ़ो है। इतनी सुन भूमि पछार लई मानो तन सेती जीव काढ़ो है ॥ सो उग्रसेन से जाय कही सुन तात विधाता अनर्थ गढ़ो है। लाज सबे सुध भूल गई पिय देखन को जु उछाह बढ़ो है ॥ ९ ॥ लाड़ली क्यों गिरनारि चढ़े उस ही पति तुल्य सुधी वर लाऊं। प्रोहित को पठऊं अबही बहु भूपर के सब देश ढुढाऊं ॥ व्याह रचों फिर के तुम्हरो सहि मंडल के सब भूप बुलाऊं। लाल विनोदी के नाथ विना द्युतिवंत सो कंत तुम्है परणाऊं ॥ १० ॥ काहे न बात सम्हाल कहो तुम जानत हो यह बात भली है। गालियां काढ़त हो हम को सुनो

तात भली; तुम जीभ चली है ॥ मैं सब को तुम तुल्य गिनों तुम जानत ना यह बात रली है। या भव में पति नेमि प्रभू वह लाल बिनोदी को नाथ वली है ॥ ११ ॥ मेरो पिया गिरिनारि चढ़ो सुन तात मैं भी गिरि नारि चढ़ोंगी। संग रहों पिय के वन में तिनही पिय को सुख लाभ पढ़ोंगी ॥ और न बात सुहाय कछू पिय की गुणमाल हिये में सढ़ोंगी। कंत हमारे रचें शिव से शिव थान को मैं भी शिवा न गढ़ोंगी ॥ १२ ॥

॥ इति ॥

२८ आरती संग्रह।

प्रथम आरती ॥

यह विधि मंगल आरती कीजै। पञ्च परम पद भजि सुख लीजै ॥ टेक ॥ प्रथम आरती श्री जिनराजा। भव दधि पार उतार जिहाजा। १। दूजी आरती सिद्धन केरी। सुमरण करत मिटै भव फेरी।२। तीजी आरती सूर मुनिन्दा। जन्म मरण दुःख दूर करिन्दा। ३। चौथी आरती श्री उवझाया। दर्शन देखत पाप पलाया। ४। पांचवीं आरती साधु तुम्हारी। कुमति

विनाशन शिव अधिकारी । ५ । छट्टी ग्यारह प्रतिमा धारी । श्रावक बन्दों आनन्दकारी । ६ । सातवीं आरती श्रीजिन वाणी । द्यानत स्वर्ग मुक्ति सुखदानी । ७ ।

द्वितीय आरती ॥

आरती श्रीजिनराज तुम्हारी। कर्म दलन संतन हितकारी । टेक । सुर नर असुर करत तव सेवा । तुमहीं सब देवन के देवा । १ । पञ्च महाव्रत दुद्धर धारे । राग दोष परिणाम विडारे ।२। भव भयभीत शरण जे आये। ते परमार्थ पन्थ लगाये ॥ ३ ॥ जो तुम नाम जपै मन माहिं । जन्म मरण भय ताको नाहिं । ४ । समोशरण सम्पूर्ण शोभा । जीते क्रोध मान मद लोभा । ५ । तुम गुण हम कैसे कर गावैं । गणधर कहत पार नहिं पावैं ॥ ६ ॥ करुणासागर करुणा कीजे । द्यानत सेवक को सुख दीजे ॥ ७ ॥ तृतीय आरती ॥

आरती कीजे श्रीमुनिराजकी । अधम उधारन आतम काजकी ॥ टेक ॥ जा लक्ष्मीके सब अभिलाषी । सो साधन कर्दम वतनाषी । १ । सब जग जीति लियो जिन नारी । सो साधनि नागिनि वत छारी ।२। विषयन सब जग को वश कीने । ते साधन विषवत तज

दीने । ६ । भुक्तो राज चहत सब प्राणी । जीर्ण तृणवत त्यागो ध्यानी । ४ । शत्रु मित्र सुख दुख सम माने । लाभ अलाभ बराबर जाने ।५। छहों काय पीहर व्रतधारैं। सबको आप समान निहारैं । ६ । यह आरती पढ़ै जो गावैं । द्यानत मन वांछित फल पावैं ॥ ७ ॥

चतुर्थ आरती ॥

किस विधि आरती करों प्रभु तेरी । अगम अकथ जस बुध नहिं मेरी ॥ टेक ॥ समुद्र विजै सुत रज मति छारी । यों कहि थुति नहिं होय तुम्हारी १ कोटि स्तम्भ वेदी छवि सारी । समोशरण थुति तुमसे न्यारी २ चारि ज्ञान युत तिनके स्वामी । सेवकके प्रभु अन्तर्यामी ३ तुनके बचन भविक शिव जाहिं । सो पुद्‌गल में तुम गुण नाहिं ४ आतम जोति समान बताऊं । रवि शशि दीपक मूढ़ कहाऊं ५ नमत त्रिजग पति शोभा उनकी। तुम शोभा तुम में निज गुणकी ६ मानसिंह महाराजा गावे । तुम महिमा तुम ही बन आवे ॥

पञ्चम आरती ॥

यह विधि आरती करूं प्रभू तेरी । अमल अबाधित निज गुण केरी ॥ टेक ॥ अचल अखंड अतुल अ-

विनाशी । लोकालोक सकल परकाशी १ ज्ञान दरश सुख बल गुण धारी । परमात्म अविकल अविकारी २ क्रोध आदि रागादिक तेरे । जन्म जरामृत कर्म न नेरे ३ अ-वपु अबंध करण सुखराशी । अभय अनाकुल शिवपद वासी ४ रूप न रेख न भेष न कोई । चिन्मूरति प्रभु तुमहीं होई ५ अलख अनादि अनन्त अरोगी । सिद्ध विशुद्ध स्वआतम भोगी ६ गुण अनन्त किम वचन बतावे । दीपचन्द्र भव भावना भावे ॥ ७ ॥

[२९] होली संग्रह

(होली)

अब की मैं होरी खेलों सुमति से । यह मन भाय गई मेरे हटके ॥ टेक ॥ अनुभव गात्र दस सुख पिचकारी, तकि २ मारो कुमति घर हट के ॥ १ ॥ ज्ञान गुलाल थाल निज परिणति लालन लाल कुचाल पलट के ॥ २ ॥ प्रमुदित गात्र क्षमादिक सखियां दम साज मंदिर में खट के ॥ ३ ॥ नयो २ फाग नयो २ अवसर खेले हजारी क्यों भव भटके ॥ ४ ॥

(होली)

होरी रे मन तोहि खिलाऊं, चेतन राम रिझाऊं॥ अम्बर अंग करों अति सुन्दर भूषण भाव बनाऊं । कर्म

सवे बसु केसर घोरों गर्व गुलाल उड़ाऊं । भली विधि धूम मचाऊं ॥ १ ॥ चोआ चित्त करों अति सियरो हियरो अति जरद जड़ाऊं । ज्ञान के सागर में धसि के तहां ते सबरी गहि ल्याऊं । भली विधि मङ्गल गाऊं ॥ २ ॥ मन मृदङ्ग बजे मधुरी ध्वनि कर खन्माव बजाऊं । पञ्चसखी अपने संग लेके सुधूम धमार गवाऊं भली विधि सों निरताऊं ॥ ३ ॥ ऐसी होरी जे मुनि खेलें तिन पद शीस नवाऊं । आतारास करें विनती प्रभु भक्ति अभैपद पाऊं । तबे जिन दास कहाऊं ॥४॥

होली—जामें आवागवनवा की डोरी, हमारे की खेलै ऐसी होरी ॥ टेक ॥ हिंसादिक नित धाय २ के बहु विधि कर पकरोरी । पाप कींच बहु भांति लपेटत विषय कुरंग छिरकोरी ॥ १ ॥ कुमति कुनार डारि भ्रम फांसी बहुत करी बरजोरी । कर्म धूल अंग ल्यावत ल्यावत मोह असल कटोरी ॥ २ ॥ कषाय पचीस नृत्य कारिन संग गति २ नाचत चोरी । राग द्वेष दोऊ छैल छबीले देत कुमग की डोरी ॥ ३ ॥ यों चिरकाल खेलि जिय मानिक पाये दुःख करोरी । जैनधर्म परभाव भविक अब प्रीति सुपद सों जोरी ॥ ४ ॥ (होली)

खेलत फाग प्रवीना ॥ टेक ॥ दया बसंत सखा दश लाक्षण समकित रंग जु कीना । ज्ञान गुलाल चारित्र अरगजा शील अतर में भीना ॥१॥ ध्यानानल आस्रव होरी दावंध त्रपत कर खीना । निर्जर नेह मुकल धन फगुआ निज परणति को दीना ॥ २ ॥ गंगा मन आनन्द भयो है सब विकलप तज दीना । जिन सर्वज्ञ नाथ प्रभु आगे नाम निरन्तर लीना ॥ ३ ॥ (होली)

निज पुर में आज मची होरी ॥ टेक ॥ उमगि चिदानंद हरि जुरिआये उत आई सुमती गोरी ॥ १ ॥ करुणा केसर रंग बनाओ चारित पिचकारी छोरी ॥२॥ देखन आये बुध जन भीजे देखो फाग अनोखोरी ॥३॥

होली--अरे मत खेल खिलारी-फाग रचो संसारी ।टेक॥ काम क्रोध दोऊ छैल छबीले कुमति हाथ पिचकारी । पाप कीच बहु भांति भरी है देत वदन पर डारी ॥१॥ मोह मृदंग मजीरा मान मद लोभ तमूरा चारी । आसा तृष्णा निरत करत है लेत तान गति न्यारी ॥ २ ॥ पांच पचीस कामिनी घट में गावत मन सो गारी । झगड़ २ मिलि फगुआ मागत भाव बतावत भारी ॥३॥ खेलत खेल युग बहु बीते अब जिय भयो दुखारी । सेवाराम जैन हित होरी अब की बेर हमारी ॥४॥

॥ होली ॥

कहा वानि परी पिय तोरी-कुमति संग खेलत है निल होरी ॥ टेक॥ कुमति कूर कुबिजा रंग राचो लाज शरम सब छोरी। रागद्वेष मय धूलि लगावे नाचे ज्यों चकडोंरी ॥ १ ॥ अक्ष विषय रंग भरि पिचकारी कुमति कुत्रिय सरबोरी। जा प्रसंग चिर दुखी भये फिर प्रीति करत बर जोरी ॥ २ ॥ निज घर की पिय सुधि विसारि के परत पराई पोरी। तीन लोक के ठाकुर कहियत सो विधि सबरी बोरी ॥ ३ ॥ बरजि रही बरजो नहि मानत ठानत हठ वरजोरी। हठ तजि सुमति सीख भजि मानिक लो बिलसो शिव गोरी ॥ ४ ॥

॥ होली ॥

छांड़ि दे तूं यह सुधि भोरी-वृथा पर सो रत जोरी ॥ टेक ॥ जे पर हैं न रहैं थिर पोषत जे कल मल की झोरी। इन सों धारि ममता अनादि ते वंधे कर्म की डोरी। सहे भव जलधि हिलोरी ॥ १ ॥ बे जड़ हैं तूं चेतन ज्योंही आप बतावत जोरी। सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण तप इन सत्संग रचोरी ॥ सदा बिलसौ शिव गौरी ॥ २ ॥ सुखिया भये सदा जे नर जासों ममता

टोरी। द्दौल हिये अब लीजे पीजे ज्ञान पियूष कटोरी। मिटै भव व्याधि कठोरी ॥ ३ ॥

॥ होली काफी ॥

खेल मिडिल कैसी होरी मचाई ॥ टेक ॥ देशी रीति लिबास छांड़िके कोट लिये सिलवाई। खुले अगाड़ी कटे पिछाड़ी टोपी गोल जमाई। घड़ी आगे लटकाई ॥ खेल० ॥ १ ॥ बूटदेव को पहिन पांव में तनियां लीन्ह कसाई। बैठन नहिं पतलून देत है ठाढ़ें करत मुताई। धन्य अंगरेजी आई ॥ खेल० ॥ २॥ टेढ़ा डंडा हाथसाथ में बंड़ा श्वान सुहाई। गले गुलूबन्द कालर डटके मुख में चुरट दबाई। धुआं फक फक्क उड़ाई ॥ खेल० ॥ ३ ॥ घर में जा अंग्रेजी बोलें समझत नाहिं लुगाई। मांगें वाटर देती है रोटी, बोल उठे झुंझलाई। डमयू क्या ले आई ॥ खेल० ॥ ४ ॥ कौन बनावे रंग वसन्ती कौन गुलाल उड़ाई। स्याही की डबिया हाथ बुरुस है करते हैं बूट सफाई। छोड़ के सलेमसाई ॥ खेल० ॥ ५ ॥ सातो जाति मिडिल कर वैठे दूर भई पण्डिताई। गिट पिट मिस्टर होटल जावें मदिरा मटन उड़ाई। लेडी से आंख लड़ाई ॥ खेल० ॥ ६ ॥

इति सम्पूर्णम् ॥

(३०) प्रभाती संग्रह ।

(प्रभाती)

बंदों जिन देव सदा चरण कमल तेरे । जा प्रसाद सकल कर्म छूटत अघ मेरे ॥ टेक ॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन केरे । सुमति पद्म श्री सुपार्श्व चन्द्राप्रभु मेरे ॥ १ ॥ पुष्पदन्त शीतल श्रेयांस गुण घनेरे । वांसपूज्य विमल अनन्त धर्म जग उजेरे ॥ २ ॥ शांति कुंथ अरह मल्ल मुनि सोव्रत केरे । नमि नेमि पार्श्वनाथ महावीर मेरे ॥ ३ ॥ लेत नाम अष्टयाम छूटत भव फेरे । जन्म पाय जादोराय चरनन के चेरे ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

उठि प्रभात सुमिरन कर श्रीजिनेन्द्र देवा ॥ टेक ॥ सिंहासन झिलमिलात तीन छत्र शिर सुहात चमर फर हरात सदा भविजन भजेवा ॥१॥ मेटे श्री पार्श्व जिनेन्द्र कर्मके कटें जुफन्द अस्वसेनके अनन्द सांचा सुखदेवा॥२॥ बानीतिहू काल खिरे चतुवन पर दृष्टि परे नमत सुरनर मुनीन्द्रादिक चरन शीस नेवा ॥ ३ ॥ प्रभु के चरणार्विन्द जपत हैं जवाहर चन्द्र कर जोरें ध्यान धरें चाहत नित सेवा ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

पारस जिन चरण निरखि हरष ज्यों लहायो । चित-

वत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुनि घन घोर सोर मोर के न हरष और रंक निधि समाज राज पाय मुदित थायो ॥ १ ॥ ज्यों जन चिर क्षुधित कोय भोजन लहि सुखित होय भेषज मद हरन पाय आतुर हरषायो ॥ २ ॥ वासर धनि आज दुरित दुरे फिरे सुकृत आज सान्ताकल देखि महामोह तम बिलायो ॥ ३ ॥ जाके गुन जानन शोभानन भव कानन छमि जान दौल सरन आय शिव सुख ललचायो ॥४॥ (प्रभाती)

प्रातकाल मन्त्र जपो णमोकार भाई । अक्षर पैंतीस शुद्ध हृदय में धराई ॥ टेक ॥ नर भव तेरो सुफल होत पातिक टरजाई । विघन जासु दूर होत संकट में सहाई ॥ १ ॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्तामणि जाई । ऋद्ध सिद्ध पारस तेरे में प्रगटाई ॥ २ ॥ मन्त्र जन्त्र तन्त्र सब जाही के बनाई ॥ सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि आई ॥ ३ ॥ तीन लोक माहिं सार वेदन में गाई । जग में प्रसिद्ध धन्य मंगलीक भाई ॥ ४ ॥ (प्रभाती)

परणति सब जीवनकी तीन भांति बरणी । एक पुण्य एक पाप एक राग हरणी ॥ टेक ॥ जा में शुभ अशुभ बन्ध वीतराग परणति भव समुद्र तरणी ॥ १ ॥ छांड़ि

अशुभ क्रिया कलाप मत करो कदाचि पाप शुभ में न गमन होय अशुद्धता विसरणी ॥ २ ॥ यावत ही शुभोपयोग तावत ही मन उद्योग तावत ही कारण योग कही पुण्य करणी ॥ ३ ॥ भागचन्द्र जा प्रकार जीव लहे सुख अपार या को निराधार स्याद्वादकी उचरणी ४॥

(प्रभाती)

उठि प्रभात पूजिये श्री आदिनाथ देवा । आलस को त्याग जागि पूज विधि सेवा ॥ टेक ॥ जल चन्दन अक्षत प्रीति सन लेवा । पुष्प ते सुवास होय काम जरि जेवा ॥ १ ॥ नैवेद्य उज्वल धारि दीप रतन लेवा । धूप ते सुगन्ध होय अष्ट कर्म खेवा ॥ २ ॥ श्रीफल वादाम लोंग डोंडा शुभ मेवा । उज्जल धारि अर्घ पूजि श्री जिनेन्द्र देवा ॥ ३ ॥ जिन जी तुम अर्ज सुनो भवदधि उतरेवा । जैनदास जन्म सुफल भगति प्रभू एवा ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

ताण्डव सुरपति ने जहां हर्ष भाव धारी ॥ टेक ॥ रुनु रुनु रुनु नूपुर ध्वनि ठुमकि २ पैंजन पग झुन झुन झुन किन छबिलागति अति प्यारी ॥ १ ॥ अ न न न न सार दानि स न न न न न किंनरान अ घ घ घ गंधर्व सर्वदेत जहां तारी ॥२॥ पं पं पं पग झपटि फां फां

झं झ न न न न न वं वं मृदङ्ग बाजे वीना ध्वनि सारी ॥ ३ ॥ अ द द द द द विद्याधर दि दि दि दि दि दि देव सकल दास भवानी ज्यों कहें जिन चरनन बलिहारी ॥ ४ ॥

(प्रभाती)

निरखत जिनचन्द्र बदन सुपद सुरुचि आई ॥टेक॥ प्रगटी निज आन की पिछान ज्ञान ,भान की कला उद्योत होत काम यामिनी पलाई ॥ १ ॥ सास्वत आनन्द स्वाद पायो बिनसो विषाद आन में अनिष्ट इष्ट कल्पना नसाई ॥२॥ साधी निज साध की समाधि मोह व्याधि की उपाधि कों विराधि के अराधना सुहाई ॥ ३ ॥ धन दिन छिन आज सुगुन चिते जिनरायी। सुधरो सब काज दौल अचल ऋद्धि पाई ॥ ४ ॥

३१ जैन भजन संग्रह।

॥ ईमान ॥

नहीं रुचे और छवि नैनन में, तेरी शांति छवी मन बस गई रे ॥ टेक ॥ निर्विकार निर्ग्रंथ दिगम्बर देखत कुमति विनसि गई रे ॥ १ ॥ चिर मिथ्यातम दूर करन को चन्द्रकला सी दरश रही रे ॥ २ ॥ भानिक मन मयूर हरषन को मेघ घटा सी दरश रही रे ॥ ३ ॥

॥ खम्माच ॥

आज कोई अद्भुत रचना रची ॥ टेक ॥ समोशरण शोभा देखन को होडा मची ॥ १ ॥ खर्ग विसाल तले छवि जाके देखत भक्त खिची ॥ २ ॥ जिन गुण स्वादत रसिया परल की रीभन जात मची ॥ ३ ॥ नवल कहे ऐसी मन आवे हर्ष धार कर नची ॥ ४ ॥

॥ झंझोटी ॥

देखि सखी छवि आज भली रथ चढ़ि यदुनन्दन आवत हैं ॥ टेक ॥ तीन छत्र माथे पर सो हैं त्रिभवन नाथ कहावत हैं ॥ १ ॥ मोर मुकट केशरिया जामा चोसठ चमर दुरावत हैं ॥ २ ॥ ताल मृदङ्ग साज सब बाजत आनन्द मंगल गावत हैं ॥ ३ ॥ मोहनलाल आस चरनन की झुकि झुकि शीस नवावत हैं ॥ ४ ॥

॥ रागदेश ॥

आज जिनराज दरशन से भयो आनन्द भारी है ॥ टेक ॥ लहे ज्यों मोर घन गर्जे सुनिधि पाये भिखारी है तथा मो मोद की वार्त्ता नहीं जाती उचारी है ॥ ॥ १ ॥ जगत के देव सब देखे क्रोध भय लोभ धारी हैं तुम्हीं दोषावरण विन हो कहा उपमा तिहारी है ॥ ॥ २ तुम्हारे दर्शबिन स्वामी भई चहुंगति में खारी है।

तुम्हीं पद कंज नमते ही मोहनी धूल झारी है ॥ ३ ॥ तुम्हारी भक्ति से भवजन भये भव सिंधु पारी हैं। भक्ति मोहि दीजिये अविचल सदा याचक बिहारी है ॥४॥

॥ सोरठ ॥

ज्ञानी पिया क्यों बिसरे निज देश। कुमति कुरमिनी सौत संग राचे छाय रहे परदेश ॥ टेक ॥ अनंतकाल पर देशनि छाये पाये वहुल कलेश। देश तुम्हारो सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश ॥ १ ॥ भ्रम मद पाय छकाय रहो धन ज्ञान रहो नहीं लेश। दुखी भये विललात फिरत हो गति २ धरि दुरभेश ॥ २ ॥ यह संसार जानि लख सुख नहीं रंचक लेश। मानिक काल लब्धि पावस लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

॥ पिल्लू ॥

स्वामी मुजरा हमारों लीजे ॥ टेक ॥ तुम तो बीतराग आनंद घन हम को भी अब कीजे ॥ १ ॥ जग के देव सब रागी द्वेषी या से निज गुण दीजे ॥ २॥ आदि देव तुम समान को वेग अचल पद दीजे ॥ ३ ॥

॥ रेखता ॥

भगवान आदिनाथ जिन सों मन मेरा लगा। आरा म मुझे होत दुःख दर्श से भगा ॥ टेक ॥ मरु देवी नंद धर्म कंद कुल में सुर उगा। नृप नाभिराज के कुमार नसत सुर खगा ॥ १ ॥ युगला निवार धर्मको संसारको तगा। वसु कर्म को जराय शिव पंथ में लगा ॥ २ ॥ अब तो करो शिताब सिहरवान दिल लगा। कहेंदास हीरालाल दीजे मुक्ति का मगा ॥ ३ ॥

॥ गजल ॥

ख्याल कर दिल मझार चेतन अजब करम ने झला ई गतियां ॥ टेक ॥ निगोद बस कर सुबोध खोया त्रि-जग व नारक बनस्पतियां ॥ १ ॥ कभी मनुष्यवा कभी सुरगवा अनादिते दिन बिताई रतियां। यह दुःख भर २ यतीम हूवा न गौर कीं कहुं सुनाई वतियां। पड़ा हूं अब तो उसी के दर पर लगें हजारी नयन की पतियां २

॥ लावनी ॥

प्रभ भव सागर पार करो, मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥ टेक ॥ तुम्हीं हो नित्य निरंजन देव। करें इन्द्रादिक थारी सेव ॥ नाम से पाप कटें स्वयमेव। अरज चित

दीज हमरी एव ॥दोहा॥ तुम सुमरिन से नाथ जी कीजे हमरो काज। तुम देवन के देव हो लोक शिखिर महा राज ॥ जगत में तारन बिरद धरो । मेरे रागादिक० १ जन्म मरणादि अनल भारी । चरण धुलि करत सलिल झारी ॥ तासु मिटजात तापकारी । होत सुख अविच-ल अविकारी ॥ दोहा ॥ ऐसे तुम गुण अचिन्त वर ता सम कीजे मोय । मोहादिक अरि अति प्रवल तिन को दीजे खोय ॥ आज तुम देखत काज सरो । मेरे० ॥ २॥ कर्म वसु अगणित दुःखदाई । तासु वश ह्वै गति २पाई नरक औ निगोद भटकाई । गर्भ दुःख कहो नहीं जाई ॥ दोहा ॥ बीते काल अनन्त चिर लखो न तुम दृग सोय । अब मोलब्धि भई कारन तुम दरशन पायोजोय शरण लखि निर्बल मोह परो ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ तुम्हीं अतिदीन अधम तारे। किये बहुलन के निस्तारे ॥आज धन धन्य भाग म्हारे । बैन तुम गुण मुख उचारे ॥ दोहा ॥ तुम भ्राता तुम हीं हितू तुम माता तुम तात दुःख रूप भव कूप ते काढि लेव गहि हाथ ॥ हमारी शरण लयो तुम्हारो। मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥प्रभू०॥४॥

॥ ठुमरी ॥

तारण तरण तरण तारण प्रभु तुम तारण हम जानी॥ ॥ टेक ॥ तुम समान अब देव न दूजा मूरति माधुरी बानी ॥१॥ लख चौरासी योनिमें भटको तव मैं आनि पिछानी ॥ २ ॥ कामधेनु पारस चिन्तामणि मन वांछित फल दानी ॥ ३ ॥ चन्द्र स्वरूप ध्यान धरि प्रभु को दीजे मुक्ति निशानी ॥ ४ ॥

॥ दादरा ॥

निरखत छवि नाथ नैना छकित रस ह्वै गये ॥टेक॥ रवि कोट द्युति लज जात है नख दीप्त अपार ॥ १ ॥ इक तो परम वैरागी दूजे शान्ति सरूप ॥ २ ॥ उपमा हजारों से ना बने अनुपम जग चन्द्र ॥ ३ ॥

॥ दादरा ॥

नाभि घर नाचत हरि नटवा ॥ टेक ॥ अद्भुत ताल वृष आकृति धर पचत राग पटवा ॥ १ ॥ मणिमय नूपुरादि भूषण युत सुर सुरंग पटवा ॥ २॥ किन्नर कर धर बीन बजावत लावत लय झटवा ॥ ३ ॥ दौलत ताहि लखैं दृग तृपते सूझत शिव वटवा ॥ ४ ॥

॥ कहरवा ॥

लीजे खबर हमारी दयानिधि ॥ टेक ॥ तुम तो दीन दयाल जगत के सब जीवन हितकारी ॥१॥ मो सत हीन दीन तुम समरथ चूक माफ कर म्हारी ॥ २ ॥ भूधर दास आस चरनन की भव भव शरण तिहारी ॥ ३ ॥

॥ भैरवी ॥

जग में प्रभु पूजा सुखदाई ॥ टेक ॥ दादुर कमल पाखुरी लेकर प्रभु पूजा को जाई । श्रेणिक नृप गज केपग से दवि प्राण तजे सुर जाई ॥ १ ॥ द्विज पुत्री ने गिरि कैलासे पूजा आन रचाई । लिङ्ग छेदि देव पद लीनो अन्त मोक्ष पद पाई ॥ २ ॥ समोशरण विपुला चल ऊपर आये त्रिभुवन राई । श्रेणिक वसु विधि पूजा कीनी तीर्थंकर गोत्र बंधाई ॥ ३ ॥ द्यानत नर भव सुफल जगत में जिन पूजा रुचि आई । देव लोक ताके घर आगन अनुक्रम शिवपुर जाई ॥ ४ ॥

॥ रसिया ॥

तोसे लागी रे लगन चेतन रसिया ॥ टेक ॥ कुमत सौत के संग तुम राचे नाना भेष गति गति धरिया ॥ १ ॥ नरक मांहि बिललात फिरत ते वे दुःख बिसर गये रसिया ॥ २ ॥ नीठ नीठ नरकन से काढ़ कर मा-

नुव भव दुर्लभ वसिया ॥ ३ ॥ नर भव पाइ वृथा मत खोवो ऐसा औसर नहिं मिलिया ॥४ ॥ कहत हजारी सुमति संग राचे कुमति छोड़ तुम हो सुखिया ॥ ५ ॥

॥ भजन करताली ॥

कहां गये जैन जाति के बीर नैया पार लगाने वाले॥ टेक ॥ कहां गये उमास्वामि महाराज । तत्वारथ मय रचा जहाज ॥ क्यों नहीं रखते लज्जा आज । जैनी लज्जा रखने वाले ॥ कहां० १ ॥ स्वामी रक्षक श्री अकलंक । नाशा जैन जाति आतंक ॥ काटा बौद्ध धर्म का टंक । जैनी ध्वजा उड़ाने वाले ॥ कहां० २ ॥ देखतपात्र केशरी सिंह । वादी गज भाजें कर चिंघ ॥ आते अब तुम क्यों ना ढिंग । भव्यों की भय हरने वाले ॥ कहां०॥ ३ ॥ तन संतति हम विद्या हीन । बाल ब्याहकर धन बल छीन ॥ फूट से हो गये तेरा तीन । सत्यानाश मिटाने वाले ॥ कहां० ४॥ गट पट खांय विदेशी खांड़ रंडी और नचावें भांड ॥ सारी लोक लाज को छांड़ । बद रश्मों के चलाने वाले ॥ कहां० ५ ॥ संभलो अवना हो स्वछंद । राखो रही जो लवकर द्वंद । शुभमति दायक भजजिन चन्द्र ॥ जाती उन्नति करने वाले कहां ० ६ ॥ इति ।

३२ लावनी संग्रह ।

धन्य धन्य शुभ घड़ी आजकी जिन ध्वनि श्रवणपरी। तत्त्व प्रतीत भई अब मेरे मिथ्या दृष्टि टरी ॥ १ ॥ जड़ ते भिन्न लखो चिन्मूरति चेतन सुरसभरी । अहंकार ममकार बुद्धि में परमें सब परिहरी ॥ २ ॥ पुण्य पाप विधि बंध अवस्था भासी अति दुख खरी । वीतराग विज्ञान भाव में निज परिणत विस्तरी ॥ ३ ॥ चाह दाह विनसी पुनि बरसी समता मेघ झरी । बाढ़ी प्रीति निराकुल पद से भागचन्द हमरी ॥ ४ ॥

॥ लावनी ॥

चतुर परनारी मन निरखो । सावन कैसी रैन अंधेरी दामिन को दमको ॥ टेक ॥ रावण मोटा राय कहावे लंका गढ़ बंको । पाप करंते नरकन पहुंचो दुख पायो अघ को ॥ १ ॥ खण्ड धातु की राय पद्मोत्तर द्रौपदि कों हरतो । कृष्ण नरेश ने करी खुवारी पुण्य हुवो हलको ॥ २ ॥ कीचकराय महादुख पायो भीमसेन अटको । नारी द्रौपदी नेह विचारो भव भवं में भटको ३॥ परनारी कों रंग पतन है बादल को झपको। ओस बूंद जल लगे तवा पे ढलक जाय ढलको ॥ ४ ॥ परनारीको

नेह करंता धन जावे घर को । दूजा देखकर करे खुवारी परभव में भटको ॥ ५ ॥ लावनी ॥

धन्य दिवस धनि घड़ी आज की जिन छवि नजर परी । स्वपर भेद बुधि प्रगट भई उर भर्म बुद्धि बिसरी ॥ टेक ॥ नासिकाग्र है दृष्टि मनोहर वर विराग सुधरी आतम शुद्ध सुराजत मानो अनुभव सुरस भरी ॥ १ ॥ शांत्याकृति निरखत ही पर की आरति सर्वगरी । चिर मिथ्या तम नाश करन को भानो अमृत झरी॥२॥ वीत राग ताका सुहेतु सुनि मोह भुजग बिसरी । पट भूषण बिन वै सुंदरता नाहीं रंक हरी ॥ ३ ॥ जाकी द्युति शत कोट चन्द्रने अद्भुत जग विस्तरी । तारक रूप निहारि देव छवि सात्विक नवन करी ॥ ४ ॥

॥ लावनी ॥

मत करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी । है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥ टेक ॥

औषधि अनेक हैं सर्प डसे की भाई । पर इसके काटे की नहीं कोई दवाई ॥ गर लगे बान तो जीवित हू रहि जाई । पर इसके नैन के बान से होय सफाई ॥

है रोम रोम विष भरी करो ना यारी। है यही सकल रोगन की खान हत्यारी ॥१॥

यह तन मन धन हर लेय मधुर बोली में। बहुतोंका करै शिकार उमर भोली में॥ कर दिये हजारों लोट पोट होली में। लाखों का दिलकर लिया कैद चोलीमें॥ गई इसी कर्म में लाखों ही जमींदारी। है यही सकल रोगन की खानि हत्यारी ॥ २ ॥

हो गये हजारों के बल वीर्य्य छारा। लाखों का इसने वंश नाश कर डारा॥ गठिया प्रमेह आतिश ने देश बिगारा। भारत गारत हो गया इसी का मारा॥ कर दिये हजारों इसने चोर औ ज्वारी। है यही सकल दुर्गुण की खानि हत्यारी ॥ ३ ॥

इसही ठगनीने मद्य मांस सिखलाया। सब धर्म कर्म को इसने धूर मिलाया॥ और दया क्षमा लज्जा को मार भगाया। ईश्वर भक्ति का मूल नाश करवाया हों इसके उपासक रौरव के अधिकारी। है यही० ॥४॥

वह नवयुवकों को नैन सैन से खावे। और धनवानों को चट्ट गट्ट कर जावे॥ धन हरण करै फिर पीछे राह बतावै। करै तीन पांच तो जूते भी लगवावे॥

पिटवा कर पीछे त्यावै पुलिस पुकारी । है यही सकल रोगों की खानि हत्यारी ॥ ५ ॥

फिर किया पुलिस ने खूब अतिथि सत्कारा । होगई सज़ा मिला मज़ा इश्क़ का सारा ॥ जो झूंठ होय तो सज्जन करो विचारा । दो त्याग झट करो सत्य वचन स्वीकारा । अब तजो कर्म यह अति निन्दित दुखकारी । है यही सकल रोगों की खानि हत्यारी ॥ ६ ॥

२२ गारीसंग्रह ॥

॥ श्रीऋषभदेव स्तुति ॥

राखो नाभिके नन्द, शरण निज राखो नाभिके नन्द ॥ टेक ॥ सुरतरु क्षीण भये सब जग जन दुःखी भये मतिमन्द । नाभि नपतिसुत तुमतट आये दर्शन पायानन्द ॥ १ ॥ ग्राम धाम रचना हरि कीनी सुन आदेश स्वच्छन्द । निज सुख प्रभु षट्कर्म बताये उदर भरणको धन्द ॥ २ ॥ आदि तीर्थ वर्तावन हारे प्रगटे आदि जिनेन्द्र । गणधरादि कर पूजनीक प्रभु नवत चरण शतइन्द्र ॥ ३ ॥ उपादेय पदपद्म तुम्हारे त्रिजगति को सुखकन्द नाथूराम जिन भक्त जगति का चाहत क्षमणानन्द ॥ ४ ॥

॥ श्रीअजितनाथ स्तुति ॥

अजित अजित करो नाथ, अजित मोह अजित २ करो नाथ ॥ टेक॥ वसु अजीत जीते विधि तुमने ज्ञान चक्र गहि हाथ । ध्यान कृपाण पान गहि तामें मोह किया निर्माथ ॥१॥ अर्द्ध चतुर्थ कालगत प्रगट धर्मतीर्थ के नाथ । धर्म पोतधर बहु भवि तारे पहुंचे शिवले साथ ॥ २ ॥ गज लक्षण लख उभय चरणको नमों भाल धर हाथ । शरण पतितसुत हीन दासपर कृपा करो गुण-गाथ ॥ ३ ॥ है तुम विरद प्रगट त्रिभुवन में तारे ब-हुत अनाथ । नाथूराम जिन भक्तदास को कीजे आज सनाथ ॥ ४ ॥ श्रीसम्भवनाथ स्तुति ॥

सम्भव भव दुःख दूर, करो सो सम्भव भव दुःखदूर ॥ टेक ॥ इन कर्मों मोहिं बहुत फिरायो दुःखी भयो भर पूर । लख चौरासी योनि चतुर्गति छानी फिर फिर धूर ॥ १ ॥ त्रिभुवन में कोई रक्षक नाहीं काल बलीसे सूर । या से शरण लिया प्रभु थारा राखो आप हजूर इन का निग्रह तुम ही कीना ज्ञान गदा से चूर । अब मेरे वसु विधि अरि नाशो नित्य सताते क्रूर ॥ ३ ॥ भव गद नाशन को प्रभु तुमही सार सजीवन मूर । ना-थूराम जिन भक्त तुम्हारे नित नित नावो तूर ॥ ४ ॥

॥ श्री अभिनन्दन नाथ स्तुति ॥

श्री अभिनन्दन ईश । हमारे श्री अभिनन्दन ईश ॥ ॥ टेक ॥ अभि रुचि हमरी निज स्वभाव में होय करो मुक्तीश । विषय भोग की मिटे वासना पाऊं शिव जगदीश ॥ १ ॥ राग द्वेष संशय विमोह विभ्रम तुम हारे पीस । अब प्रभु जी मेरा रिपु नाशो दारुण मोह खवीश ॥ २ ॥ वसु विधि मूल रु शाखा तिन की शत अरु वसु चालीस । ध्यान धनञ्जय से तुम जारीं कंटक यथा कृषीश ॥ ३ ॥ अजर अमर अव्यय पद जन को दान करो शिव ईश । नाथूराम जिन भक्त नवावत तुम पद पंकज शीश ॥ ४ ॥

॥ श्रीसुमति नाथ स्तुति ॥

सुमति सुमति करो मेरी सुमति प्रभु सुमति सुमति करो मेरी ॥ टेक ॥ कुमति सहित चिर काल व्यतीतो करत फिरत भव फेरी । भव वन सघन विषें अति भटको निज पुर बाट न हेरी ॥ १ ॥ इन्द्रिय विषयन में रुचि ठानी दिन दिन अधिक घनेरी । सुमति सु नारि दृष्टि ना आनी रमी कुमति नित चेरी ॥ २ ॥ कुमति कुमार्ग भटकाने को मावस रैन अन्धेरी । तुम सुखचन्द्र लख इम भागी ज्यों मृगपति लख छेरी ॥ ३ ॥ अब सु-

सतीश ईश तुम महिमा दिन दिन जन प्रगटेरी। ना-थुराम जिन भक्त तुम्हारे नित्य बजो जय भेरी ॥ ४ ॥

३४ परमार्थ जकड़ी दौलतराम कृत

अब मन मेरा वे, सीख वचन सुन मेरा। भज जिनवर पद वे, जो विनशे दुख तेरा॥ विनशै दुख तेरा भववन केरा, मन वच तन जिन चरन भजो। पंच करन वश राख सुज्ञानी, मिथ्यामत मग दौर तजो॥ मिथ्या मत मग पगि अनादि तैं, तैं चहुंगति कीधा फेरा। अबहू चेत अचेत होहु मत, सीख वचन सुन मन मेरा ॥ १ ॥ इस भव वन में वे, तै साता नहिं पाई। वसु विधि वश हूवे, तैं निज सुधि विसराई॥ तैं निज सुधि विसराई भाई, तातैं विमल न बोध लहा। पर परणति में मग्न भयो तू, जन्म जरा मृत दाह दहा॥ जिनमत सारसरोवर कूं अब, गाहि लाग निज चिंतन में तो दुख दाह नशै सब नातर, फेर वसै इस भव वन में ॥ २ ॥ इस तन में तू वे, क्या गुन देख लुभाया। महा अपावन वे, सतगुरु याहि बताया॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मल मूत्रादिक का गेहा। कृमि कुल कलित लखत घिन आवे, तासों क्या कीजे नेहा॥ यह

तन पाप लगाय आपनी, परणति शिव मग साधनमें । सो दुख द्वंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोग शोक के दानी । शुभ गति रोकन वे, दुर्गति पथ अगवानी ॥ दुर्गति पथ अगवानी है जे, जिनकी लगन लगी इन सों । तिन नाना विधि विपति सही है; विमुख भया निज सुख तिन सों ॥ कुंजर झख अलि शलभ हिरन इन, एक अक्ष वश मृत्यु लही । यातें देख समझ मन माहीं, भव में भोग भले न सही ॥ ४॥ काज सरे तब वे, जब निजपद आराधे । नशै भवावलिवे, निराबाध पद लाधे ॥ निराबाध पद लाधे तब तोहि केवल दर्शन ज्ञान जहां । सुख अनन्त अति इन्द्रिय मंडित वीरज अचल अनंत तहां ॥ ऐसा पद चाहै तो भजि जिन, वार वार अब को उचरै "दौल" मुख्य उपचार रत्नत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥ ५ ॥ इति ।

३५ परमार्थ जकड़ी ।

रामकृष्ण कृत ।

अरहन्त चरण चित लाऊं । पुनः सिद्ध शिवंकर ध्याऊं ॥ वन्दों जिन मुद्रा धारी । निर्ग्रंथ यति अवि-

कारी। अविकार करुणा वन्त वन्दौं सकल लोक शि-
रोमणी। सर्वज्ञ भाषित धर्म प्रणमूं देय सुख सम्पति
घनी। ये परम मंगल चार जग में चार लोकोत्तम यही।
भव भ्रमत इस असहाय जिय को और रक्षक को नहीं१
मिथ्यात्व महारिपु दंडो। चिरकाल चतुर्गति हंडो॥
उपयोग नयन गुण खोयो। भरि नींद निगोदे सोयो॥
सोयो अनादि निगोद में जिय निकस फिर स्थावर भयो।
भू तेज तोय समीर तरुवर थूल सूक्ष्म तन लियो। कृमि
कुंथु अलि सेनी असैनी व्योम जल थल संचरो। पशु
योनि बासठ लाख इस विधि भुगति मर मर अवतरो
॥ २ ॥ अति पाप उदय जब आयो। महा निंद्य नर-
क पद पायो॥ थिति सागरों बन्द जहां है। नाना
विधि कष्ट तहां है॥ है त्रास अति आताप वेदन शीत
बहु युत है मही। जहां मार मार सदैव सुनिये एक
क्षण साता नहीं॥ नारक परस्पर युद्ध ठानें असुरगण
क्रीड़ा करें। इस विधि भयानक नरक थानक सहैं जी
पर वश परैं॥ ३॥ मानुष गति के दुःख भूलो। वस
उदर अधोमुख झूलो। जन्मत जो संकट सेयो। अवि-
वेक उदय नहीं वेयो॥ वेयो न कछु लघु बाल वय

में वंश तरु कोंपल लगी। दल रूप यौवन वय सो आ-
यो काम दौं तब उर जगी॥ जब तन बुढ़ायो घटो
पौरुष पान पकि पीरो भयो। झड़ परो काल बयार
बाजत वादि नर भव यों गयो॥ ४॥ अमरापुर के सुख
कीने। मनो वांछित भोग नवीने। उर माल जवे मु-
रझानी। बिलपो आसन्न मृत्यु जानी। मृत्यु जान हा-
हाकार कीनो शरण अब काको गहुं। यह स्वर्ग सुरपति
छोड़ अब मैं गर्भ वेदन क्यों सहुं॥ तब देव मिल सम-
झाइयो पर कुछ विवेक न उर बसो। सुर लोक गिरि
से गिर अज्ञानी कुमति कांदो फिर फंसो॥ ५॥ इस
विधि इस मोही जीने। परिवर्तन पूरे कीने॥ तिन
की बहु कष्ट कहानी। सो जानत केवल ज्ञानी। ज्ञानी
बिना दुःख कौन जाने जगत् वन में जो लहो। जरा
जन्म मरण स्वरूप तीक्ष्ण त्रिविध दावानल दहो।
जिनमत सरोवर शीत पर अब बैठ तपत बुझाय हुं।
जय मोक्षपुर की बाट बूझी अब न देर लगाय हुं। ६।
यह नर भव पाय सुज्ञानी। कर कर निज कार्य प्राणी॥
तिर्यंच योनि जब पावे। तब कौन तुझे समझावे॥
समझाय गुरु उपदेश दीनों जो न तेरे उर रहै। तो

जाने जीव अभाग्य अपना दोष काहू को न है। सूरज प्रकाशे तिमिर नाशे सकल जन का भ्रम हरे। गिरि गुफा गर्भ उद्योत होत न ताहि भानु कहा करे ॥ ७ ॥ जग माहिं विषय बन फूलो। मन मधुकर तिस बिच भूलो। रस लीन तहां लपटानो। रस लेत न रंच अघानो ॥ न अघाय क्यों ही रमो निशि दिन एक क्षण भी ना चुके। नहीं रहे बरजो बरज देखो बार बार तहां झुके ॥ जिनमत सरोज सिद्धान्त सुन्दर मध्य याहि लगाय हुं। अब रामकृष्ण इलाज याको किये ही सुख पाय हुं ॥८॥ इति श्री रामकृष्णकृत जकड़ी सम्पूर्ण।

ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥

३६ परमार्थजकडी।

दौलतराम कृत।

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं। शारद अम्बा चित लाऊं। दो विधि परिग्रह परिहारी। गुरु नमो स्वपर हित कारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरू परखि निज उर लाइये। दुःखदाय कुपथ विहाय शिव सुख दाय जिनवृष ध्याइये। चिरसे कुमग पगि मोह ठगकर ठगो भव कानन परो। चौरासी लख नित योनि में जरामरण ज-

न्मन दौं जरो ॥ १ ॥ मोह रिपुने दई है घुमरिया । तिस बश निगोद में परिया । तहां स्वास एकके माहीं । अष्टादश मरण लहाहीं । लहि मरण एक मुहूर्त्त में छास-ठ सहस्र शत तीन हीं । शठ तीन काल अनन्त यों दुःख सहे उपमाहो नहीं ॥ कबहू लही वर आयु छिति ज-ल पवन पावक तरुतनी । तसु भेद किंचित् कहूं सो मुनि कह्यो जो गौतम गणी ॥ २ । पृथिवी दो भेद बखानं । मृदु माटी कठिन पाषाणं । मृदु द्वादश सहस्र बरस की पाहन बाईस सहस्र की । पुनः सहस्र सात कही उदक त्रय सहस्र कही है समीर की । दिन तीन पावक दशसहस तरु प्रथिति मा तसु पीर की । बिन घात सूक्ष्म देहधा-री घातयुत गुरु तन लहो । तहां खनन तापन ज्वलन विंजन छेद भेदन दुःख सहो । ३ । संखादि दो इन्द्री-प्रानी । तिथि द्वादश वर्ष बखानी । जूंआदि ते इन्द्रिय हैं ते । बासर उंनचास जियेंते । चौवे वर्ष दल अलि प्रमुख ब्यालीस सहस उरगतनी । खग की बहत्तर सहस्र नव पूर्वांग सरीसृप की भनी । नर मत्स्य पूर्व कोड़िकी थिति कर्म भूमि बखानिये । जलचर विकल विन भोग भनर पशु त्रिपल्य प्रमानिये । ४ । अघवश फर नरक

बसेरा। भुंगता तहां कष्ट घनेरा। छेदें तिलतिल तन सारा। झेपें द्रह पूति मझारा। मझार वज्रानल प-चावें शूली ऊपरें। सींच देह जलक्षार से खल कहें अण नीके करें। वैतरणी सरिता समलजल अति दुःखद त-रुसेमल तने। अति भीमवन असि झोंत समदल लगत दुःख देने घने। ५। तिस भू में हिम गरमाई। मेरु सम लोह गलाई। तहां की थिति सिन्धु तनी है। यों दुःख नरक अवनी है। अवनी तहांकी से निकल कबहूं जन्म पायो नरो। सर्बांग सकुचित अति अपावन जठर जननी के परो। तहां अधोमुख जननी रसांश थकी जियो नव मास लो। तिस पीर में कोई सीर नाहीं सहे आप नि-कासलो ॥ ६ ॥ जन्मत जो संकट पायो। रसना से जात न गायो। लहे बालपने दुःख भारी। तरुणापोलियो दुःख कारी। दुःखकार इष्टवियोग अशुभ संयोगशोक सरोगता। पर सेव ग्रीषमशीत पावस सहे दुःख अति भोगता। काहूको त्रिय काहूको बांधव काहू सुता दु-राचारिणी। काहू व्यसन रत पुत्र दुष्ट कलत्र के ऊपर अणी ॥ ७ ॥ वृद्धापन के दुःख जेते। लखिये सब नैनों तेते। मुख लाल बहे तन हाले। बिन शक्ति न वसन सम्हाले। न सम्हाल जाको देह की तो कहो क्या वृष

की कथा। तब ही अचानक यम, ग्रसै यों मनुज जन्म गयो वृथा। काहू जन्म शुभठान किंचित् लियो पद चउ-देव को। अभियोग किल्विष नाम पायो सहो दुःख परसेवको ॥८॥ तहां देख महर्द्धिक सुर ब्हो। झूरो कर विषयों गृद्धी। कबहूं परिवार नशानो। शोकाकुल हो विलखानो। बिलखाय अति जब मरण निकटौ सहो संकट मानसी। सुर विभव दुःखद लगो तबें जब लखी माल मलानसी। तब अमर बहु उपदेश दे, समुझाइयो समझो न क्यों। मिथ्यात्व युत डिग कुगति पाई लहै फिर सो सुपद क्यों ॥ ९ ॥ यों चिर भव अटवी गाही। किंचिद् साता न लहाई ॥ जिन कथित धर्म नहीं जानो। पर में आपापन मानो ॥ मानो न सम्यक् रत्नत्रय आत्म अनात्म में फंसो। मिथ्या चरण दृग् ज्ञान रंजो जाय न ग्रीवकवसो ॥ पर लहो ना जिन कथित शिव मग वृथा भ्रम भूलो जिया। चिद्भाव के दर्शाव बिन सब गये अहले तप किया ॥ १० ॥ अब अद्भुत पुण्य कुनायो। कुल जाति विमल तू पायो ॥ या में सुन सीख सयाने। विषयोंसे रति मति ठाने। ठाने कहा रति विषय से ये विषय विषधर से लखो। ये देय मरण अनन्त इन को

त्याग आतम रस चखो ॥ या रस रसिक जन बसे शिव अब वसत फिर बसि हैं सही । दौलत खरचि पर विरचि सद्गुरु सीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥

इति श्री दौलतरामकृत जकड़ी सम्पूर्णा ।

३७ समाधि मरण ।

(चाल योगीरासा)

गौतम स्वामी वन्दौं नामी मरण समाधि भला है । मैं कब पाऊं निशदिन ध्याऊं गाऊं बचन कलाहै । देव धर्म गुरु प्रीति महादृढ़ सात व्यसन नहीं जाने । त्यागि बाईस अभक्ष संयमी बारह व्रत नित ठाने ॥१॥ चक्की चूली उखरी बुहारी पानी त्रस न विरोधे। बनिज करे पर द्रव्य हरे नहीं छहो करम इमि सोधे ॥ पूजा शास्त्र गुरन की सेवा संयम तप चहुं दानी । पर उपकारी अल्प अहारी सामायक विधि ज्ञानी ॥ २ ॥ जाप जपे तिहुं योग धरे दृढ़ तनु की ममता टारे । अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारे ॥ आग लगे अरु नाव डुबे जब धर्म विघन जब आवे। चार प्रकार अहार त्यागि के मन्त्र सु मन में ध्यावे ॥ ३ ॥ रोग असाध्य जरा बहु देखे कारण और निहारे । बात बड़ी है जो

वनि आवे भार भवन को डारे ॥ जो न वने तो घरमें रह करि सब सों होय निराला । मात पिता सुत त्रिय को सोंपे निज परिग्रह आहि काला ॥ ४ ॥ कुछ चैत्यालय कुछ श्रावक जन कुछ दुखिया धन देई । क्षमा क्षमा सब ही सों कहि के मन की शल्य हनेई ॥ शत्रुन सों मिल निज कर जोरे मैं वहु करी बुराई । तुम से प्रीतन को दुख दीने ते सब वकसो भाई ॥ ५ ॥ धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे संतोषे । छहों काय के प्रानी ऊपर करुणा भाव विशेषे ॥ ऊंच नीच घर वैठ जगह इक कुछ भोजन कुछ पैले । दूधाधारी क्रम क्रम तजि के छाछ अहार पहेले ॥ ६ ॥ छाछ त्यागि के पानी राखे पानी तजि संथारा । भूमि मांहि थिर आसन मांडे साधर्मी ढिंग प्यारा ॥ जब तुम जानो यह न जपै है तब जिन वाणी पढ़िये । यों कहि मौन लियो संन्यासी पंच परम पद गहिये ॥ ७ ॥ चार आराधन मन में ध्यावे बारह भावन भावे । दश लाक्षण मन धर्म विचारे रत्नत्रय मन ल्यावे ॥ पैंतिस सोलह षटपन चारो दुइ इक बरन विचारे । काया तेरी दुख की ढेरी ज्ञान मई तूं सारे ॥ ८ ॥ अजर अमर निज गुण सों पूरे परमानन्द सुभावे । आनंद कन्द चिदानंद साहब

तीन जगत पति ध्यावे ॥ क्षुधा तृषादिक होई परीषह सहे भाव सम राखे। अतीचार पांच सब त्यागे ज्ञान सुधारस चाखे ॥९॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम लीन तन त्यागे। अद्भुत पुण्य उपाय सुरग में सेज उठे ज्यों जागे। तहां ते आवे शिव पद पावे विलसे सुक्ख अनन्तो। द्यानत यह गति होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥ १० ॥ इति समाधिमरणं समाप्तम् ॥

३८ निशि भोजन कथा।

[दोहा छन्द]

नमों सारदा सार बुध, करैं हरैं अघ लेप। निशि भोजन भुंज की कथा, लिखूं सुगम संक्षेप ॥ १ ॥

(चौपाई छन्द)

जंबू दीप जगत विख्यात। भरत खंड छवि कहियत आत ॥ तहां देश कुरु जांगल नाम। हस्त नागपुर उत्तम ठाम ॥ यशोभद्र भूपति गुण वास। रुद्रदत्त द्विज प्रोहित तास॥ अश्वमास तिथि दिन आराध। पहिली पडवा कियो सराध ॥ बहुत बिनय सों नगरी तने।

न्योल जिमाये ब्राह्मण घने ॥ दान मान सबही कों दियो। आप विप्र भोजन नहिं कियो ॥ इतने राय पठायो दास। प्रोहित गयो राय के पास ॥ राज काज कछु ऐसो भयो। करत करावत सब दिन गयो ॥ घरमें रात रसोई करी। चूल्हे ऊपर हांडी धरी। हींग लैंन उठि बाहर गई। यहां विधाता औरहिं ठई॥ मैंडक उछल परो तामाहिं। विप्र तहां कछु जानो नाहिं। बैंगन छौंक दिये तत्काल। मैंडक मरो होय बेहाल॥ तबहुं विप्र नहिं आयो धाम। धरी उठाय रसोई ताम। पराधीन को ऐसी बात। औसर पायो आधी रात॥ सोय रहे सब घर के लोग। आग न दीवा कर्म संजोग। भूखो प्रोहित निकसे प्रान। ततछिन बैठो रोटी खान॥ बैंगन भोले लीनो ग्रास। मैंडक मुंह में आयो तास। दांतन चले चबी नहिं जबै। काढ़ धरो थाली में तबै॥ प्रात हुए मैंडक पहिचान। तौभी विप्रन करी गिलानि। थिति पूरी कर छोड़ी काय। पशु की योनी उपजो आय॥

। सोरठा छन्द।

१ घुघू २ काग ३ बिलाव, ४ सावर ५ गिरध पखेरुआ। ६ सूकर ७ अजगर भाव, ८ बाघ ९ गोह जल में

१० मगर ॥ दश भव इहि विधि थाय, दसों जन्म नरकहिं गयो । दुर्गति कारण पाय, फली पाप वट बीजवत ॥ ॥ दोहा छन्द ॥

निशि भोजन करिये नहीं, प्रघट दोष अविलोय । परभव सब सुख संपजे, यह भव रोग न होय ॥

॥ छप्पय छन्द ॥

कीड़ी बुध बल हरे कंप गद करे कसारी । मकड़ी कारण पाय कोढ उपजे दुख भारी । जुआं जलोदर जने फांस गल विथा बढ़ावे । बाल सवे सुरभंग वचन माखी उपजावे ॥ तालुवे छिद्र बीछू भखत और व्याधि बहु करहि सब । यह प्रगट दोष निशअसन के पर भव दोष परोक्ष फल ॥ दोहा छन्द ॥

जो अघ इहि भव दुख करे, परभव क्यों न करेय । डसत सांप पीछे तुरत, लहर क्यों न दुख देय ॥ सुवचन गुन हाहारजे, मूरख मुदित न होय । मणिधर फण फेरे सही, नदी सांप नहीं होय ॥ सुवचन सत गुरु के वचन, और न सुवचन कोय । सत गुरु वही पिछानिये, जा उर लोभ न होय ५ भूधर सुवचन सांभलो, स्वपर पक्ष कर बीन । समुद्र रेणु का जो मिले, तोड़ै ते गुण कीन ॥ इति निशि भोजन भुंजन कथा सम्पूर्णम् ।

३९ श्री रविव्रत कथा ।

॥ चौपाई ॥

श्री सुख दायक पार्स जिनेश । सुमति सुगति दाता परमेश ॥ सुमरों शारद पद अरविंद । दिनकर व्रत प्रगटो सानंद ॥ १ ॥ वाणारस नगरी सुविशाल । प्रजापाल प्रगटो भूपाल ॥ मति सागर तहां सेठ सुजान । ताका भूप करे सन्मान ॥ २ ॥ तासु त्रिया गुण सुंदरि नाम । सात पुत्र ताके अभिराम ॥ षट सुत भोग करें परणीत । बाल रूप गुण धर सुविनीत ॥ ३ ॥ सहस्र कूट शोभित जिन धाम । आये यति पति खंडित काम ॥ सुन मुनि आगम हर्षित भये । सर्व लोग वन्दन को गये ॥ ४ ॥ गुरु वाणी सुन के गुणवती । सेठिन तब जो करी बीनती ॥ व्रत प्रभु सुगम कहो समझाय । जासे रोग शोग सब जाय ॥ ५ ॥ करुणा निधि भाषैं मुनिराय । सुनो भव्य तुम चित्त लगाय ॥ जब आषाढ़ सित पक्ष विचार । तब कीजे अंतिम रविवार ॥६ ॥ अनशन अथवा लघु आहार । लवणादिक जो करे परिहार ॥ नवफल युत पंचामृत धार । वसुप्रकार पूजो भवहार ॥७॥ उत्तम फल इक्यासी जान । नव श्रावक घर दीजे आन ॥

याविधि करी नव वर्ष प्रमाण। याते होय सर्व कल्याण ॥ ८॥ अथवा एक वर्ष एक सार । कीजे रवि व्रत मनहिं विचार ॥ सुसाहुन निज घर को गई । व्रत निंदा से निंदित भई ॥ ९ ॥ व्रत निन्दा से निर्धन भये । सात पुत्र अयोध्यापुर गये ॥ तहां जिन दत्त सेठ गृह रहैं । पूर्व दुःकृत का फल लहैं ॥ १०॥ मात पिता गृह दुःखित सदा । अवधि सहित मुनि पूछे तदा॥ दयावंत मुनि ऐसे कहो । व्रत निन्दा से तुम दुःख लहो ॥ ११ ॥ सुन गुरु वचन बहुरि व्रत लयो । पुण्य कियो घर में धन भयो ॥ भविजन सुनो कथा सम्बन्ध । जहां रहत थे वे सब नन्द ॥ १२ ॥ एक दिवस गुण धर सुकुमार । घास ले आये गृहद्वार ॥ क्षुधावंत भावज पे गयो । दंत विना नहिं भोजन दयो ॥ १३ ॥ बहुरि गये जहां भूलोदन्त । देखो तासे अहि लिपटंत ॥ फण पति को तहां विनती करी । पद्मावति प्रगटी सुंदरी ॥ १४ ॥ सुंदर मणिमय पारस नाथ । प्रतिमा पंचरत्न शुभ हाथ ॥ देकर कहो कुंवर कर भोग । करो त्रणक पूजा संयोग ॥१५॥ आनविंब निज घर में धरो । तिहकर तिन को दारिद्र हरो ॥ सुख विलसत सेवे सब नन्द । दिन प्रति

पूजें पार्स जिनेन्द्र ॥१६॥ साकेता नगरी अभिराम । जिन प्रसाद राचा शुभ धाम ॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य संयोग । आये भविजन संग सो लोग ॥ १७ ॥ संग चतुर्विधिको सन्मान । कियो दियो मन वांछित दान । देख सेठ तिन की सम्पदा । जात कही भूपति से तदा ॥ १८ ॥ भूपति तब पूछो वृत्तन्त । सत्य कहो गुण घर गुणवन्त ॥ देख सुलक्षणता को रूप । अत्यानन्द भयो सो भूप ॥ १९ ॥ भूपति गृह तनुजा सुंदरी । गुण घर को दीनी गुण भरी ॥ कर विवाह मंगल सानन्द । हय गय पुरजन परमानन्द ॥ २० ॥ मन वांछित पाये सुख भोग । विस्मित भये सकलपुर लोग ॥ सुख से रहत बहुत दिन भये । तब सब बन्धु बनारस गये ॥ २१ ॥ मात पिता के परशे पांय । अत्यानन्द हृदय न समाय ॥ बिगटो विषम विषम बियोग । भयो सकलपुर जन संयोग ॥ २२ ॥ आठ सात सोलह के अंक । रविव्रतकथा रची अकलंक ॥ थोड़े अर्थ ग्रंथ विस्तार । कहें कवीश्वर को गुण सार ॥ २३ ॥ यह व्रत जो नरनारी करें । सो कबहूं दुर्गति नहिं परें ॥ भाव सहित सो सब सुख लहें । भानु कीर्ति मुनिवर इम कहें ॥ २४ ॥

इति श्री रविव्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

४० बारहमासी राजुल, सोरठ में ।

पिय प्यारे ने सुधि बिसराई । अब कैसे जियों मेरी माई ॥ टेक ॥ सखी आयो अगम अषाढ़ा । तब क्यों न गये गिरनारा ॥ मेरी रच संयोग बिसारी । मन में क्या नाथ बिचारी ॥ अब क्यों छोड़ी अकुलाई । अब० ॥१॥ सावन में व्याहन आये । सब यादव नृपति सुहाये ॥ पशु वन की करुणा कीनी । मेरी ओर दृष्टि ना दीनी ॥ गिर गमन कियो यदुराई । अब० ॥२ ॥ भादों बरसत गंभीरा । मेरे प्राण धरें ना धीरा ॥ मोहि मात पिता समझावे । मेरे मन एक न आवे ॥ मो प्रभु बिन कछु न सुहाई । अब० ॥ ३ ॥ सखी आयो अश्विन मासा । पहुंची अपने पिय पासा ॥ क्यों छोड़े भोग बिलासा । कर पूर्व जन्म की आशा ॥ तज वर्तमान सुखदाई । अब० ॥ ४ ॥ अब लागो कातिक मासा । सब जन गृह करत हुलासा ॥ सब गृह गृह मंगल गावें । हमरे पिय ध्यान लगावें ॥ मेरी मान कही यदुराई । अब० ॥ ५ ॥ लगी अघहन मास सुहाई । जा में शीत पड़े अधिकाई ॥ सब जन कम्पें जग केरे । कैसे ध्यान धरों प्रभु मेरे ॥

थिरता मन नाहि रहाई । अब० ॥ ६ ॥ सखी पूष में परम तुषारा । वर शीत भई अधिकारा ॥ कैसे के संयम मंडो । कैसे वसु कर्मन दंडो ॥ घर घल के राज कराई । अब० ॥ ७ ॥ सखी माघ मास अब लागो । सब ही जन आनन्द दागो ॥ तुम लीनी जगत् बड़ाई । मोहि त्याग दया नहीं आई ॥ धृक मेरी पूर्व कमाई । अब० ॥ ८ ॥ फागुन में सब जन होरी । खेलत केसर रंग बोरी ॥ तुम गिरि पर ध्यान लगायो । मेरा कुछ ध्यान न आयो ॥ तुम शरणागत में आई । अब० ॥९॥ सखी पहिले चैत जनायो। सब साल को आगम आयो। सब फूले वन अकुलाई । मोंहि तुम विन कछु न सुहाई ॥ मोहि अधिक उदासी छाई । अब० ॥ १० ॥ वैसाख पवन झकझोरे । लूह लपट लगे चहुं ओरे ॥ जो जड़ ते तपत पहारा । मो तन कोमल सुकुमारा ॥ घर छोड़ चले यदुराई । अब० ॥ ११ ॥ सखी जेठ मास अब आयो । तब घाम ने जोर जनायो ॥ कैसे भूख पियास सहोगे । कैसे संयम धारोगे ॥ थिरता मन में न रहाई । अब कैसे जियों मेरी माई ॥ १२ ॥ इति सम्पूर्णम् ।

४१ पुकार पच्चीसी ।

दोहा—जे यह भव संसार में, भुगतें दुःख अपार ।
सो पुकार पच्चीसिका, करें कवित इक ढार ॥

[सवैया छन्द]

श्री जिनराज गरीब निवाज सुधारन काज सबै सुख दाई । दीन दयाल बड़े प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिर नाई ॥ दुर्गति टारन पाप निवारन हो भव तारन को भवताई । बारही बार पुकारतु हों जनकी बिनती सुनिये जिनराई ॥ १ ॥ जन्म जरा मरणों त्रय दोष लगे हम को प्रभु काल अनाई । तासु नसावन को तुम नाम सुनो हम बैद्य महा सुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारन को तुम्हरे पद सेवतु हो चित ल्याई । बारही० ॥ २ ॥ जो इक द्वै भवको दुख होय तो राख रहों मन को समझाई । यह चिरकाल कुहाल भयो अबलों कहुं अन्त परो न दिखाई ॥ मो पर या जग मांहि कलेश परे दुख घोर सहे नहीं जाई ॥ बारही० ॥ ३ ॥ देख दुखी पर होत दयाल सुहै इक ग्राम पती शिरनाई । हो तुम नाथ त्रिलोक पती तुम से हम अर्ज़ करी शिर नाई ॥ सो दुःख दूर करो भव के बसु कर्मन ते प्रभु लेउ छुड़ाई ।

बारही० ॥४॥ कर्म बड़े रिपु हैं हमरे हमरी बहु हीन दशा कर पाई। दुःख अनन्त दिये हमको हर भांतिन भांतिन खादि लगाई॥ मैं इन वैरिन के वश है करिके भटको सु कहो नहीं जाई। बारही० ॥ ५ ॥ मैं इस ही भव कानन में भटको चिरकाल सुहाल गमाई। किञ्चित ही तिल से सुख को बहु भांति उपाय करे ललचाई॥ चार गतें चिर मैं भटको जहां मेरु समान महा दुख-दाई। बारही० ॥६॥ नित्य निगोद अनादि रहो त्रस के तन की जहां दुर्लभताई। ज्यों क्रम सों निकसो व-हते त्यों इतर निगोद रहो चिर काई॥ सुक्षम वादर नाम भयो जब ही यह भांति धरी पर्याई। बारही० ॥ ७ ॥ जब हीं पृथिवी जल तेज भयो पुनि मारुत होय बनस्पति काई। देह अघात धरी जब सूक्षम घातत बादर दीरघ ताई॥ एक उदै प्रत्येक भयो सहधारण एक निगोद बसाई। बारही० ॥८॥ इन्द्रिय एक रहो चिर में कब लब्धि उदै स्वय उपशमताई। वे त्रय चार धरी जब इन्द्रिय देह उदै विकल त्रय आई। पंचन आदि किधौं पर्यन्त धरे इन इन्द्रिय के त्रस काई ॥बा-रही० ॥ ९ ॥ काय धरी पशु की बहुबार भई जल ज-

न्तुन की पर्याई। जो थल मांहि अकाश रहो चिर होय पखेरू पंख लगाई ॥ मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके वरणें कहुं पार न पाई । बारही० ॥ १० ॥ नरक मझार लियो अवतार परो दुख भार न कोई सहाई। जो तिल से सुख काज किये अघते सब नरकन में सुधि आई। तातिय के तन की तुतली हमरे हियरा करि लाल भिराई । बारही० ॥ ११ ॥ लाल प्रभा सु मही जहं हैं अरु शर्कर रेत उन्हार बताई । पंक प्रभा जु धुआंवत है तमसी सुप्रभा सु महातम ताई ॥ जोजन लाख जु आयश पिण्ड तहां इक ही छिनमें गल जाई ॥बारही० ॥ १२ ॥ जे अघ घात महा दुख दायक मैं विषया रसके फल पाई। काटत हैं जबहीं निरदय तब ही सरिता महिं देत बहाई ॥ देव अदेव कुमार जहां बिच पूरब बैर बतावत जाई ॥ बारही० ॥ १३ ॥ ज्यों नर देह मिली क्रमसों करि गर्भ कुवास महा दुखदाई। जु नव मास कलेश सहे मलमूत्र अहार महा जय ताई ॥ जे दुख देखि जबें निकसो पुनि रोवत बालपने दुखदाई ॥ बारही० ॥१४॥ यौवन में तन रोग भयो कबहूं बिरहानल व्याकुलताई । मान विषैं रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख

मानत ताही ॥ आइ गयो छण में विरधापन यह नर भव यह भांति गमाई। वारही० ॥ १५ ॥ देव भयो सुर लोक विषैं तव मोहि रहो परया उर लाई। पाय विभूति बड़े सुर की पर सम्पति देखत झूरत आई ॥ माल जवैं मुरझाय रहो थित पूरण जानि तवैं बिललाई ॥ वारही० ॥ १६ ॥ जे दुख मैं भुगते भव के तिनके वरखैं कहुं पार न पाई। काल अनादि न आदि भयो तहं मैं दुख भाजन हो अघ माहीं॥ सो दुख जानत हो तुम हीं जब हीं यह भांति धरी पर्यायी ॥ वारही० ॥१७॥ कर्म अकाज करे हमरे हम को चिरकाल भये दुखदाई। मैं न विगाड़ करो इनको विन कारन पाइ भये अरि आई ॥ मात पिता तुम हो जग के तुम छांड़ि फिरादि करौं कहं जाई। वारही० ॥१८॥ सो तुम सों सब दुःख कहो प्रभु जानत हो तुम पीर पराई। मैं इनको सत्संग कियो दिनहूं दिन आवत मोहि बुराई ॥ ज्ञान महा निधि लूट लियो इन रंक कियो यह भांति हराई ॥ वारही० ॥ १९ ॥ मैं प्रभु एक सरूप सही सब यह इन दुष्टन की कुटलाई। पाप सु पुण्य दुहूं निज मारग में हमको यह फांदि लगाई ॥ मोहि थकाय दियो जग से विरहानल देह दहै न बुझाई ॥ वारही० ॥२०॥

यह बिनती सुन सेवक की निज मारग में प्रभु लेउ लगाई। मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो शरणागति आई॥ मैं करदास उदास भयो तुम्हरी गुणमाल सदा उरलाई। बारही० ॥ २१ ॥ देर करो मति श्री करुणानिधि जू पति राखन हार निकाई॥ योग जुरे क्रम सों प्रभु जी यह न्याय हजूर भयो तुम आई॥ आन रहो शरणागति हों तुम्हरी सुनि के तिहुं लोक बड़ाई। बारही० ॥ २२ ॥ मैं प्रभु जी तुम्हरो सम को इन अन्तर पाय करो दुसराई। न्याय न अन्त कटे हमरो न मिले हम को तुम सी ठकुराई॥ सन्तन राखि करो अपने ढिंग दुष्टनि देहु निकास बहाई॥ बारही० ॥२३॥ दुष्टन की सतसंगति में हमको कछू जान परी न निकाई। सेवक साहब की दुबिधा न रहे प्रभु जी करिये सु भलाई॥ फेरि नमों सु करों अरजी जसु जाहर जानि परे जगताई। बारही० ॥२४॥ यह बिनती प्रभु के शरणागत जे नर चित्त लगाय करेंगे। जे जग में अपराध करे अघ ते क्षण मात्र भरे में हरेंगे॥ जे गति नीच निवास सदा अवतार सुधी स्वर लोक धरेंगे। देबीदास कहैं क्रमसों पुनि ते भवसागर पार तरेंगे॥ २५॥ इति॥

४२ अथ कृपण पचीसी ।

॥ सवैया इकतीसा ॥

एक समय देहुरा में पंच सब बैठे हुते संघईने बात जात जावे की चलाई है ॥ भली हैं जो चलो गिरनार परसन जहां जनम सफल और कीर्त्ति बढ़ाई है ॥ वहां बैठीहुती एक कृपण पुरुष नारि तिन यह सुनी आन घर में चलाई है ॥ सुनोजी पियारे पीव आवै जो तुम्हारे जीव हम तुम दोनों चलैं भली बन आई है ॥१॥ पुरुष वचन ॥ बावरी भई है नारि काहू की लगी बयार बुद्धी गई मारी तोहे कहा दिस आई है ॥ मोसों तू कहत अविचारी औंधी सीधी बात मेरे कुल मांहि कौनने चलाई है ॥ कहा तोहे भूत लगा ज्ञान सब दूर भागा समझना परे तुझे कौने बहकाई है ॥ मोसें तू कहत धन खरचन जात जानत है गोरी हम क्योंकर कमाई है ॥ २ ॥ स्त्री वाक्य ॥ जानत हो नाथ माया तुमहीं से उपजी है फेर के कमाय लीजो कहा याकू नहीं है ॥ चले है भलो जु साथ नेमनाथ पूजवे को फेर ऐसा साथ नाहीं पायवे को नहीं है ॥ ताते पिया जात

कीजे जग में सुयश लीजै भगवत पूजा कीजै यही सार सही है ॥ लक्ष्मी अनेक बार आयके विलाय गई मुझे तो बताओ यह काके थिर रही है ॥ ३ पु० ब० ॥ बावरी न जाने बात कौन काज इतरात जग में सुयश कहा पोट बांध लीजिये ॥ तोड़िये वे हाथ जिन हाथ न खरच डारो अपनी कमाई धन आय नहीं दीजिये ॥ कहा तू सयानी भई मोहे समझायवे को गोद में से पूत डार पेट आश कीजिये ॥ जानत न तिया बौरी, अन्त तोह मत थोरी कहत चलन जात जातैं धन छीजिये ॥ ४ ॥ धन तौ वढ़ैगा दिन दिन सुन मेरे पीव धर्म के किये ते धन अति अधिकायगा ॥ धर्म के किये से यश कीरति प्रकट होत धर्म के किये से नर भली गति जायगा ॥ लक्ष्मी है चंचल फिरति चक्र के समान थिरता नहीं है धन छण में पलायगा ॥ तातें पिया जात कीजै, जग में सुयश लीजे, चार विधि दान दिये महा सुख पायगा ॥ ५ ॥ कहत कहा है रांड़, घर में भई है सांड़, मुझे किया चाहे भांड़ धन खरचाय के ॥ मोहे ना रहण देत दिन रात जीये लेत ताते हूं रहूंगो अब और ठौर जाय के ॥ घरते निकस गयो, जाय कहीं बैठ गयो तहां

एक मित्र मिलो पूछत बनाय के॥ कहा मेरे मित्र आज देख्यो दलगीर तो है कारण सो कौन मुझे कहो समझाय के॥ ८॥ क्या तो मेरे मित्र तेरे घर कुछ चोरी हुई क्या हमारे मित्रद्वार मागत फकीर है॥ क्या हमारे मित्र कुछ राज दण्ड देनो पड़ो किधौं मित्र प्यारे तेरे तन कछु पीर है॥ क्या हमारे मित्र तेरे कोई महमान आया या हमारे मित्र तेरा मरा हितू बीर है॥ सांची बात कहो मोसे ताही को इलाज करूं मेरे मन शोच भयो भाई दलगीर है॥ ७॥ ना तो मेरे मित्र कुछ चोरी भई मेरे घर नहीं मेरे मित्र कुछ राजा दण्ड लिया है॥ न तो कोई मरा न तो कोई महमान आया ना तो भीड़ पड़ी नहीं खोटा काम किया है॥ रात्रि दिन मेरे मित्र घर में सतावे नारि वही बात कहे तातें फाटा जात हिया है। हमने यह लक्ष्मी कमाई बड़े कष्टों से उमने उपाय धन खोयवे का किया है॥ ८॥ कहा कहूं मेरे मित्र कही पड़ती न कछु सोई बात कहै जासूं होत उत्पात है॥ गिर नेर संघ चलै मोसे कहै तू भी चाल एती सुन मित्र मेरो हियो फाट्यो जात है॥ जाइके चढ़ाये एक वार फल फूल पान देवता न खाय सब

माली लेजात है ॥ बड़ो दुःख कहो कैसे सहूं मेर मित्र गिरनार गये घरबार भी नशात है ॥ ९ ॥ मेरो कहो मान मित्र भलो दुल गीर भयो पापणी तिया को वेग पीहर पठाइये ॥ जाती चले जांय जब पचास साठ कोश परे आदमी के हाथ देसंदेश उसैं लाइये ॥ और भांति जीवन न पावो सुनो प्यारे मित्र तुझे मैं सि-खाऊं वही घर घर सुनाइये ॥ तेरे बाप भाई के ब-धाई बटी वेग दे बुलाई तिया देर ना लगाइये ॥ १०॥ तेरे बिना मेरे मित्र मुझे को सिखावे ऐसो मेरे प्राण राखे भाई जीवदान दियो है ॥ पर उपकारी तैं बि-चारी भली बात यह गयो हुयो घर मेरो तैंने राख लियो है ॥ ऐसो मंत्र कौन को फुरत ऐसे अवसर में उत्तम उपाव तैं बताया यश लियो है ॥ तेरी मैं बड़ाई करूं कहां तांई मेरे मित्र रामकी दुहाई डूबते कूं थाम लियो है ॥ ११ ॥ झूठा एक काग़ज बनाय के सुनाया जाय सुण तिया चिट्ठी तेरे पीहर से आई है ॥ क्षेम है कुशल तेरे भाई के पुत्र हुआ लिखी है जरूर तेरे भाई ने बुलाई है ॥ वेग चलीजा यने विलम्ब नहीं ठीक तिया दिन चार ही में बटत वधाई है ॥ घणें दिना

बीते पीछे गई न गई समान औसर के बीते कहा आदर बड़ाई है ॥ १२ ॥ आदर बड़ाई मैंने छोड़ो सब स्वामी नाथ रहूं घर बैठी कहीं जाऊंगी न आऊंगी ॥ मेरी देह नीकी नांहिं ज्वर सों भयो है मेर तातें कछु औषधि महीना एक खाऊंगी ॥ अब तो पड़ी है जौकी देखों कब होऊं नीकी नीकी हुई तौ भी मास दो एक में न्हाऊंगी । सुणत वचन ये कृपण मन राजी भयो सुन्दर सलोनी तैंने बात कही साऊंगी ॥ १३ ॥ इतने में संघ गिरनार कोउ संग चलो भट्टारक बोल तब दुन्दुभी बजाई है ॥ जात चौरासी सब श्रावकोंमें चिट्ठी गई चतुर्बिधि संघ लिये गोट सब आई है ॥ बाजत नकारे अति भारे भारे लोग आये नाचत अखाड़े इन्द्र कैसो छवि छाई है॥ आगो लेत संघई करत मनुहार बिनोधन धन कहैं सब तेरी ये कमाई है॥ १४॥

नाचत तुरंग चले शोभित सुरंग सबै फूलत गयन्द मानों घटा जुर आई है ॥ रथन पै नाना भांति धुजा फहरात जात पालकी अनेक भांति लोगों ने बनाईहै॥ बलमरुआ से छड़ी आशुण अनूप बने प्यादे सवार लनिशान चमकाई है॥ ऐसी भांति गावत बजावत चलत सब बोलत है जैजै शब्द बांटत बधाई है ॥ १५ ॥

जहां जहां जात खरचत खात भली भांति ठौर २ होत जेवनार एकवान की॥ बांटत तम्बोल गांव गांव २ प्रति भलीभांति कहां लौं बड़ाई कीजे संघई के दान की॥ हंसी राजी खुशी से तो संघ गिरनार गयो देखत समाज सब ले सुध आनकी॥ संघ ही के साथी मन गमन अनन्द भरे बार बार करत बड़ाई सन्मान की॥१६॥ गढ़ गिरनार की तलहटी में डेरा कियें एकतें सुरंग एक मानों बनवाये हैं॥ बाजत नगारखाना गरजत घन जैसे बिजली चमक से निशान चमकाये हैं॥ बरषत मेघसे सरस लोक दान देत गुण सुण कीरति अधिक लोक धाये हैं॥ भिक्षुक अनेक देश देशन के मेले भये सुखी गिरनार जीपै जैनी लोग आये हैं॥ १७॥

चढ़े गिरनार जी पे तीन प्रदक्षिणा दे जय जयकार बोल २ मन हर्षाये हैं॥ अष्ट द्रव्य हाथ लिये पूजनेका ठाठ किये कञ्चन के थार बीच मोती भरवाये हैं॥॥ रतनों के दीपक दशांग धूप खासी खरी आरती उतारी तन फूले नासमाये हैं॥ १८॥

पूजे नेमिनाथ जिन नाथ तीन लोकनाथ इन्द्र चन्द्रनाथ पूजा कीनी जादोपति की॥ पृथिवी के नाथ सुरनाथ मृत्युलोकनाथ विद्याधरनाथ चक्रवर्तपतिरति

की॥ व्यंतर के नाथ हरिनाथ प्रति हरीनाथ नारद सहित मुनिगण सब जति की॥ इत्यादिक पूजन हरष जुत किये पीछे सब ही ने फेर पूजा कीनी राजमति की ॥ १९ ॥

करी है प्रतिष्ठा बिम्ब हेम के बनाय नये चतुर्विध संघ सन्मान अति कीनों है॥ यथायोग्य सब पहराय के तम्बोल दीने गुरु ने तिलक संघ पदवी को दीनो है। मासएक पूजन विधान कियो भली भांति उलटे पलट फेर निज घर चीन्हो है॥ सुनके नगर लोग आदरसूं लेने आये कृपण सुणत मन संकट नवीनो है ॥२०॥ हाय २ हम हूं न गये ऐसे संघ बीच देखो मालील्याओ सब लक्ष्मी बिटोर के॥ जो कि हम जाते नित खाते तो पराये शिर चढ़तो सो मैं ही लेतौ मांग के बिटोर के॥ फूल माल मैं ही देतो नेवज समेट लेतो पैसा टका लेतो सब ही के हाथ जोर के॥ मैं तो मन्द भागी मुझे कुमतिने घेर लियो छाती शिरपीट पीट रोवै शिर फोरके ॥ २१ ॥

घर आय खाट परे लक्ष्मी का शोक करे काल ज्वर चढ़ो आनअङ्ग तापतयो है॥ वायु पित्त कफ बढ़े कंठ घरड़ान लगो हाय पांव तेरि मोरे बावरो सो भयो है॥ सन्निपात व्याधि भई शुध बुध भूल गई हाय २ कर देखो माली धन लियो है॥ आरितरुद्र परिणाम न

शरीर तजो मरके कृपण नर्क तीसरे में गयो है ॥ २२ ॥

कृपण की नारी भली क्रिया करी बालम की बार में दिवस सर्व पशुन को जिमायो है। देख सब लक्ष्मी विचार कियो मन बीच यह तो चपल अनित्य भाव भायो है ॥ लगी खरचन धन जिनको भवन कीनो करी है प्रतिष्ठा धन खूबही लगायो है॥ आप लई दिक्षाना इच्छा थी भोगन की मनकी बैराग्य भाव प्रघट दिखायो है ॥२३॥ द्वादशानुप्रेक्षाय मनमें बैराग्य लाय केशका कराय लोच अर्ज कांसो भई है ॥ तप करे द्वादश परीसा सहै दोय बीस तीजे चौथे दिन उठ उदण्ड व्रत बई है ॥ तिहूं काल सामायक दस विधि धर्म पाले तीनों रतन हिए धार सूधी पर नई है ॥ ऐसे काल पूरो कीनो अंत संन्यास लीनो शुभध्यान देह त्याग तीजे स्वर्ग गई है॥२४॥

छापै ॥ कृपण गयो मर नरक स्वर्ग सुख बनितां पायौ। धिक धिक वाको हुई नार जस जग में गायौ। द्रव्य गया नहिं संग युगल में को जननी के ॥ जश अपजश रहजात बुद्धि नहिं हो सबही के ॥ कहे लाल बिनोदी अन सुनो द्रव्य पाय जश लीजियो। कर जाति प्रतिष्ठा यज्ञ शुभ दान सबन को दीजियो ॥ २५ ॥

इति कृपण पचीसी समाप्तः।

४३ उपदेशपचीसी प्रारम्भः ॥

दोहा ॥

वीतराग के चरणयुग, बन्दों शीश नवाय ।
कहूंपदेशपचीसिका, श्रीगुरु के सु पसाय ॥ १ ॥

चौपाई—बसत निगोद काल बहुगयो । चेतन सावधान ना भयो ॥ दिन दश निकस बहुरि फिर परना । एते पर एता क्या करना ॥ २ ॥ अनन्त जीवकी एक ही काय । जन्म मरण एकत्र कराय ॥ स्वांस मे बार अठारह मरना एते पर एता क्या करना ॥ ३ ॥ अक्षर भाग अनन्तम कहो । चेतनज्ञान यहां तक रहो ॥ कौन शक्ति से तहां कि करना । एते पर एता क्या करना ॥४॥ पृथिवी तेज नीर अरु वाय । वनस्पती में बसे सुभाय ॥ ऐसी गति में बहु दुःख भरना । एते पर एता क्या करना ॥ ५ ॥ केतिक काल यहां ही गयो । तहं से कढ़ विकलत्रय भयो ॥ ताको दुःख कुछ जाय न बरना । एते पर एता क्या करना ॥ ६ ॥ पशुपक्षी की काया पाई । चेतन तहां रहो लपटाई ॥ बिना विवेक कहो क्यों तरना । एते पर एता क्या करना ॥ ७ ॥ इम तिर्यंच महादुःख सहे । सो काहूसे जाय न कहे ॥ पाप कर्म से

इस गति परना । एते पर एता क्या करना ॥ ८॥ बहुरो पड़ो नर्क के माहीं । सो दुःख कैसे वरणों जाहीं ॥ भू दुर्गन्ध नाक जहां सरना। येतेपर येता क्या करना ॥ ९ ॥ अग्नि समान तप्त भू कही । कित हू शीत महा बन रही ॥ शूली सेज क्षणक ना डरना । येतेपर येता क्या करना ॥ १० ॥ परम अधर्मी असुर कुमार । छेदन भेदन करें अपार ॥ तिनके वश से नाहिं उबरना । येते पर येता क्या करना ॥ ११ ॥ रंचक सुख जहं जियको नाहीं बसते यहां नर्क गति माहीं ॥ देखत दुष्ट महाभय भरना । येते पर येता क्या करना ॥ १२ ॥ पुण्य योग भयो सुर अवतार । फिरत फिरत इस जगति मझार ॥ आवत काल देख थर हरना । येते पर येता क्या करना ॥ १३ ॥ सुर मंदिर अरु सुख संयोग । निशिदिन मन वांछित वर भोग ॥ क्षण इक माहिं तहां से टरना । येते पर येता क्या करना ॥ १४ ॥ बहुत जन्मतर पुण्य कमाय । तब कहुं लही मनुज पर्याय ॥ तामें लयो जरादिक मरना । एतेपर येता क्या करना ॥ १५ ॥ धन यौवन सबही ठकुराई । कर्म योग से नव निधि पाई ॥ सो स्वप्नान्तर कैसा झरना । येते पर येता क्या करना

॥ १६ ॥ निशि दिन भोग विषय लपटाना । जाने नाहिं कौन गति जाना ॥ छिण २ काल आयु को चरना । येते पर येता क्या करना ॥ १७ ॥ इन विषयन के तो दुःख दीनो । तबहूं तू तिनही रस भीनो ॥ तनक विवेक हृदय ना धरना । एते पर एता क्या करना ॥ १८ ॥ पर संगति कितना दुःख पावे । तब भी तो को लाज न आवे ॥ बासन संग नीर ज्यों जरना । एते पर एता क्या करना १९ देव धर्म गुरु शास्त्र न जाने । स्वपर विवेक न उर में आने ॥ क्यों होरी भव सागर तरना । एते पर एता क्या करना ॥ २० ॥ पांचों इन्द्रिय अति बटपारे । परम धर्म धन मूसन हारे ॥ खांय पिवहिं एता दुःख भरना । एते पर येता क्या करना ॥ २१ ॥ सिद्ध समान न जाने आप । यासे तोहि लगत है पाप । खोल देख घट पटहि उघरना । येते पर येता क्या करना ॥ २२ ॥ श्रीजिन बदन अमिय रस वानी । पीवे नाहिं मूढ़ अज्ञानी ॥ जासे होय जन्म मृत्यु हरना । येते पर येता क्या करना ॥ २३ ॥ जो चेते तो है यह दाव । नातर बैठा मंगल गाव ॥ फिर यह नर भव वृक्ष न फरना । येते पर येता क्या करना ॥ २४ ॥ भैया

बिनवे वारम्बार। चेतन चेत भलो अवतार। हो दूलह शिव रानी बरना। येते पर येता क्या करना ॥२५॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय। सो परमात्म ध्याइये यही मोक्ष सुख दाय ॥ २६ ॥ सत्रह सौ इकताल के मार्ग शिर सित पक्ष। तिथि शंकर गण लीजिये श्री रविवार प्रत्यक्ष ॥२७॥

। इति उपदेश पचीसी सम्पूर्णम्।

४४ धर्म पच्चीसी

॥ दोहा ॥

भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्म धुरन्धर धीर।
नमत सुरेन्द्र जगत महरण, नमो त्रिविधगुरवीर ॥

॥ चौपाई ॥

मिथ्या विषयन में रत जीव। तातैं जग में भ्रमें सदीव ॥ विविध प्रकार गहै परयाय। श्री जिन धर्म न नेक सुहाय ॥ २ ॥ धर्म बिना चहुं गत में परे। चौरासी लख फिर फिर धरे ॥ दुख दावानल माहिं तपन्त। कर्म करे फल भोग लहंत ॥३॥ अति दुर्लभ मानुष पर्याय। उत्तम कुल धन रोग न काय ॥ इस अव-

सर में धर्म न करे। फिर यह अवसर कबहुं न सरे ॥४॥ नर की देह पाय रे जीव । धर्म विना पशु जान स-दीव ॥ अर्थ काम में धर्म प्रधान। ता विन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करे पुनीत। शुभ संगत आवे कर प्रीति ॥ विघ्न हरे सब कारज करे। धन सों चारों कूने भरे ॥ ६ ॥ जन्म जरा मृत्यु के वस होय। तिहूं काल जग डोले सोय ॥ श्री जिन धर्म रसायन पान। कबहूं न रुचे उपजे अज्ञान ॥ ७ ॥ ज्यों कोई मूर्ख नर होय। हलाहल गहे अमृत खोय ॥ त्यों शठ धर्म पदार्थ त्याग। विषयनसों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥ मिथ्या ग्रह गहिया जो जीव । छांड़ धर्म विषयन चित्त दीव ॥ ज्यों पशु कल्प वृक्ष को तोड़। वृक्ष धतूरे की भू जोड़ ॥ ९॥ नर देही जानों प्रधान। विसर वि-षय कर धर्म सुजान ॥ त्रिभुवन इन्द्रतने सुख भोग। पूजनीक हो इन्द्र न जोग ॥ १० ॥ चन्द्र विना निश गज विन दन्त। जैसे तरुण नारि विन कंत ॥ धर्म विना त्यों मानुष देह। तातें करिये धर्म सुनेह ॥ ११ ॥ हय गय रथ पायक बहु लोग। सुभट बहुत दल चार मनो ग ॥ ध्वजा आदि राजा विन जान ॥ धर्म विना त्यों

नर भव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध विना है फूल । नीर विहीन सरोबर धूल ॥ ज्यों विन धन शोभित नहीं भोन । धर्म बिना त्यों नरचिन्तोन ॥ १३ ॥ अरचे सदा देव अरहन्त । चर्चे गुरु पद करुणावन्त ॥ खरचे दान धर्म सों प्रेम । लवे विषय सुफल नर एम ॥१४ ॥ कमला चपल रहे थिर नाहिं । यौवन रूप जरा लिपटाहिं ॥ सुत मित नारीनाव संयोग । यह संसार स्वप्नको भोग ॥१५॥ यह लख चित धर शुद्ध स्वभाव । कीजै श्रीजिन धर्म उपाव ॥ यथा भाव तैसी गति गहै । जैसी गति तैसो सुख लहै ॥ १६ ॥ जो मूर्ख है धर्म कर हीन । विषय ग्रन्थ रति व्रत नहीं कीन ॥ श्रीजिन भाषित धर्म न गहै । सो निगोद को मार्ग लहै ॥ १७ ॥ आलस मन्द बुद्ध है जास । कपटी विषय मग्न शठ तास ॥ कायरता मद परगुण ढके । सो तिर्यञ्चयोनि लह सकै ॥ १८॥ आरत रुद्र ध्यान नित करै । क्रोध आदि मत्सरता धरै ॥ हिंसक वैर भाव अनुसरे । सो पापिष्ठ नरक गति परै ॥ १९ ॥ कपटि हीन करुणा चित मांहि । है उपाधि यह भूले नाहि ॥ भक्तिवन्त गुणवन्त जो कोय । सरल स्वभाव सो मानुष होय ॥ २० ॥ श्रीजिन वचन मग्न तप

दान । जिन पूजे दे पात्रहि दान ॥ रहे निरन्तर विषय उदास । सोई लहै स्वर्ग आवास ॥ २१ ॥ मानुषयोनि अन्त के पाय । सुन जिन बचन विषय विसराय॥ गहे महाव्रत दुद्धर वीर । शुकल ध्यान धर लहै शिव धीर २२ ॥ धर्म करत सुख होय अपार । पाप करत दुःख विविध प्रकार ॥ बाल गुपाल कहै सब नार । इष्ट होय सोई अवधार ॥ २३ ॥ श्रीजिन धर्म मुक्त दातार । हिंसा धर्म परत संसार ॥ यह उपदेश आन बड़ भाग । एक धर्म सो कर अनुराग ॥ २४ ॥ व्रत संयम जिन पदथुतिसार । निर्मल सम्यक् भाव निवार ॥ अन्त कषाय विषय कृषि करो । जो तुम मुक्ति कामिनी वरो ॥ २५ ॥

॥ दोहा ॥

बुध कुमदनीशशि सुखकरन, भोदुखनाशन जान । कह्यो ब्रह्म जिनदासयह, ग्रंथ धर्म की खान ॥ २६ ॥ द्यानत जे बांचे सुनें, मन में करें उछाय । ते पावें सुख सास तो मन बांछित फल दाय ॥ २७ ॥

इति श्री धर्म पच्चीसी सम्पूर्णम् ।

४५ अध्यात्म पञ्चासिका।

दोहा—आठ कर्म के बन्ध में बन्धे जीव भव बास। कर्म हरे सब गुण भरे नमों सिद्ध सुखरास ॥ १ ॥ जगत माहिं चहुं गति विषैं जन्म मरण बश जीव। मुक्ति माहिं तिहुं काल में चेतन अमर सदीव ॥ २ ॥ मोक्ष माहिं सेती कभी जग में आवे नाहि। जग के जीव सदीव ही कर्म काट शिव जाहिं ॥ ३ ॥ पूर्व कर्म उदोत तैं जीव करैं परणाम। जैसे मदिरापान तैं करैं गहल नर काम ॥ ४ ॥ तातैं बांधै कर्म को आठ भेद दुखदाय। जैसे चिकने गात में धूलिपुंज जमजाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मन के उदय करे जीव बहु भाय। फिर के बांधे कर्म को यह संसार सुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावन तैं पुण्य है अशुभ भाव तैं पाप। दुहू आच्छादित जीव सो जानसके नहीं आप ॥ ७ ॥ चेतन कर्म अनादि के पावक काठ बखान। छीर नीर तिल तेल ज्यों खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल बंध्यो गठडी विषै भानु छिपो घन माहिं। सिंह पींजरे में दियो जोर चले कछु नाहिं ॥ ९ ॥ नीर बुझावे आग को जले टोकनी माहिं। देह माहिं चेतन दुखी निज सुख पावै नाहिं ॥ १० ॥ तदपि देह सौं क-

टस है अन्तर तन हैं संग । सो तन ध्यान अग्नि दहै तब शिव होय अभंग ॥११॥ राग दोष तैं आपही पड़े जगत के माहिं। ज्ञान भाव ते शिव लहै दूजा संगी नाहिं ॥१२॥ जैसे काहू पुरुष के द्रव्य गड़ो घर मांहि। उदर भरे कर भीख से ब्योरा जाने नाहिं ॥ १३ ॥ ता नर से किनही कहा तू क्यों मांगे भीख। तेरे घर में निधि गडी दीनो उत्तम सीख ॥ १४। ताके वचन प्रतीत सो हर्ष कियो मन माहिं। खोद निकाले धन बिना हाथ परे कछु नाहिं ॥१५॥ त्यों अनादि को जीव के परजै बुद्धि बखान। मैं सुर नर पशु नर की मैं मूर्ख धनिमान ॥१६॥ तासों सतगुरु कहत हैं तुम चेतन अभिराम। निश्चय मुक्ति सरूप हो ये तेरे नहिं काम ॥ १७ ॥ काल लब्ध परतीत सो लख्यो आप में आप। पूर्णज्ञान भये विना मिटे न पुण्य अरु पाप ॥१॥ पाप कहत हैं पुण्य को जीव सकल संसार। पाप कहैं हैं पुण्य को ते विरले मति धार ॥१९॥ बन्दीखाने में परो जाते छूटै नाहिं। बिन उपाय उद्यम किये त्यों ज्ञानी जगमाहिं ॥२० ॥ साबुन ज्ञान विराग जल कोरा कपड़ा जीव। रजक दक्ष धोवे नहीं विमल न ह्वै सदीव ॥२१॥

ज्ञान पवन तप अगन विन दहे मूस जिय हेम। कोड़ वर्ष लौं राखिये शुध होय मन केम ॥२२॥ दरव कर्म नौ कर्म तैं भाव कर्म ते भिन्न। विकल्प नहीं शुवुध के शुध चेतना चिन्न ॥ २३ ॥ चारो नाहीं सिद्ध के तू चारो के माहिं। चार विना से मोक्ष है और वात कछू नाहिं ॥ २४ ॥ ज्ञाता जीवन मुक्ति है एक देश यह वात। ध्यान अग्नि बिन कर्म बन जले न शिव किम जात ॥२५॥ दर्पण काई अथिर जल मुख दीसे नहीं कोय। मन निर्मल थिर विन भये आप दरश क्यों होय ॥२६॥ आदिनाथ केवल लह्यो सहस वर्ष तप ठान। सोई पायो भरत जी एक महूरत ज्ञान ॥ २७ ॥ राग दोष संकल्प है नय के भेद विकल्प। दोय भाव मिट जाय जवतब सुख होय अनल्प ॥२८॥ राग विराग दुभेद सो दोयरूप परणाम। रागी भूमिया जगत के वेरागी शिव धाम ॥२९॥ एक भाव हैं हिरण के भूख लगे तृण खाय। एकभाव मंजार के जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥ विविध भाव के जीव बहु दीसत हैं जग माहिं। एक कछु चाहे नहीं एक तजे कछु नाहिं ॥ ३१ ॥ जगत अनादि अनन्त है मुक्ति अनादि अनन्त। जीव अनादि अनन्त है कर्म दु-

विधि सुन संत ॥३२॥ सब के कर्म अनादि के कर्म भव्य के अन्त । कर्म अनन्त अभव्य के तीन काल भटकंत ॥३३॥ परश वरन रस गंध सुर पांचो जाने कोय । वोले डोले कौन है जो पूछे है सोय ॥ ३४ ॥ जो जाने सो जीव है जो माने सो जीव । जो देखे सो जीव है जीवै जीव सदीव ॥३५॥ जान पना दो विधि लसे विषै निरविषय भेद । निरविषयी सम्बर लसे विषयी आश्रव वेद ॥३६॥ प्रथम जीव श्रद्धान सो कर वैराग्य उपाय । ज्ञान क्रिया सो मोक्ष है यही बात सुखदाय ॥ ३७ ॥ पुद्गल से चेतन बंध्यो यह कथनी है हेय । जीव बंध्यो निज भाव सो यही कथन आदेय ॥३८॥ बंध लखे निज और से उद्यम करे न कोय । आप बंध्यो निज सो समझ त्याग करै शिव होय ॥ ३९ ॥ यथा भूप को देख के ठौर रीति को जान । तब धन अभिलाषी पुरुष सेवा करैं प्रधान ॥ ४० ॥ तथा जीव सरधान कर जाने गुण परयाय । सेवे शिव धन आश धर समता सो मिल जाय ॥ ४१ ॥ तीन भेद व्यहार सो सर्व जीव सब ठाम । बहरन्त परमात्मा निश्चय चेतन राम ॥ ४२ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म रति अहं बुद्धि सब ठौर । हित अनहित सरधै नहीं मूढ़न में शिर मौर ॥४३॥ आप आप पर पर लखै

हेय उपादेज्ञान । अव्रती देश व्रती महा व्रती सबै स-
तिमान ॥ ४५ ॥ जा पद में सब पद लसे दर्पन ज्यों
अविकार । सकल निकल परमात्म नित्य निरञ्जन सार
॥ ४५ ॥ बहरात्म के भाव तज अन्तर आत्म होय । प-
रमात्म ध्यावे सदा परमात्म सो होय ॥ ४६ ॥ बूंद उ-
दधि मिल होत दधि वाती फरश प्रकाश । त्यों पर-
मात्म होत है परमात्म अभ्यास ॥ ४७ ॥ सब आगम को
सार ज्यों सब साधन को धेव । जाको पूजे इन्द्र सो सो
हम पायो देव ॥ ४८ ॥ सोहं सोहं नित्य जपे पूजा आ-
गम सार । सत संगत में बैठना यही करे व्यवहार ॥४९॥
अध्यात्म पञ्चाशिका माहिं कह्यौ जो सार । द्यानत ता-
हि लगे रहो सब संसार असार ५० (इति)

४६ हुक्कानिषेध ॥

दोहा—बन्दों वीर जिनेश पद, कहों धर्म जगसार ।
बरते पंचमकाल में, जगजीवन हितकार ॥१॥
ताहि न त्यागे धूम सो, जारे निज उर जान ।
देखोचतुर बिचारके, तिन सम कौन अयान ॥२॥

चौपाई छन्द ॥

हैं जग में पुरुषारथ चार, तिनमें धर्म पदारथ सार ।

जाके सधे होय सब सिद्ध. याविन प्रगटे एक न रिद्ध॥३॥ सो पुनि दयारूप जिन कहो, करुणा विन कहुं धर्म न लहो। या में छहो काय को घात, लहिये कहां दया की वात ॥४॥ सो अब सुनो सबै विरतंत, सुनिके त्याग करो मतिवंत। हरित काय की उतपति येह, अग्नि संयोग भूमि गनि लेह ॥५॥ अग्नि नीर है याको साज, इन विन सरै नहीं यह काज। काढत धूम बदन तें जान, होय समीर काय की हान ॥६॥ इहि विधि थावर दया न होय, त्रस को नास होय सुनि सोय। कुंथू आदि जीव या माहिं, एंचत स्वांस सबै मर जाहिं॥७॥ उपजें जीव गुड़ाखू बीच, हुक्क है तहां त्रसन की मीच। हिंसा होय महा अघ संच, ऐसे दया पले नहीं रंच ॥८॥ यही वात जाने सब कोय, जहं हिंसा तहं धर्म न होय। बहुरि धर्मनाश भयो जहां, सकल पदारथ विनसे तहां ॥९॥ तातें निंद्य जान यह कर्म, पाप मूल खोवे धनधर्म। यामें कोई न देखे स्वाद, प्रात होतही आवे याद ॥१०॥ भव्य जीव सामायिक करैं, सब जीवन सों समता धरैं। यह जोरे सब याको साज, और सकल विसरे घर काज ॥११। सेवै याहि पुरुष नर अंध, यातें मुख आवे दु-

गंन्ध । उत्तम जीवन को नहीं काम, सिलगे हलक होय उर स्याम ॥१२॥ जाको कोई ना आदरे सो कुवस्तु सब यामें परे । यातें सब पवित्रता जाय, परकी जूंठ गहै मन लाय ॥१३॥ यासों कछू पेट नहीं भरे, हाथ जरें मुख कडुवो परे । गिने न याकर रैनि सवार, बुरो व्यसन है देख विचार ॥१४॥ दोहा ॥

स्वाद नहीं स्वारथ नहीं, परमारथ नहीं होय ।
क्यों झपटें जग जूंठ को, यही अचंभो मोय ॥१.॥

चौपाई छन्द ॥

साधर्मी जन बैठे ज़हां, सोभै नहीं पुरुष वह तहां । जिमि हंसन की गोट सझार, काग न शोभा लहै लगार ॥१६ यामें नफा नहीं तिल मान, प्रगट हानि है शैल समान । यह विवेक बुध हिर्दै धरो, ऐसी मान भूलमत करो ॥१७॥ इतनी विनती पे हट गहे, मोह उदय त्याग नहीं कहे । तासो मेरी कछु न बसाय, लाठी लेय न मारी जाय ॥१८॥ दोहा ॥

सरल चित्त सुनि भेद यह, तजे आप सों आप ।
हठ ग्राही हठ गहि रहे, जिन के पोतें पाप ।

हठी पुरुष प्रति यह बचन सर्व अकारथ जाहिं ।
ज्यों कपूर को मेलिये, कूकुर के मुख मांहि ॥२०॥ भूधर

दास मन सों कही, वही यथारथ बात। सुहित जान हृदय धरो, कोप करो मत भ्रात ॥२१॥ सबही को हित सीख है, जात भेद नहीं कोय। अमृत पान जोई करे, ताही को सुख होय ॥२२॥ कवित्त ॥

जहर की सार दुष्ट दुलही हलाहल की सौतो की बहिन परपंच रूप लाजी है। नानो करियारे की धतूरे की नमानी पितियानी बच्छनाग की जहान में विराजी है॥ कहैं गंगादत्त यह पदाजे धन्य प्राणी श्री अफीम की जिठानी विष खोपरे की आजी है। नाहुर की मौसी महतारी सिंघिया की यह तमाखू दई मारी को किन्हे उपराजी है॥ २३॥ चित्त को भ्रमाय देत मन को लुभाय लेत गुण कों न देखे कछु खाये क्या भलाई है। दृष्टन विनाश करे मुख में दुर्गन्धि लहे उ-ष्णता की बाधा ने रुकता सुखाई है॥ गर्धभ के मूत्र-वत जामन लगाय कर कृषीकार बोय पुनि सत्र ही क-रि तपाई है। धन्य है खवय्यन को खाय जो तमाखू कों सभा सांझ दूर होय पुच पुची लगाई है॥ २४॥

लावनी ॥

धर्म मूल आचरण विगाड़ा इस का हेतु नहीं रहा इलम।

बिबेक जाता रहा हिये से सबकी जूंठी पिये चिलम ॥टेक॥ प्रथम तमाखू महा अशुच है म्लेच्छ इस को बनाते हैं। छूने योग्यनहीं बर कुलके अपना तोय लगाते हैं॥ इंडी चिलम में धूम योग ते जीव असंख्य बताते हैं। पीते ही मरजाय सबी वह जिन श्रुति में गाते हैं॥ होती इस में अपार हिन्सा जरा दया नहीं आती गिलम। विबेक० ॥ कौम रिजालों के साथ पीते गई आबरू ये क्या बनी है। हया दूर कर धरम लजाते उन्हीं में आ गन की मत सनी है॥ वो धर्म गांजा पियें पिलावे उसी ने बुद्धि तेरी ये हनी है। श्वांस प्रगट कर बदन जलाता प्राण हरण को ये हरफनी है॥ लगाना इसका बहुत बुरा है पीते तन में पड़े खिलम। विवेक० ॥ था-बर त्रस कर सहित भरा जल कुवास का ये निधान हुक्का। इतोय पड़ते सुजीव मरते हैं पाप का ये निधान हुक्का॥ रोग भिन्न हो जाय कहैं नर पीते हैं हम यह जान हुक्का। शुद्ध औषधि करो ग्रहण तुम अशुचि जान करियो दूर हुक्का॥ सीख सुगुर की यही रूपचन्द त्यागो जल्द मत करो बिलम। विवेक० ॥ २५ ॥ इति ॥

४७ स्तोत्र भूधर दास कृत।

॥ दोहा ॥

कर जिन पूजा अष्ट विधि भाव भक्ति बहु भाय।
अब सुरेश परमेश थुति करत शीश निज नाय ॥१॥

॥ चौपाई ॥

प्रभु इस जग समर्थ ना कोय। जा से तुम यश वर्णन होय। चार ज्ञान धारी मुनि थकें। हम से मंद कहां कर सकें॥ २ ॥ यह उर जानत निश्चय कीन। जिन महिमा वर्णन हम हीन ॥ पर तुम भक्ति थके वाचाल तिस वस होय गुहूं गुण माल ॥ ३ ॥ जय तीर्थंकर त्रिभुवन धनी। जय चन्द्रोपम चूड़ा मणी॥ जय जय परम धर्म दातार। कर्म कुलाचल चूरणहार ॥ ४ ॥ जय शिव कामिन कन्त महन्त। अतुल अनंत चतुष्टय वंत ॥ जय २ आश भरण बड़ भाग। तप लक्ष्मीक सुभग सुभाग जय २ धर्म ध्वजा धर धीर। स्वर्ग मोक्ष दाता वर वीर जय रत्न त्रय रत्न करंड। जय जिन तारण तरण तरंड ॥ ६ ॥ जय २ समोशरण शृंगार। जय संशय वन दहन तुषार॥ जय २ निर्विकार निर्दोष। जय अनन्त गुण माणिक कोष ॥ ७॥ जय जय ब्रह्मचर्य दल साज। काम

सुभट विजयी भटराज । जय जय मोह महा तरु करी । जय जय मद कुंजर केहरी ॥ ८ ॥ क्रोध महानल मेघ प्रचंड । मान महीधर दामिन दण्ड ॥ माया बेलि धनंजय दाह । लोभ सलिल शोषण दिन नाह ॥ ९ ॥ तुम गुण सागर अगम अपार । ज्ञान जहाज न पहुंचे पार ॥ तट ही तट पर डोले सोय । कार्य सिद्धि तहां ही होय १० तुमरी कीर्त्ति बेलि बहु बढ़ी । यत्न बिना जग मंडप चढ़ी ॥ और कुदेव सुयश निज चहैं । प्रभु अपने थल ही यश लहैं ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमैं बिन ज्ञान । कीना मोह महा विष पान ॥ तुम सेवा विष नाशक जड़ी । यह मुनि जन मिल निश्चय करी ॥ १२ ॥ जन्म लता मिथ्या मत मूल । जन्म मरण लगें तहां फूल ॥ सो कब हूं बिन भक्ति कुठार । कटै नहीं दुःख फल दातार ॥ १३ ॥ कल्प तरोवर चित्रा बेलि । काम पोर वा नव निधि मेलि ॥ चिन्तामणि पारस पाषाण । पुण्य पदार्थ और महान ॥ १४ ॥ ये सब एक जन्म संयोग । किंचित सुख दातार नियोग ॥ त्रिभुवन नाथ तुम्हारी सेव । जन्म जन्मसुख दायक देव ॥१५॥ तुम जग बांधव जगतात । अशरण शरण बिरद विख्यात ॥ तुम सब

जीवन रक्षा पाल । तुम दाता तुम परम दयाल ॥१६॥ तुम पुनीत तुम पुरुष प्रमान । तुम समदर्शी तुम सब जान । जय जिन यज्ञ पुरुष परमेश । तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥ १७ ॥ तुम जग भर्ता तुम जग जान । स्वामि स्वयम्भू तुम अमलान ॥ तुम बिन तीन काल तिहुं लोय । नाहीं शरण जीव को कोय ॥ १८ ॥ इस से अबकरुणा निधि नाथ । तुम सन्मुख हम जोड़ें हाथ ॥ जब लों निकट होय निर्वाण । जग निवास छूटै दुःख दान ॥ १९ तब लों तुम चरणांबुज वास । हम उर होउ यही अरदास ॥ और न कुछ वाछा भगवान । हो दयाल दीजे वरदान ॥ २० ॥ ॥ दोहा ॥

इस विधि इन्द्रादिक अमर कर बहु भक्ति विधान
निज कोठे बैठे सकल प्रभु सन्मुख सुख मान ॥२१॥
जीति कर्म रिपु ये भये केवल लब्धि निवास ।
सो श्रीपार्श्व प्रभू सदा करो विघ्न घन नास ॥२२॥ सम्पूर्णम्॥

४८ स्तोत्र उदय राज कृत ।

॥ दोहा ॥

गुण समुद्र सखि रूप तुम, हुलशो चित्त अपार ।
अब मो हृदय रहो सदा, निर्विकल्प अविकार ॥१॥

[पद्धड़ी छन्द]

राजत स्वभाव मय त्याग आन। उपकारी सब जीव न सुजान ॥ आनन्द रूप नित रहैं आप। तज दिये सर्व विधि पुण्य पाप ॥ २ ॥ सामान्य विशेष गुणात्म शुद्ध। स्व चतुष्टय युत राजत सुशुद्ध॥ त्रैकाल्य अर्थ पर्याय जान। हो वीतराग सब भर्म भान ॥ ३ ॥ शुधात्म रस आस्वाद लेत। आकुलता बिन सब सुख समेत ॥ लहि स्वच्छ स्वच्छन्द अमंद ज्ञान। लोक रु अलोक जानो प्रमाण ॥ ४ ॥ स्वाभाविक सम्पति देन हार। स्वयमेव करन जीवन उधार ॥ प्रभु तुम सरूप लखि धरत धीर। मैं दुःखी भयो मो सुनो पीर ॥ ५ ॥ भर्मों अनादि अज्ञान धार। सुख मानो परसे प्रीति पार॥ इन्द्रियों जनित सुख लीन होय। सब विधि आपनपो दयो खोय ॥ ६ ॥ प्रिय त्रिय सुत मात पिता सुदेख। अपने माने कारण विशेष ॥ पर्याय बनी असमान जाति। विन भेद लिये यह सब सुहाति ॥ ७ ॥ मैं करों कहा कछु ना बसाय। विधि योग पाय सुधिविहर जाय ॥ तुम से कबलों कहिये सुजान। जानते स्वपर परणति प्रमाण ॥ ८ ॥ मैं सहों दुःख सो हरो नाथ। अब ही

कीजे निज चरण साथ ॥ तुम सब लायक ज्ञायक उदार रत्नत्रय सम्पति देन हार ॥९॥ उपकारी तुम बिन नहीं कोय। तुम ही से यह विधि हो डुहोय ॥ मैं विरद सुनो अद्विलिय एक। आपन सम कर तारे अनेक ॥१०॥ यह बिरद धार मुझे तार देव। उपकार उचित हो करो एक ॥ हो ज्ञानानन्द सरूप धार। रागादिक से मैं करो उद्धार ॥ ११ ॥ नो चाह रही ना कछू और। मैं चाहत हों निज भाव दौर ॥ महिमा दीखे अद्भुत जि- नेश। इच्छा पूरत ना कष्ट लेश ॥ १२ ॥ मुझ अन्त रंग उपजी जो चाह। सो तुम बिन निज कहों पीर काह सुख लहों स्वसंवेदन जो आप। अब देहु मिटे सब मोह ताप ॥ १३ ॥ दोहा।

सब बिधि समर्थ हो प्रभु मैं विधि वस हों दीन।
चरण शरण निज जानके उदय करो स्वाधीन ॥१४॥

। इति सम्पूर्णम्।

४९ स्तोत्र दौलत राम कृत।

॥ दोहा ॥

सकल ज्ञय ज्ञायक तदपि निजानन्द रस लीन।
सो जिनेन्द्र जयवन्त नित अरि रज रहस बिहीन ॥१॥

॥ पद्धड़ी छन्द ॥

जय वीतराग विज्ञान पूर। जय मोह तिमिर को हरन सूर॥ जय ज्ञान अनन्ता नन्त धार। दृग सुख वीर्य मंडित अपार॥ २॥ जय परम शांति मुद्रा समेत। भवि जन को निज अनुभूति देत॥ भव भोग तजे मन बचन काय। तुम ध्वनि हो सब विभ्रम नशाय॥३॥ तुम गुण चिन्तन निज पर विवेक। प्रगटै विघटे आपद् अनेक॥ तुम जग भूषण दूषण वियुक्त। सब महिमा युक्त विकल्प मुक्त॥ ४॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतन सरूप। परमात्म परम पावन अनूप॥ शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन। स्वाभाविक परणति मय अछीण॥५॥ अष्टादश दोष विमुक्त धीर। स्व चतुष्टय में राजत गंभीर॥ मुनि गणधरादि सेवत महन्त। नव केवल लब्धि रमा धरन्त॥ ६॥ तुम शासन सेय अमेय जीव। शिव पद जात जेहैं सदीव॥ भव सागर में दुख क्षार वार। तारण को और न आप तार॥ ७॥ यह लख निज दुख गद हरण काज। तुमही निमित्त कारण इलाज॥ जाने यासे मैं शरण आय। उचरो निज दुखजो

चिर लहाय ॥ ८ ॥ मैं भ्रमो आप पद विसर आप। अपनाये विधि फल पुन्य पाप ॥ निज को पर का कर्ता पिछान। पर में अनिष्ट इष्टता ठान ॥ ९ ॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि। ज्यों मृग मृगतृष्णा जान बार। तन परणति में आयो चितार। कबहूं न अनुभवो स्वपद सार ॥१०॥ तुम को जाने बिन नाथ क्लेश पायो सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु नारक गति सुर नर मझार। धर धर भव मरो अनन्त बार ॥ ११ ॥ अब काल लब्धि बल ये दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शांति भयो मिट सकल द्वन्द। चाखो स्वात्म रस दुख निकन्द ॥१२॥ या से ऐसी अब करो नाथ। बिछुड़े न कभी तुम चरण साथ ॥ तुम गुण का नाहिंव देव। जग तारण को तुम विरद एव ॥ १३ ॥ आत्म के अहित विषय कषाय। इन में मेरी परणति न जाय॥ मैं रहूं आप में आप लीन। सो करो होंउ जो निजाधीन ॥१४॥ मेरे न चाह कुछ और ईश। रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश ॥ सो कारज के कारण हो आप। शिव करो हरं मनमोह ताप ॥ १५ ॥ शशि शांति करण

तप हरण हेत । स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूषयों रोगजाय। त्यों तुम अनुभव विभ्रम नसाय ॥१६॥ त्रिभुवन तिहूं काल मझार कोइ । ना तुम विन निज सुखदाय होय ॥ सो उर यह निश्चय भयो आज । दुःख जलधि उवारन तुम जहाज ॥ १७ ॥

॥ दोहा ॥

तुम गुण गण मणि गण पती गणत न पायो पार ।
दौल अल्प मति किम करे नमों त्रियोग सम्हार ॥१८॥

५० स्तोत्र द्यानत राय कृत ।

[भुजंग प्रिया छन्द]

नरेन्द्रं फणीन्द्रं सुरेन्द्रं अधीसं । शतेन्द्रं सु पूजें भजें नाय शीसं ॥ मुनीन्द्रं गणेन्द्रं नमैं जोड़ हाथं । नमों-देव देवं सदा पार्श्व नाथं ॥ १ ॥ गजेंद्रं मृगेन्द्रं गहो तू छुड़ावे। महा आग ते नाग ते तू बचावे ॥ महा वीर ते युद्ध में तू जितावे । महा रोग ते बन्ध ते तू खुलावे ॥२॥ दुखी दुःख हर्त्ता सुखी सुख कर्त्ता। सदा सेवकों को महा नंद भर्ता ॥ हरे यक्ष राक्षस भूतं पिशाचं । विषं डाकनी विघ्न के भय अवाचं ॥ ३ ॥ दरिद्रीन को द्रव्य

के दान दीने। अपुत्रीन को ते भले पुत्र कीने ॥ महा संकटों से निकाले विधाता। सबे सम्पदा सर्व को देहि दाता ॥ ४॥ महा चोर का वज्र का भय निवारे। महा पवन के पुंज ते तू उवारे॥ महा क्रोध की अग्नि का मेघ धारा। महा लोभ शैलेश को वज्र भारा ॥ ५ ॥ महा मोह अंधेर को ज्ञान भानुं। महा कर्म कान्तार को दौ प्रधानं ॥ किये नाग नागिन अधः लोक स्वामी हरो मान तू दैत्य को हो अकामी ॥ ६ ॥ तुही कल्पवृक्षं तुही कामधेनुं। तुही दिव्य चिन्तामणी नाग एनुं॥ पशू नर्क के दुःख से तू छुड़ावे। महा स्वर्ग में मुक्ति में तू बसावे ॥ ७ ॥ करे लोह को हेम पाषाण नामी। रटे नाम सो क्यों न हो मोक्ष गामी ॥ करे सेव ताकी करे देव सेवा। सुने वचन सोही लहै ज्ञान मेवा ॥ ८ ॥ जपे जाप ताको नहीं पाप लागे। धरे ध्यान ता के सबै दोष भाजे ॥ बिना तोह जाने धरे भव घनेरे। तुम्हारी कृपा से सरें काज मेरे ॥ ९ ॥ ॥ दोहा ॥

गणधर इन्द्र न कर सके तुम विनती भगवान।
द्यानत प्रीत निहार के कीजे आप समान ॥१०॥ इति।

५१ वैराग्य भावना ।

॥ दोहा ॥

बीज राख फलभोगवे ज्यों किशान जग मांहिं ।
त्यों चक्री सुख में मगन धर्म विसारै नाहिं ॥

योगीरासा वा नरेन्द्र छन्द ॥

इस विधि राज्य करै नर नायक भोगे पुण्य बिशाल । सुखसागर मैं मग्न निरन्तर जात न जानो काल ॥ एक दिवश शुभकर्म योग से क्षेमंकर मुनि वंदे । देखे श्रीगुरु के पद पंकज लोचन अलि आनंदे ॥ १ ॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिरनायो कर पूजा स्तुति कीनी । साधु समीप विनय कर बैठो चरणों में दृष्टि दीनी ॥ गुरु उपदेशो धर्म शिरोमणि सुन राजा बैरागो । राज्यरमा वनतादिक जो रससो सब नीरसलागो ॥ २ ॥ मुनि सूरज कथनी किरणा वलि लगत भर्म बुधि भागी । भव तन भोग स्वरूप बिचारो परम धर्म अनुरागी ॥ या संसार महा वन भीतर भर्मत छोर न आवे । जन्मन मरन जरादों दाहे जीव महा दुःख पावे ॥ ३ ॥ कबहूं कि जाय नर्क पद भुंजे छेदन भेदन भारी । कबहूं कि

पशु पर्याय धरे तहां वध बन्धन भयकारी । सुरगति में परि सम्पति देखे राग उदय दुख होई। मानुष योनि अनेक विपति भय सर्व सुखी नहीं कोई ॥ ४ ॥ कोई इष्ट वियोगी विलखे कोई अनिष्ट संयोगी। कोई दीन दरिद्री दीखे कोई तनका रोगी ॥ किसही घर कलि-हारी नारी के वैरी समभाई । किस ही के दुख बाहर दीखे किस ही उर दुचिताई ॥५॥ कोई पुत्र बिना नित झूरै होय मरै तब रोवै। खोटी संतति से दुख उपजे क्यों प्राणी सुख सोवै॥ पुण्य उदय जिनके तिनकोभी नाहीं सदा सुख साता। यह जग वास यथार्थ दीखे स वही हैं दुःख घाता ॥ ६ ॥ जो संसार विसैं सुख होतो तीर्थंकर क्यों त्यागे। काहे को शिव साधन करते सं-यम से अनुरागे।देह अपावन अथिर घिनावनी इस में सार नकोई । सागर केजल से शुचि कीजै तो भी शुद्धि न होई ॥ ७ ॥ सप्त कुधातु भरी मल मूत्र से चर्म लपेटी सो है । अन्तर देखत या सम जग में और अपावन को है ॥ नव मल द्वार स्रवैं निश वासर नास लिये घिन आवे । व्याधि उपाधि अनेक जहां तहां कौन सुधी

सुख पावै ॥ ८ ॥ पोषत तो दुख दोष करे अति सोषत सुख उपजावे । दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूर्ख प्रीति बढ़ावे ॥ राचन योग्य स्वरूप न याको विरचन योग्य सही है । यह तन पाय महा तप कीजे इसमें सार यही है ॥ ९ ॥ भोग बुरे भवरोग बढ़ावे बैरी हैं जग जीके । बे रस होंय विपाक समय अति सेवत लागें नीके ॥ बज्र अग्नि विष से विष धर से हैं अधिके दुखदाई । धर्म रत्न को चोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहाई ॥१०॥ मोह उदय यह जीव अज्ञानी भोग भले कर जाने । ज्यों कोई जन खाय धतूरा सो सब कंचन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग मनोहर मन वांछित जन पावे । तृष्णा नागिन त्यों त्यों भंके लहर लोभ विष लावे ॥ ११ ॥ मैं चक्री पद पाय निरन्तर भोगे भोग घनेरे । तो भी तनक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे ॥ राज समाज महा अघ कारण बैर बढ़ावन हारा । वेश्या सम लक्ष्मी अति चंचल इसका कौन पत्यारा ॥ १२॥ मोह महा रिपु बैर विचारे जग जीव संकट डारे । घर कारागर वनिता बेड़ी परजन हैं रखवारे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण तपये

जिय को हितकारी। ये ही सार असार और सब यह चक्री जीय धारी ॥ १३ ॥ छोड़े चौदह रत्न नवोनिधि और छोड़े संग साथी। कोड़ि अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण तृणवत त्यागी। नीति विचार नियोगी सुत को राज्य दियो वड़ भागी ॥ १४ ॥ होइ निश्सल्य अनेक नृपति संग भूषण वसन उतारे। श्रीगुरु चरण धरी जिन मुद्रा पंच महाव्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि जगोत्तम धन्य यह धैर्य्य धारी। ऐसी सम्पति छोड़ वसे वन तिन पद धोक हमारी ॥ १५ ॥

॥ दोहा ॥

परिग्रह पोट उतार सब लीनों चारित्र पंथ।
निज स्वभाव में स्थिर भये बज्र नाभि निर्ग्रंथ ॥

इति वैराग्य भावना सम्पूर्ण ॥

५२ निर्वाण काण्ड भाषा।

॥ दोहा ॥

वीतराग बन्दों सदा भाव सहित शिर नाय।
कहों कांड निर्वाण की भाषा विविधि बनाय ॥१॥

॥ चौपाई ॥

अष्टापद आदीश्वर स्वामि। वांस पूज्य चंपापुर नामि ॥ नेमनाथ स्वामी गिर नारि। वन्दों भाव सहित उर धारि ॥ २ ॥ चर्म तीर्थंकर चर्म शरीर। पावापुर स्वामी महावीर ॥ शिखर सम्मेद जिनेश्वर वीस। भाव सहित वन्दों जगदीश ॥ ३॥ वरदत्त वरांगदत्त मुनीन्द्र। सायर दत्त आदि गुण वृन्द। नगर तार वर मुनि अठ कोड़। भाव सहित वन्दों कर जोड़ ॥ ४ ॥ श्री गिरि नारि शिखिर विख्यात। कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात ॥ शंबु प्रद्युम्न कुमर दो भांय। अनुरुद्धादि नमों तिन पांय ॥५॥ रामचन्द्र के दो सुत वीर। लाड नरेन्द्र आदि गुण धीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्ति मझार। पावागिरि वन्दों निर्धार ॥ ६ ॥ पांडव तीन वड़े राजान। आठ कोड मुनि मुक्ति प्रमाण। श्री सेतुंजय गिरि के शीस। भाव सहित वन्दों निशिदीश ॥ ७ ॥ सात बलभद्र मुक्ति को गये। आठ कोड़ि मुनि औरहू भये॥ श्री गज पन्थ शिखिर सुविशाल। तिनके चरण नमों तिहुकाल ॥ ८ ॥ राम हनू सुग्रीव सुडील। गवय गवा-

स्थ नील महा नील ॥ कोडि निन्यान्वै मुक्ति प्रमाण। तुंगी गिरि वन्दो धर ध्यान ॥ ९ ॥ नंग अनंग कुंवर दो जान। पञ्च कोडि अरु अर्ध प्रमाण ॥ मुक्ति गये सोना गिर शीस। ते वन्दों त्रिभुवन के ईश ॥ १० ॥ रावण के सुत आदि कुंवार। मुक्ति गये रेवा तट सार ॥ कोड पञ्च अरु लाख पचास। ते वन्दों धर परम हुलाश ॥११॥ रेवा नदी सिद्ध वर कूट। पश्चिम दिशा देह तहां छूट॥ द्वै चक्री दश काम कुमार। आठ कोडि वन्दों भव पार १२ वडवानी वड नगर सुचंग। दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग ॥ इन्द्रजीत अरु कुम्भजु कर्ण। ते वन्दों भव सा-गर तर्ण ॥ १३ ॥ सुवर्ण भद्र आदि मुनि चार। पावा गिरवर शिखर मझार ॥ चेलना नदी तीर के पास। मुक्ति गये वंदों नित तास ॥ १४ ॥ फलहोडी वर गांव अनूप। पश्चिम दिशा द्रोन गिरि रूप ॥ गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहां। मुक्त गये वन्दों नित तहां॥१५॥ व्याल महा व्याल मुनि दोय। नाग कुमार मिले त्रय होय ॥ श्री अष्टापद मुक्ति मझार। ते वन्दों नित सुरत स-म्हार॥१६॥ अचलापुर की दिशि ईशान। तहां मेंढ़ गिरि

नाम प्रधान ॥ साढ़े तीन कोडि मुनिराय । तिन के चरण नमों चितलाय ॥ १७ ॥ वंश स्थल बन के ढिंग जोय । पश्चिम दिशा कुंथुगिरि सोय ॥ कुल भूषण देश भूषण नाम । तिन के चरणों करों प्रणाम १८ दशरथ राजा के सुत कहे । देश कलिंग पञ्च सौ लहे ॥ कोट शिला मुनि कोडि प्रमाण । वन्दन करों जोड़ युग पान १९ समोशरण श्रीपार्श्व जिनेन्द्र । रेसंह गिरि नयनानन्द ॥ वरदत्तादि पञ्च ऋषिराज । ते वन्दों नित धर्म जहाज ॥ मथुरापुर पवित्र उद्यान । जम्बू स्वामी जी निर्वाण ॥ चर्म केवली पञ्चम काल । ते वन्दों नित दीन दयाल ॥ २१ ॥ तीन लोक के तीरथ जहां । नित प्रति वन्दन कीजे तहां ॥ मन वच भाव सहित शिर नाय । वन्दन करो भविक गुण गाय ॥ २२ ॥ संवत सत्रह सौ इकताल । अश्विन शुदि दशमी सुविशाल ॥ भैया वन्दन करे त्रिकाल । यह निर्वाण कांड गुण माल ॥ २३ ॥

इति निर्वाण काण्ड भाषा सम्पूर्णम् ॥

५३ निर्वाण कांड गाथा ।

[प्राकृत गाथा]

अट्ठा वयम्मि उसओ । चम्पाये वास पूज्यजिण णा-हो । उज्जंते णेमि जिणो । पावाए णिव्वुदो वीरो ॥ १॥ वासं तो जिण वरेन्द्रो । अमरा सुर वंदत दूतिकेलेस ॥ सम्मेदा गिरि सेरे । णिव्वाण गया णमो तेसं ॥ २ ॥ वरदत्तोइ वरांगो । सायर दत्तोइ तारदर णयरे ॥ आ-हूट कोडि सहिया । णिव्वाण गया णमो तेसं ॥ णेमि सामिपज्जन्तो सम्बु कुमारो तहेव अणुरुदूधो ॥ वाह-त्तरि कोडीओ । उज्जन्ते सत्तसइ सहिआ ॥ ४ ॥ राम सुवा विरण जणा लाड णरेंदाणं पंच कोड़ियो ॥ पा-वागिरि वरसेरें । णिव्वाण गया णमो तेसं ॥ ५ ॥ पांड सुवा तिरण जणा । दवण णरें दाण अट्ठकोडिओ । सेतुं जय गिरि सेरे । णिव्वाण गया णमो तेसं ॥ ६ ॥ सत्ते जेनल भद्दा । जणव णरेंदान अट्ठ कोडिओं ॥ गज पंथेगिर सेरे । णिव्वाण गया णमोतेस ॥७॥ राम हनू सुग्रीवो गव गवाक्ख णील महणीलो ॥ णव णवदी कोडिओ । तुंगी गिर णिव्वुदो वन्दो ॥ ८ ॥ णंग अणंग कुमारो । कोड़ी

पंचधं मुणिवरा सहिया। सोनागिरि वर सेरे। णिव्वाण गया णमो तेसं ॥९॥ दस मुह राइस सुवा। कोडी पं-चद्ध मुणिवरा सहिया॥ रेवा उभई तड़ागे। णिव्वा० ॥ १० ॥ रेवा नद्दी तीरे। पच्छिम वाव्वय सिद्ध वर कूटे। दो चक्की दह कम्मे। हूंठ कोडि णिव्वदो वन्दो ॥ ११ ॥ वड वाणी वण णयरे। दक्खिण आयव्व चूल गिर सेरे॥ इन्द जित कुम्भकरणे। णिव्वाण गया णमो तेसं ॥ १२ ॥ पावा गिरवर णिपरे। सुवराण भद्दाय मुणि-वरे चउरे॥ चेलना नदी तड़ग्गो। णिव्वा० ॥ १३ ॥ फल होड़ी वड़गम्मे। पच्छिम वाइव्वदोन गिर सेरे॥ गुर-दत्तादि मुणिन्दो। णिव्वा० ॥१४॥ णागकुमार मुणिन्दो वालि महावालि छेय अज्झेआ॥ अट्ठापद गिरि सेर। णिव्वा० ॥ १५ ॥ अचला पुर वर णयर। ईसान आइव्व मेढ़ि गिरसेरे॥ आहूंठ कोडि सहिया। णिव्वा० ॥१६॥ वंसत्थल वर णियर पश्चिम वाइव्व कुंथु गिरि सेरे॥ कुल-भूषण देशभूषण। णिव्वा० ॥ १७ ॥ जसधर राइस सुवा। पंच सयाभूव कलिंग देशम्मि॥ कोडि सिला कोडि मुणि। णिव्वा० ॥ १८ ॥ पासस्स समासरणे। सहिया वरदत्त

मुणिवरा पंचा ॥ ईसंदा गिरि सेरे । णिव्वा० ॥ १९ ॥
पासत्तह अहिचंदण । णायंदह मंगलापुरी वन्दे ॥ आसा
रम्मे पट्टण । मुणि सुव्वह तहेव वन्दामि ॥ २० ॥ बाहु
बलि तह वंदमि । पोदना पुर हत्थिना पुर वन्दे ।
जिण शान्ति कुंथु अरहो ! वाणरसी पास्सु पासंच ॥२१॥
महुराय अह छत्ते । वीर पासं तहेव वन्दामी । जम्बु
मुणिंदो बन्दमि । णिव्वुइ पत्तोइ वण वहणे ॥२२ ॥
तत्थ कल्याण ठाणइ । जीणं मी संच जात लोयम्मी ।
मण वइकाय तिसुद्धो । सिद्धो सिद्धा णमस्सामी ॥ २३ ॥
अगल देवबन्दामो । वणणयरमीव अणदीवन्दे । पा-
सस्सिव पुरबन्दमि । हुलइ गिरि संख देवम्मि ॥२४॥
गोम्मह देव वन्दमि । पञ्चसया धनुष देह उच्चन्त । देवा
कुणन्ति विट्ठी । केसर कुसुमानि उवरम्मी ॥ २५ ॥ णि-
व्वाण ठाण जाणवि । अइसइ सहियाण अइसहे सहि-
या । संजाद मच्चलोए । सव्वेसिरसाण नस्सामी ॥ २६ ॥
जो जण पढ़य तियाल । णिव्वइ करणन्त भाव शुद्धीये ।
भुंजइ नर सर सुक्ख । पच्छानि लहेइ णिव्वाणम् ॥२७॥
इति समाप्तम् ।

...नापाठ ।

दोहा ॥

वन्दूं पांचो परमगुरु, चौबीसो जिनराज ।

करूं शुद्ध आलोचना, सिद्ध करन के काज ॥ १ ॥

छन्द ॥

सुनिये जिन अर्ज हमारी, हम दोष किये अतिभारी । तिनकी अब निर्वृत्ति काज, तुम शरण लयो जिनराज ॥ २ ॥ एक वे ते चौ इन्द्रीवा, मन रहित सहित जे जीवा । तिन की नहीं करुणा धारी, निर्दय हो घात विचारी ॥ ३ ॥ समरम्भ समारम्भ, आरम्भ, मन वच तनु कीनो प्रारंभ । कृतकारित मोदन करके, क्रोधादि चतुष्टय धरके ॥ ४ ॥ शत आठ जो इम भेदनते, अघ कीने परछेदनते । तिन की क्या कहों कहानी, तुम जानत केवल ज्ञानी ॥५॥ विपरीत एकान्त विनयके, संशय अज्ञान कुनयके, । वश होय वहुरि अघ कीने, वचसे नहीं जात कहीने ॥६॥ कुगुरों की सेवा कीनी, केवल अदया कर भीनी । तामें मिथ्यात्व बढायो, चहुंगति में दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसापुन झूंठ जो चोरी, पर बनिता

से दूगजार।
विधि कीने ॥ ८ ॥ स्पगर७~
सेवनक्रो । बहुकर्मकियेमनमाने, कुछ न्या-
जाने ॥९॥ फल पञ्च उदम्बर खाये, मद्य मांस मधु चित भाये । नहीं अष्टमूल, गुण धारे ॥ सेवेकुविसनदुःखकारे ॥ १० ॥ बाइसअभक्ष्यजिनगाये, सोभीनिशिदिनभुंजाये । कुछभेदाभेदनपायो, ज्योंत्योंकरउदरभरायो ॥ ११ ॥ अनंतानुबन्धी सो जानो, प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो । संज्वलन चौकड़ी गुनियें, सब भेद सो षोडश सुनियें ॥ ॥ १२ ॥ पुनि हास्य अरति रति शोग, भय ग्लानि त्रिवेद संयोग । पनवीस जो भेद भये इन, इनके वश पाप किये हम ॥ १३ ॥ निद्रा वश शयन करायो, स्वपने में दोष लगायो । फिर जाग विषय वन धायो, नानाविधि विषफल खायो ॥ १४ ॥ आहार विहार निहारा, इन में नहीं यत्न विचारा । बिन देखें धरा उठाया, बिन सोधा भोजन खाया, ॥ १५ ॥ तब ही सो प्रमाद सतायो, बहुबिधि बिकल्प उपजायो । कुछसुधि बुधिनाहिं रही है, मिथ्या मति छाय गई है ॥ १६ ॥ मर्यादा तुम

ढिंग लीनी, सो भी सदोष हम कीनी। भिन्न २ सो कैसे कहिये, तुम ज्ञान विशेष सबलहिये ॥ १७ ॥ हाहा मैं दुष्ट अपराधी, त्रिसजीवों का जीवि राधी। स्थावर रक्षा ना कीनी, उमर में करुणा नहीं लीनी ॥ १८ ॥ पृथिवी बहुखोद कराई, महलादिक जगह चुनाई। विन छानो पानी डोहलो पंखासे पवन झकोलो ॥१९॥ हाहा मैं अदयाचारी, बहुहरित जो काय विदारी। यामें जीवोंके खंदा, हम खाये धर आनंदा ॥२०॥ हाहा मैं प्रमाद वशाई, बिन देखे अग्नि जलाई। तामध्यजीव जो आये, तेसब परलोक सिधाये॥ २१ ॥ बीधी अन्नराशि पिसावो, ईंधन विनसोधजलायो। झाडू ले जगह बुहारी, चिंटियादिक बहुत विदारी २२ जल छान जीवानी कीनी, सो भी भूडाल सो दीनी। नहीं जल थानक पहुंचाई, किरिया बिन पाप उपाई२३ जल मल मोरिन गिरवायो, कृमि कुल बहु घात करायो नदियों में चीर धुवाये, कोसों के जीव मराये। अन्ना दिक सोध कराये, तामध्यजीव निकराये॥ तिन का नही यत्न करायो, गलियारें धूप डरायो॥२५॥ फिर द्रव्य

कमावन काजे, बहुआरम्भ हिंसासाजे। किये अघतृष्णा वश भारी, करुणा नहीं रंचविचारी॥ २६ ॥ इत्यादिक पाप अनंतः, हम कीने श्री भगवन्तः। सन्ततिचिर काल उपाये, वाणी से जात न गाये॥ २७॥ ताको जो उदय अब आयो, नाना विधि मोहि सतायो। फल भुंजत जो दुःख पाऊं, बचसे कैसे करगाऊं ॥२८॥ तुम जानत केवल ज्ञानी, दुःख दूर करो शिव थानी। हम तो तुम शरण लही है, जिन तारण विरद सही है ॥ २९ ॥ एक ग्रामपती जो होवे, सो भी दुःखिया दुःख खोवे। तुम तीन भवन के स्वामी, दुःख मेटो अन्तर्यामी ॥३०॥ द्रोपदी को चीर बढ़ायो, सीता प्रति कमल रचायो। अंजन से किये अकामी, दुःख मेटो अन्तर्यामी, ॥ ३१ ॥ मेरे औगुण न चितारो, जिन अपना विरद निहारो। सब दोष रहित करो स्वामी, दुख मेटो अन्तर्यामी ॥ ३२ ॥ इन्द्रादिक पद नहीं चाहूं, विषयों में नाहिं लुभाहूं। रागादिक दोष हरीजे, परमात्मनिज पद दीजे ॥ ३३ ॥

दो०—दोष रहित जिन देवजी, निज पद दीजे मोहि।
सब जीवों को सुख बढ़े, आनंद मंगल होहि ॥३४॥

अनुभव मणि के पारखी, जौहरी आप जिनेन्द्र।
यही सुवरमोहि दीजिये, चरण शरण आनंद॥ ३५॥

५५ संकटहरण।

हो दीनबन्धु श्रीपति करुणानिधान जी। अब मेरी बिथा क्यों ना हरो बार क्या लगी॥टेक॥ मालिक हो दो जहान के जिनराज आपही। ऐबो हुनर हमारा कुछ तुम से छिपा नहीं॥ बेजान में गुनाह जो मुझ से बनगया सही। कंकरीके चोर को कटार मारिये नहीं हो दीन० ॥१॥ दुःख दरद दिल का आपसे जिसने कहा सही। मुशकल कहर बहर से लई है भुजा गही॥ सब वेद और पुराण में परमाण है यही। आनन्द कन्द श्री जिनन्द देव है तूही॥ हो दीन० ॥ २॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती। गंगामें गिराहने गही गजराज की गती॥ उस वक्त में पुकार किया था तुम्हें सती। भय टारके उभार लिया हो कृपापती॥ हो० ३॥ पावक प्रचण्ड कुण्डमें उमण्ड जब रहा। सीता से सत्य लेने को जब रामने कहा॥ तुम ध्यान धर जानकी पग धारती तहां। तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल ल-

हलहा ॥ हो० ४ ॥ जब चीर द्रोपदी का दुशासनने था गहा। सबरे सभा के लोग कहते थे हाहा हा ॥ उस वक्त भीर पीर में तुमने किया सहा। पड़दा ढका सती का सुयश जगत में रहा। हो० ॥ ५ ॥ सम्यक्त शुद्ध शील-वन्ति चन्दनासती। जिस के नजीक लगती थी जाहर-रती रती बेड़ी में पड़ी थी तुमें जब ध्यावती हुती। तब बीरधीर ने हरी दुःख द्वन्द्व की गती। हो० ६ ॥ श्रीपालको सागर विषे जब सेठ गिराया। उसकी रमा से रमने को आया था वेहया ॥ उस वक्त के संकट में सती तुम को जो ध्याया। दुःख द्वन्द्व फन्द मेटके आ-नन्द बढ़ाया ॥ हो० ॥ ७ ॥ हरषेण की माताको जब शोक सताया। रथ जैनका तेरा चले पीछे से बताया ॥ उस वक्त के अनशन में सती तुम को जो ध्याया। च-क्रेश हो सुत उस के ने रथ जैन चलाया ॥ हो० ॥८॥ जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजाला। तब सासुने क-लंक लगा घर से निकाला ॥ वन वर्ग के उपसर्गमें सती तुम को चितारा। प्रभु भक्तियुक्त जानके भय देव नि-वारा ॥ हो० ॥ ९ ॥ सोमा से कहो जो तू सती शील-

विशाला। लो कुम्भ में से काढ भला नाग ही काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्याय के सती हाथ जो डाला। तत्काल ही वो नाग हुआ फूल की माला ॥ हो० १० ॥ जब रा-अरोग था हुआ श्रीपालराज को। मैना सती तब आप को पूजा इलाज को॥ तत्काल्ल ही सुन्दर किया श्रीपा-लराज को। वह राज भोग २ गया मुक्तिराज को ॥हो० ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दोष लगाया। रानी के कहे भूपने शूलीपै चढ़ाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने निज ध्यान में ध्याया । शूली से उतार उस को सिं-हासन पै विठाया ॥ हो० १२ ॥ जब सेठ सुधन्ना जी को वापी में गिराया। ऊपर से दुष्ट था उसे वह मा-रने आया॥ उस वक्त तुम्हें सेठने दिल अपने में ध्याया तत्काल ही जंजाल से तब उस को बचाया ॥ हो०१३॥ एक सेठ के घरमें किया दारिद्र ने डेरा। भोजन का ठिकाना भी था नहीं सांझ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब ध्यान में घेरा। घर उसके तब करदिया लक्ष्मी का बसेरा ॥ हो० १४ ॥ बलिबाद में मुनिराज सों जब पार न पाया। तब रात को तलवार ले शठ मारने आ-

या ॥ मुनिराज ने निज ध्यान में मनलीन लगाया। उस वक्त हो परतक्ष तहां देव बचाया ॥ हो० १५ ॥ जब राम ने हनुमन्त को गढ़लंक पठाया। सीता की खबर लेने को फिलफौर सिधाया॥ मग बीच दो मुनिराज की लख आग में काया। झटवार मूसलधार से उपसर्ग बुझाया ॥ हो० १६॥ जिननाथ ही को माथ निवाला था उदारा। घेरे में पड़ा था वह कुम्भकरण विचारा ॥ उस वक्त तुम्हें प्रेम से संकट में उवारा। रघुवीर ने सब पीर तहां तुरत निवारा ॥ हो० १७ ॥ रणपाल कुंवर के पड़ी थी पांव में बेरी। उस वक्त तुम्हें ध्यान में ध्याया था सवेरी ॥ तत्काल ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी बेरी। तुम राजकुंवर की सभी दुःख द्वन्द्व निवेरी ॥ हो० १८॥ जब सेठ के नन्दन को डसा नाग जु कारा ॥ उस वक्त तुम्हें पीर में धरधीर पुकारा॥ ततकाल ही उस बाल का बिषभूरि उतारा। वह जाग उठा सो के मानो सेज सकारा ॥ हो० १९ ॥ मुनि मानतुङ्ग को दई जब भूपने पीरा। ताले में किया बन्द भरी लोहे जंजीरा। मुनीश ने आदीश की थुति की है गंभीरा। चक्रेश्वरी तब आन

के झट दूरकी पीरा ॥ हो० २० ॥ सिव कोट नें हठता किया सुमन्त भद्र सो। शिवपिण्ड को वन्दन करो संको अभद्र सो ॥ उस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो। जिन चन्द की प्रतिमा तहां प्रगटी सुभद्र सो॥ हो०२१॥ सूवे ने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया। मेंडक ले चला फूल भरा भक्त का भाया ॥ तुम दोनों को अभिराम स्वर्गधाम बसाया। हम आपसे दातार को लख आजही पाया ॥ हो० २२ ॥ कपि स्वान सिंह नवल अज बैल विचारे। तिर्यंच जिन्हें रञ्च न था बोध चितारे ॥ इत्यादि सो सुरधाम दे शिवधाम में धारे। हम आपसे दातार को प्रभु आज निहारे ॥ हो० २३ ॥ तुम ही अनन्त जन्तु का भय भीड़ निवारा। वेदो पुराण में गुरु गणधर ने उचारा ॥ हम आप की शरणागति में आके पुकारा। तुम हो प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष इच्छु अहारा ॥ हो० २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्त के दानी। आनन्द कन्द वृन्द को हो मुक्ति के दानी ॥ मोहि दीन जान दीनबन्धु पातक भानी। संसार विषय तार तार अन्तर आमी ॥ हो० २५ ॥ करुणानिधान बान को अब

क्यों निहारी । दानी अनन्त दान के दाता हो संभारो ॥ वृष चन्द नन्द वृन्द का उपसर्ग निवारो । संसार विषमखार से प्रभु पार उतारो ॥ हो दीन बन्धु श्रीपति करुणा-निधान जी । अब मेरी विथा क्यों ना हरो बार क्या लगी ॥ २६ ॥ सम्पूर्णम् ॥

५६ दुःख हरण ।

[चाल छन्द]

श्रीपति जिनवर करुणा इतनी दुख हरण तुम्हारा बाना है । मत मेरी बार अबार करो मोहि देहु वि-मल कल्याणा है ॥ टेक ॥ त्रैकाल्यक वस्तु प्रत्यक्ष लखो तुम सों कछु बात न छाना है । उर आरत मेरे जो ब-रते निश्चय सो तुम सब जाना है ॥ अब लोपो व्यथा मत मौन गहो नहीं मेरा कहीं ठिकाना है । हो राज विलोचन सोच विमोचन मैं तुम सों हित ठाना है ॥१॥ सब ग्रन्थन में निर्ग्रंथन में निर्धार यही गणधार कही जिन नायक जी सब लायक हो सुखदायक ज्ञायक दान मही ॥ यह बात हमारे कान पड़ी जब आन तुम्हारी शरण गही । मत मेरी बार अबार करो जिन नाथ सुनो यह बात

सही ॥२॥ काहूको भोग मनोग करो काहूको स्वर्ग विमाना है। काहू को नाग नरेश पती काहूको ऋद्ध निधाना है॥ अब मों पर क्यों न कृपा करते यह क्या अंधेर जमाना है। इन्साफ करो मत देर करो सुख वृन्द भजो भगवाना है ॥ ३ ॥ दुख कर्म मुझे हैरान किया जब तुम सों आनि पुकारा हैं। समरत्थ सबी विधि सो तुम हो तुमही लग दौर हमारा है॥ खल घायल पालक बालक क्या नृप नीति यही जगसारा है। तुम नीति निपुण त्रैलोक पती तुम्हरी शरणागत धारा है॥ जब से तुम से पहिचान भई तब से तुम ही को माना है। तुम्हरे ही शासन का स्वामी हम को शरणा सरधाना है॥ जिन को तुम्हरो शरणागत है तिनको यमराज डराना है। यह सुयश तुम्हरे सांचे का यश गावत वेदपुराना है॥ ५ ॥ जिस ने तुम से दिल दर्द कहा तिस का दुःख तुम ने हाना है। अघ छोटा मोटा नाश तुरत सुख दिया तिन्हें मन माना है ॥ पावक से शीतल नीर किया अरु चीर किया अस्माना है। भोजन था जिस के पास नहीं सो किया कुवेर समाना है॥ ६ ॥

चिंतामणि पारस कल्पतरु सुख दायक यह परधाना है। तुम दासन के सव दास यही हमरे मन में ठहराना है॥ तुम भक्तन को सुर इन्द्रपती फिर चक्रवर्ती पद पाना है। क्या वात कहों विस्तार वढ़े वे पावें मुक्ति ठिना है॥ ७॥ गति चार चौरासी लाख विषें चिन्मूरति मेरा भटका है। हो दीन वन्धु करुणा निधान अवलों न मिटो वह खटका है॥ जब योग मिलो शिव साधन को तब विघन कर्म ने हटका है। अव विघ्न हमारा दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है॥ ८॥ गज ग्राह ग्रसित उद्धार लिया और अंजन तस्कर तारा है। ज्यों सागर गोपद रूप किया मेंना का संकट टारा है॥ ज्यों शूली से सिंहासन और वेड़ी को काटि विडारा है त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोकों आस तुम्हारा है॥ ९॥ ज्यों फाटक टेकत पांव खुला और सर्प सुमन कर डाला है। ज्यों खड्ग कुसुम का माल किया वालक का जहर उतारा है। ज्यों सेठ विपति चक चूर पूर अरु लक्ष्मी सुख विस्तारा है। त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु

मोकों आस तुम्हारा है ॥ १० ॥ यद्यपि तुम्हरे रागादि नहीं और सत्य सर्वथा जाना है। चिन्मूरति आप अनन्त गुणी नित शुद्धि दिशा शिव थाना है ॥ तद् भक्तन की भयभीत हरो सुख देत तिन्हें जु सुहानाहै। यह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारे को क्या पावे पार सयाना है ॥ ११ ॥ दुख खण्डन श्री सुख मंडन को तुम्हारा यश परम प्रमाना है। वरदान दिया यश कीरत को तिहुंलोक ध्वजा फहराना है ॥ कमला कर जी कमला धर जी करिये कमला अमलाना है। अब मेरी व्यथा अवलोपो रमापति रंच न वार लगाना है ॥ १२ ॥ हो दीनानाथ अनाथ हितू जिन दीनानाथ पुकारी है। उदयागत कर्म बिपाक हला हल मोह व्यथा निरवारी है ॥ तो और आप भव जीवन को तत्काल व्यथा निरवारी है। वृन्दावन अब ये अर्ज करे प्रभु आज हमारी बारी है ॥ १३ ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु तुम दीनानाथ हो, मैं अनादि दुखकंद।
सुनि सेवक की बीनती, हरो जगत दुखफंद ॥

इति ॥

५७ जिनेन्द्र स्तुति ।

(गीता छन्द)

मंगल सरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेश जी। तुम अधम तारण अधम मम लखि मेट जन्म कलेशजी ॥ टेक ॥ तुम मोह जीत अजीत इच्छातीत शर्मामृत भरे। रजनाश तुम वरभास दृग नभ ज्ञेय सब इक उड़ चरे ॥ रंटरास क्षति अति अमित वीर्य सुभाव अटल सरूप हो। सब रहित दूषण त्रिजगभूषण अज अमल चिद्रूप हो ॥ १॥ इच्छा बिना भवभाग्य तें तुम ध्वनि सुहोय निरक्षरी। षट् द्रव्य गुण पर्यय अखिल युतएक क्षण में उच्चरी ॥ एकान्त वादी कुमति पक्ष विलिप्त इम ध्वनि मद हरी। संशय तिमिर हर रविकला भव शल्य कों अमृत झरी ॥२॥ वस्त्राभरण विन शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरे। नाशाग्रदृष्टि विकार वर्जित निरखि छवि संकट टरे ॥ तुम चरणपंकज नख प्रभा नभ कोटि सूर्य प्रभा धरे। देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुट मणि द्युति विस्तरे ॥ ३ ॥ अंतर वहिर इत्यादि लक्ष्मी

तुम असाधारण लसे। तुम जाप पाप कलाप नासे ध्यावते शिव थल वसे। मैं सेय कुदृग कुबोध अव्रत चिर भ्रमो भववन सवे। दुख सहे सर्व प्रकार गिर सम सुख न सर्षप सम कवे ॥ ४॥ पर चाह दाह दहो सदा कबहूं न साम्य सुधा चखो। अनुभव अपूरव स्वादुबिन नित विषय रस चारो भखो ॥ अब बसो मो उर में सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहो। वर भक्ति अतिदृढ़ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चहों ॥५॥ एकेन्द्रियादिक अन्त ग्रीवक तक तथा अन्तर घनीं। पाये पर्याय अनन्तवार अपूर्व सो नहिं शिवधनी ॥ संसृत भ्रमण तैं थकित लखि निज दास की सुन लीजिये। सम्यक् दरश वर ज्ञान चारित पथ विहारी कीजिये ॥ ६ ॥

इति समाप्तम् ॥

५८ विनती भूधर दास कृत।

(गीता छन्द)

पुलकंत नयन चकोर पक्षी हंसत उर इन्दीवरो। दुर्बुद्धि चकवी विलख बिछुरी निबड़ मिथ्या तम हरो ॥ आनन्द अम्बुज उमग उछरो अखिल आतम निरदले।

जिन बदन पूर्ण चन्द्र निरखत सकल मन वांछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो पावन आज विघ्न नशाइयो । संसार सागर नीर निवटो अखिल तत्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ उभय भव निर्मल ठये । दुख जरो दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भये ॥ २ ॥ मन हरण मूरति हेर प्रभु की कौन उपमा ल्याइये । मम सकल तन के रोम हुलसे हर्ष और न पाइये। कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभु को लखें जो सुर नर घने । तिस समय की आनन्द महिमा कहत क्यों मुख से बने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुम को और बांछा ना रही । मन ठठ मनोरथ भये पूरण रंक मानो निधि लही । अब होहु भवभव भक्ति तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये । कर जोर भूधर दास विनवे यही बर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥ इति ।

५९ विनती भूधर दास कृत ।

अहो जगत गुरु एक सुनिये अर्ज हमारी । तुम प्रभु दीन दयालु मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भव बन के मांहि काल अनादि गमायो । भ्रमत चतुर्गति मांहि

सुख नहीं दुख बहु पायो ॥ २ ॥ कर्म महा रिपु जोर ये कलकान करें जी । मन माने दुख देय काहू से न डरें जी ॥ ३ ॥ कबहूं इतर निगोद कबहूं कि नर्क दिखावें । सुर नर पशुगति मांहि बहु विधि नाच नचावें ॥४॥ प्रभु इन को परसंग भव भव मांहि बुरो जी । जो दुख देखो देव तुम से नाहिं दुरो जी ॥ ५ ॥ एक जन्म की बात कहि न सकों सब स्वामी । तुम अनन्त पर्याय जानत अन्तर्यामी ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट घनेरे । कियो बहुत वेहाल सुनिये साहब मेरे ॥७॥ ज्ञान महानिधि लूट रंक निवल कर डारो । इन ही सो तुम माहि हे प्रभु अन्तर पारो ॥ ८ ॥ पाप पुण्य मिल दोय पायन बेरी डारी । तन कारागृह मांहि मूंद दियो दुख भारी ॥ ९ ॥ इन को नेक विगार मैं कुछ नाहि करो जी । बिन कारण जगबन्धु वहुबिधि बैर धरो जी ॥ १० ॥ अब आयो तुम पास सुन कर सुयश तुम्हारो । नीत निपुण महाराज कीजे न्याय हमारो ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकाल साधुन को रख लीजे । बिनवे भूधर दास हे प्रभु ढील न कीजे ॥ १२ ॥ इति ।

६० विनती नाथूराम कृत।

(दोहा)

चौबीसो जिन पद कमल बन्दन करों त्रिकाल।
करो भवोदधि पार अब काटो बसु विधि जाल ॥१॥

(रोड़क छन्द)

ऋषभ नाथ ऋषि ईश तुम ऋषि धर्म चलायो। अजि-
त अजित अरि जीत बसु विधि शिवपद पायो ॥ २ ॥
संभव संभ्रम नाशि बहु भवि बोधित कीने। अभिनन्दन
भगवान अभिरुचि कर व्रत दीने ॥ ३ ॥ सुमति सुमति
वरदान दीजे तुम गुण गाऊं। पद्मप्रभु पदपद्म उर धर शीश
नवाऊं ॥ ४ ॥ नाथ सुपारस पास राखो शरण गहोंजी
चन्द्रप्रभु मुखचन्द्र देखत बोध लहोंजी ॥ ५ ॥ पुष्प दन्त
महाराज बिकसित दन्त तुम्हारे। शीतल शीतल बैन
जग दुःख हरण उचारे ॥ ६ ॥ श्रेयान्स भगवान् श्रेय ज-
गति को कर्त्ता। बास पूज पद वास दीजे त्रिभुवन
भर्ता ॥ ७ ॥ विमल विमल पद पाय विमल किये बहु
प्राणी। श्री अनन्त जिन राज गुण अनन्त के दानी ॥८॥

धर्म नाथ तुम धर्म तारण तरण जिनेश। शान्त नाथ अघ ताप शान्ति करो परमेश ॥ ९ ॥ कुंथु नाथ जिन राज कुंथु आदि जिय पाले। अरह प्रभू अरि नाश बहु भव के अघ टाले ॥ १० ॥ मल्लि नाथ क्षण माहि मोह मल्ल क्षय कीना। मुनि सुव्रत व्रत सार मुनि गण को प्रभु दीना। नमि प्रभु के पद पद्म नवल नशैं अघ भारी। नेमि प्रभु तज राज जाय वरी शिव नारी ॥१२॥ पार्श्व स्वर्ण सरूप कहु भविजण में कीने। वीर वीर विधि नाश ज्ञा-नादिक गुण लीने ॥ १३ ॥ चार बीस जिन देव गुण अनन्त के धारी। करों विविध पद सेव मेटो व्यथा ह-मारी ॥ १४ ॥ तुम सम जग में कौन ताका शरण ग-हीजे। यासे मांगों नाथ निज पद सेवा दीजे ॥ १५ ॥

(दोहा)

नाथूराम जिन भक्त का, दूर करो भव त्रास।
जब तक शिव अवसर नहीं, करो चरण का दास॥

६१ विनती भूधर दास कृत।

वे गुरु मेरे उर बसो तारण तरण जहाज। वे गुरु

मेरे उर वसो ॥ आप तरैं पर तार ही ऐसे ऋषिराज । वे गुरु मेरे उर वसो ॥ ॥ टेक ॥

मोह महा रिपु जीत के । छोड़ो है घरवार ॥ भये दिगम्बर बन बसे । आतम शुद्ध विचार ॥ १ ॥ रोग स-दन तन ध्यावही । भोग भुजग समान ॥ कदली तरु संसार है । इम छोड़े सब जान ॥ २ ॥ रत्नत्रय निज उर धरैं । अरु निरग्रन्थ त्रिकाल ॥ मारे काम खबीस को । स्वामी परम दयाल ॥ ३ ॥ धर्म धरैं दश लक्षणी । भा-वन भावैं सार । सहैं परीषह वीस दो । चारित्र रत्न भ-ण्डार ॥ ४ ॥ ग्रीष्म ऋतु रवि तेज से । सूखे सरवर नीर ॥ शैल शिखर मुनि तप तपैं । ठाढे अचल शरीर ॥ ५ ॥ पावस रयनि भयावनी । बरसे जलधर धार ॥ तरु तल निवसैं साहसी । चालै झंझा बयार ॥६॥ शीत पड़े दधि मद गले । दाहे सब वनराय । ताल तरङ्गि-णी तट विषैं । ठाढ़े ध्यान लगाय ॥ ७ ॥ इस विधि दुर्द्धर तप तपैं । तीनों काल मझार ॥ लागे सहज स्व-रूप में । तन से ममता टार ॥ ८ ॥ रंग महल में सोव-ते । कोमल सेज बिछाय ॥ ते अब पश्चिम रैनि में ।

पोढ़ें संवर काय ॥ ९ ॥ गज चढ़ चलते गर्व से। सेना सज चतुरंग ॥ निरख निरख भू पद धरें। पाल करुणा अंग ॥ १० ॥ पूर्व भोग न चिन्तवें। आगे वांछा नांहि ॥ चहुं गति के दुख से डरें। सुरति लगी शिव मांहि ॥११॥ ते गुरु चरण जहां धरें। तहं तहं तीरथ होय ॥ सो रज राम मस्तक चढ़ी। भूधर मांगे सोय ॥ १२ ॥

इति सम्पूर्णम्।

६२ विनती भूधर दास कृत।

वन्दों दिगम्बर गुरु चरण जग तरण तारण जान जो भरम भारी रोग को हैं राज वैद्य महान ॥ जिनके अनुग्रह बिन कभी ना कटे कर्म जंजीर। ते साधु मेरे उर बसो मेरी हरो पातिक पीर ॥१॥ यह तन अपावन अशुचि है संसार सकल असार। ये विषय भोग नशायंगे इस भांति सोच विचार ॥ तब विरचि श्री मुनि वन बसे सब त्याग परिग्रह भीर। ते साधु० ॥२॥ जे कांच कांचन सम गिनें अरि मित्र एक सरूप। निंदा बड़ाई सारखी वन खंड शहर अनूप ॥ सुख दुःख जीवन मरण में ना खुशी

ना दिलगीर । ते साधु० ॥ ३ ॥ जे बाघ पर्वत वन बसें गिर गुफा महल मनोग । शिल सेज समता सहचरी शशि किरण दीपक जोग ॥ मृग मित्र भोजन तप मई विज्ञान निर्मल नीर । ते साधु० ॥ ४ ॥ सूखे सरोवर जल भरे सूखे तरंगिणी तोय । बाटें बटोही ना चले जब घाम गर्मी होय ॥ तिसकाल मुनिवर तप तपें गिरि शिखिर ठाड़े धीर । ते साधु० ॥ ५ ॥ घन घोर गर्जें घन घटा जल पड़े पावस काल । चहुं ओर चमके बीजली अति चले शीतल बयार ॥ तरु हेट तिष्टे तब यती एकान्त अचल शरीर । ते साधु० ॥ ६ ॥ जब शीतकाल तुषार से दाहे सकल वनराय । जब जमे पानी पोखरा थर हरे सब की काय ॥ तब नग्न निवसे चौहट के स-रति के सर तीर । ते साधु० ॥ ७ ॥ कर जोर भूधर बीनवे कब मिलें वे मुनिराज । यह आस मेरी कब फले अरु सरें सगरे काज ॥ संसार विषम विदेश में जे बिना कारण बीर । ते साधु० ॥ ८ ॥ इति ।

[६३] विनती, भूधर दास कृत ।

त्रिभुवन गुरु स्वामी जी करुणा निधि नामी जी ।

सुनो अन्तर यामी मेरी बीनती जी ॥ १ ॥ मैं दास तुम्हारा जी दुःखिया अति भारा जी। दुःख मैंटन हारे तुम यादों पति जी ॥ २ ॥ भ्रमियो सम्सारा जी भरो चित्त भंडारा जी । कहीं सार न जाना चहुंगति डोलियो जी ॥ ३ ॥ दुःख मेरु समाना जी सुख सरसों दाना जी इम जानि धर ज्ञान तराजू तोलियो जी ॥ ४ ॥ स्थाव र तन पाया जी त्रस नाम धराया जी । कृमि कुंथू कहाया मर भ्रमरा भया जी ॥५॥ पशु काया सारी नाना विधि धारी जी । जलचारी थलचारी उड़न पखेरुआ जी ॥६॥ नर्कों के माहीं जी दुःख और कहां ही जी । अति घोर तहां हैं सरिता नीर की जी ॥ ७ ॥ पुनि असुर संहारैं जी निज बैर बिचारैं जी । मिल मारैं अरु बांधैं निर्दय नारकी जी ॥ ८॥ मानुष अवताराजी रहा गर्भ मझारा जी। रटि जन्मती बारा रोयो घनो ही जी ॥ ९ ॥ यौवन तन भोगी जी यह विपति वियोगी जी अति रोगी पन शोकी मरण की बेदना जी ॥ १०॥ सुर पदवी पाई जी रंभा उर आई जी । तहां देख देख पराई सम्पति झूरियो जी ॥११॥ माला मुरझानी

जी तब आरति ठानी जी तिथि पूरण जानी मरण विसूरियो जी ॥ १२ ॥ यह दुःख भव केरो जी भुगतो बहुतेरा जी । प्रभ मेरे कहु कहत न मैं पार लहों जी ॥ १३ ॥ मिथ्या मद माता जी चाहे नित साता जी । सुख दाता जग त्राता मैं जानै नहीं जी ॥ १४ ॥ प्रभु भाग्य निपाये जी गुण श्रवण सहाये जी । तकि आयो अब सेवक की विपदा हरो जी ॥ १५ ॥ भव वास बसेरा जी फिर होय न मेरा जी । सुख पाऊं निज केरा स्वामी सो करो जी ॥ १६ ॥ नर नारी गावें जी सो भवि सुख पावें जी । प्रभु होय सहाई पार उतारिये जी ॥ १७ ॥ भूधरकर जोरें जी ठाडे प्रभु ओरैं जी तुम दास निहारे निर्भय कीजिये जी ॥ १८ ॥ इति ।

६४ अठाई रासा ॥

बरत अठाई जे कर ते पावैं भव पार प्राणी । बरत अठाई जे करें ॥ टेक० ॥ जम्बूद्वीप सुहावणो लखयोजन विस्तार प्राणी । बरत अठाई० ॥ १ ॥ भरत क्षेत्र दक्षिण दिशा पोदणपुर तिह सार प्राणी । विद्यापति विद्याधरो सोमाराणी रायप्राणी । बरत० ॥ २ ॥ चारण

मुनि तहां पारणें आये राजा नेह प्राणी । सोमाराणी अहार दे पुण्य बढ़ो अतिनेह प्राणी । वरत० ॥३॥ तिसी समय नभ देवता चले जात विमान प्राणी । जय जय शब्द भयो घनो मुनिवर पूछ्यो ज्ञान प्राणी ।वरत० ॥४॥ मुनिवर बोले सुन राणी नन्दीश्वर की जात प्राणी । जे नर करहिं स्वभाव सो ते पावें शिवकांत प्राणी । वरत० ॥ ५ ॥ यह वचन राणी सुनों मन में भयो आनन्द प्राणी नन्दीश्वर पूजा करै ध्यावे आदि जिनेन्द्र प्राणी वरत० ॥ ६ ॥ कातिक फागुण साढ में पाले मनवचदेह प्राणी वसु दिवस पूजा करै तीन भवान्तर लेय प्राणी वरत० ॥ ७ ॥ विद्यापति मुनि चालियो रच्यो विमान अनूप प्राणी । राणी वरजे राय को तू तो मानुष भूप प्राणी वरत० ॥ ८ ॥ मानुषोत्र लंघत नहीं मानुष जेती जात प्राणी । जिन वाणी निश्चय सही तीन भवन विख्यात । प्राणी व० ॥ ९॥ सो विद्यापति ना रहो चलो नन्दीश्वर दीप प्राणी । मानुषोत्र गिरसो मिलो जाय न मान महीप प्राणी व०१० । मानुषोत्र की भेटतैं परो धरणि सिर भार प्रा० । विद्यापति भव चूरियो देव भयो

सुरसार प्रा० व० ॥ ११ ॥ द्वीप नन्दीश्वर छिनक में पूजा बहु विधि ठान प्राणी । करी सुमन वच काय से माला दई करभान प्राणी ब० १२ आनंद सों फिर घर आयो नन्दीश्वर कर जात प्राणी । विद्या पति का रूप कर पूछे राणी बात प्राणी बरत० ॥ १३ ॥ राणी बोली सुण राजा यह तो कबहुन होय प्राणी । जिन वाणी मिथ्या नहीं निश्चय मनमें सोय प्राणी ब० ॥ १४ ॥ नन्दीश्वर की जयमाला रायदिखाई आणप्राणी अबतूसाची मोहि जाणो पूजन करी बहुमान प्राणी । ब० ॥ १५ ॥ राणी फिर तासों कहै यह भवपरसैं नाहि प्राणी ॥ पश्चिम सूर उदय हुवे जिन वाणी सुषिताहि प्राणी ब० १६ ॥ राणी सों नृप फिर बोल्यो बावन भवन जिनालय प्राणी । तेरह तेरह मैं वंदे पूजन करी तत्काल प्राणी बरत० ॥१७॥ जयमाला तहां मो मिली आयो हुं तुझ पास राणी । अब तू मिथ्या मत माने पूजाभई अवश्य प्राणी ब० ॥ १८ ॥ पूरब दक्षिण मैं वन्दे पश्चिम उत्तर जात प्राणी । मैं मिथ्या नहीं भाषिहूं मोहि जिनवर की आण प्राणी० ॥ १९ ॥

सुनि राजा तैं सब कही जिनवाणी शुभसार प्राणी। ढाई द्वीप न लंघई मानुष जन विस्तार प्राणी ब० २० ॥ विद्यापति से सुर भयो रूप धरो शुभ सोई प्राणी ॥ राणी की अस्तुति करी निश्चय समकित सोय प्राणी। बरत० २१ देव कहे अब सुनराणी मानुषोत्र मिलोजाय प्राणी। तिहतैं चय मैं सुर भयो पूज नंदीश्वर आय प्राणी। बरत० ॥२२॥ एक भवांतर मो रहो जिन शा-सन परमाण प्राणी। मिथ्याती माने नहीं श्रावक निश्चय आण प्राणी। ब० २३ ॥ सुरचय तहां हथणांपुरी राज कियो भर पूर प्राणी। परिग्रह तज संयम लियो कर्म महागिर चूर प्राणी ब० २४ केवल ज्ञान उपार्ज करमोक्ष गयो मुनिराय प्रा०। शाश्वत सुख विलषै सदा जन्म मरण मिटाय प्राणी० ॥ २५ ॥ अब राणी की सुनोकथा संयम लीनो सार प्राणी। तप कर चयकें सुर भयो वि लषे सुख विस्तार प्राणी ब० २६ ॥ गजपुर नगरी अब तरो राज करे बहु भाय प्राणी। सोलह कारण भाइयो धर्म्म सुनो अधिकाय प्राणी ब० ॥२७॥ मुनि संघाटक आइयो माली सार जणाय प्राणी। राजा बंदो भाव

सों पुण्य बढ़ो अधिकाय प्राणी व० ॥ २८ ॥ राजानन वैरागियोंसंयमलीनोसार प्राणी। आठ सहस्र नृप साथ ले यह संसार असार प्रा० व० ॥२९॥ केवल ज्ञान उपा-र्जके दोय सहस्र निर्वाण प्राणी। दोय सहस्र सुख स्वर्ग के भोगे भोग सुथान प्राणी व० ॥३०॥ चार सहस्र भूलोक में हुंडे बहु संसार प्राणी। काल पाय शिवपुर गये उत्तम धर्म विचार प्राणी। व० ३१ वरत आठईजे करैं तीन जनन परमाण प्राणी। लोकालोक सुजाणही सिद्धारथ कुल ठाण प्राणी। व० ॥ ३२ ॥ भवसमुद्र के तरण को दावन नौका जान प्राणी। जे जिय करैं सु-भाव सों जिनवर सांच बखान प्राणी० ॥ ३३ ॥ नन बधवाया जे पढ़ैं ते पावे भवपार प्राणी। विनयकीर्ति सुख सों भयो जनम सफल संसार प्राणी०। वरत आठई जे करैं ॥ ३४ ॥

इति अठाई रासा समाप्तम्।

६५ श्रीजिनागिरा स्तवन (शिखरणी छंदः)

शरण आय माता, जिनेश्वर वाणी दुख हरो। विरद अनुपम तेरा, प्रगट जग त्राता सुख करो ॥ भमो

जग बहुतेरा, सहा दुख जन्मन मरण का । टरे नाहीं टारा, यत्न बहु कीना हरण का ॥ १ ॥ यजे बहुते देवा करी बहु सेवा चरण की। फंसे भव दुख सोही, न पाई आशा शरण की ॥ अष्ट विधि खल भारी, हमारी कीनी दुर्दशा। इन्हीं के वश माता, भवोदधि दुख में मैं फंसा ॥२॥ सतत चारों गति में, भ्रमावें मोको ये बली। ज्ञान धन को हरिके, भुलाई मोको शिवगली ॥ नरक पशु नरदेवा, चतुर्गति में जो दुख लहो। कहा जाता नाहीं, तुम्हीं सब जानो जो सहो ॥३॥ निबल मोको पाके, सताते ये खल अति घने । शरण राखो माता, बचावो इन से निज जने ॥ कुमति अब दे माता, विनाशों आठो खलन में। लहों शिवपुर पंथा, दहोंना फिर भव ज्वलन में ॥४॥ अल्प मति मैं माता, सुमति निज दीजे दासको। यही विनती मेरी, पुरावो अम्बे आश को ॥ युगल पद की सेवा, करत नर देवा धाय के। लहत शिव सुख मेवा, शरण मा तेरा पाय के ॥ ५ ॥

दोहा-तुम पदाब्जमो उर बसो, नशो तिमिर अज्ञान।
सेवक नाथूराम को, दीजे मा बरदान ॥ ६ ॥

इति श्रीजिनगिरास्तवनम् समाप्तम् !!!

६६ जिनदर्शन दोहा ।

दर्शन श्री जिन देव का नाशक है सब पाप । दर्शन सुरगति दाय है साधन शिवसुख आप ॥ १ ॥ जिन दर्शन गुरुवन्दना इन से अघक्षय होय । यथा छिद्रयुत कर विषें थिर लिपटे ना तोय ॥ २ ॥ वीत राग मुख दर्शियो पद्म प्रभा सम लाल । जन्म जन्म कृत पापसो दर्शत नाशे हाल ॥ ३ ॥ जिन दर्शन रवि सारिखाहोय जगत तम नाश । विगशित चित्त सरोज लख करता अर्थ प्रकाश ॥ ४ ॥ धर्मामृत की वृष्टि को इन्दु दर्श जिन राय । जन्म ज्वलन नाशे बढ़े सुखसागर अधिकाय ॥५॥ सप्त तत्व दरशैं अहे वसु गुण सम्यक सार । शांति दिगम्बर रूप जिन दर्शि नमों बहु बार ॥ ६ ॥ चेतन रूप जिनेश किय आत्म तत्व प्रकाश । ऐसे श्री सिद्धान्त को नित्य नमों सुख आश ॥ ७ ॥ अन्य शरण वांछो नहीं तुम्हीं शरण स्वयमेव । या से करुणाभाव धर रखो शरण जिनदेव ॥ ८ ॥ त्रिजगत में इस जीव को तारणहार न कोय । वीतराग वरदेव बिन भया न आगे होय ॥ ९ ॥ श्रीजिन भक्ति सदा मिलो प्रतिदिन

भव २ माहि । जब तक जगवासीरहों अन्तर वांछों नाहिं ॥ १० ॥ बिन जिन वृष शिवहोनहीं चाहे हो चक्रीश । धनी दरिद्री होत सब जिन वृष से शिव ईश ॥ ११ ॥ जन्म जन्म कृत पाप भव कोटि उपार्जा होय । जन्म जरादिक मूल से जिन वन्दत क्षय होय ॥१२॥ यह अनूप महिमा लखी जिन दर्शन की व्यक्त । यासे पद शरणालिया नाथूराम जिन भक्त ॥ १३ ॥ जिन दर्शन लखि संस्कृति भाषा किया बनाय । भव्य जीवनित उरधरो । यह भव भव सुखदाय ॥ १४ ॥

इति श्रीजिनदर्शन सम्पूर्णम्

वन्देजिनवरम् ॥

६७ नरकों के दोहे ।

दोहा—जनम थान सब नरक में, अंध अधोमुख जौन । घंटाकार घोना वनीं, दुसह त्रास दुख भौन ॥१॥ तिन में उपजें नारकी, तल शिर ऊपर पांय । विषम वज्र कण्टक मई, परे भूमि पर आय ॥ २ ॥ जो विषैल बीछू सहस, लगे देह दुख होय । नरक धराके परशते, सरस

वेदना सोय ॥ ३॥ तहां परत परवान अति, हाहा करते एन। ऊंचे उछरें नारकी, तपे तवातिल जेम ॥ ४॥

सोरठा—नरक सातवें माहिं उछलत योजन पानसे। और जिनागम मांहि- यथायोग्य सव जानिये ॥ ५॥

दोहा—फेरि आन भूपर परे और जहां सहि जाहि। छिन्न भिन्न तन अतिदुखित, लोट लोट विललाहि ॥ ६॥ सव दिशि देखि, अपूर्व थल, चकित चित भयवान। मन सोचैं मैं कौन हूं परो कहां मैं आन ॥ ७ ॥ कौन भयानक भूमि यह, सव दुख थानक जिन्द। रुद्ररूप ये कौन हैं, निठुर नारकी वृन्द ॥ ८ ॥ काले वरण कराल मुख, गुंजा लोचन धार। हुंडक डील डरावने, करैं मारही मार ॥ ९॥ सुजन न कोई दिठि परे, शरण न सेवक कोय। इयां सो कुछ सूझे नहीं, जासों छिन सुख होय ॥ १० ॥ होत विभंगा अवधि तव, निज पर कों दुखकार। नरकरूप में आपको, परो जान निरधार ॥ ११॥ पूरव पाप कलाप सव, आप जाप कर लेय। तव विलाप की ताप तप पश्चात्ताप करेय ॥ १२॥ मैं मानुष पर्याय धरि, धन योवन मद लीन। अधम काज ऐसे किये

नरकवास जिन दीन ॥ १३ ॥ सरसों सम सुख हेत तब, भयो लंपटी जान । ताही को अब फल लगो, यह दुख मेरु समान ॥ १४ ॥ कन्दमूल मदमांस मधु, और अभख अनेक । असन अश भक्षण किये, अटक न राखी एक ॥ १५ ॥ जल थल नभ निश चर विविधि विलवासी बहुजीव। मैं पापी अपराध विन मारो दीन अतीव ॥ १६ ॥ नगर दाह कीनो निठुर, गांव जलाये जान । अटवी में दीनी अगिन, हिंसा करि सुख मान ॥ १७ ॥ अपने इन्द्री लोभ कों, बोलो मृषा मलीन । कलपित ग्रन्थ बनायकें, बहकाये बहुदीन । दाव घात पर पञ्च सों परलक्ष्मी हरिलीन । छल बल हठ बल द्रव्य बल, परवनिता वश कीन ॥ १९ ॥ बढ़त परिग्रह पोट शिर, घटी न धन की चाह । ज्यों ईंधन के योग से, अगिन करै अतिदाह ॥ २० ॥ विन छानो पानी पियो, निशिभुंजो अविचार । देव द्रव्य खायो सही, रुद्र ध्यान उरधार ॥ २१ ॥ कीन्हीं सेव कुदेव की कुगुरुनि कों गुरु मान । तिनही के उपदेश सों, पशु होमोहित जान ॥ २२ ॥ दियो न उत्तम दान मैं लियो

न संयम भार। पियो मूढ़ मिथ्यात्व मद, कियो न तप अगसार ॥ २३ ॥ जो धरमी जन दया करि, दीनी सीख निहोर। मैं तिनसों रिस करि अधम, भाखे व-चन कठोर ॥ २४॥ करी कमाई पर जनन, सो आई मुझ तीर। हाहा अब कैसे धरों, नरक धरा में धीर ॥ २५॥ दुर्लभ नरभव पायकें, केई पुरुष प्रधान। तप करि साधें स्वर्ग शिव, मैं अभाग यह थान ॥ २६ ॥ पूरव सन्तन यों कही करनी चाले लार। सो आंखिन दीखो अवे, तब न करी निरधार ॥ २७ ॥ जिस कुटुम्ब के हेतु मैं, कीने बहु विधि पाप। ते सब साथी बीछुरे, परो न-रक में आप ॥२८ ॥ शरी लक्ष्मी खान कूं सीरी हुते अ-नेक। अब इस विपति विलाप में, कोई न दीखे एक ॥ २९ ॥ सारस सरवर तजि गये, सूको नीर निहार। फल विन वृक्ष विलोकि कैं, पक्षी लागे बाट ॥३०॥ पंच करण पोषण अरथ, अनरथ किये अपार। ते रिपु तो न्यारे भये, मोहि नरक में डार ॥ ३१ ॥ तब तिलभर दुख सहन कों, हुतो अधीरज भाव। अव ये कैसे दुसह दुख भरि हों दीरघ आव ॥ ३२॥ अब बैरी के वश परो,

कहा करों कित जांउ । सुनै कौन पूछें किसे, शरण कौन इस ठांव ॥ ३३ ॥ इहि कुछ दुख हरन कूं युक्ति उपाय न सूर । थिति बिन विपति समुद्र यह, कब तिरहों तट दूर ॥३४॥ ऐसी चिन्ता करत तहं, बढ़े वेदना एम। घीव तेल के योगतें, पावक प्रजलें जेम ॥ ३५ ॥

सोरठा—इस विधि पूरव पाप, प्रथम नारकी सुधि करे । दुख उपजावन जाय, होय विभंगा अवधिते ॥३६॥

दोहा—तवहीं नारक निर्दई, नयो नार की देष । धाइ धाइ नारक उठे, महादुष्ट दुर भेष ॥ ३७ ॥ सब क्रोधी कलही सकल, सब के नेत्र फुलिंग । दुख देनेको अति निपुण, निठुर नपुंसक लिंग ॥ ३८ ॥ कुंत कृपाण कमान शर, सकती मुग्दर दंड । इत्यादिक आयुध विविधि, लिये हाथ परचण्ड ॥ ३९ ॥ कहि कठोर दुरवचन बहु, तिल तिल खंडे काय । सो तब हीं ततकाल तन, पारावत मिल जाय ॥ ४० ॥ काटे कर छेदें चरन, भेदें परम विचार । अस्थिजाल चूरण करें, किचलें चाम उपार ॥ ४१॥ चीरें कर खत काठ ज्यों, फारे पकरि कुठार । तोड़ें अंतर मालिका, अंतर उदर विदार ॥४२॥

पेलें कोलू मेलिके पीसें घरटी घाल। तावें ताते तेल में, दहे दहन पर जाल ॥ ४३ ॥ पकरि पांय पटकें पुहमि, झटक परस्पर लेहि। कंटक सेज सुवावहीं शूली पे धर देहि ॥ ४४ ॥ घिसें संकयटक रूखसों वैतरणी ले जाहिं। घायल घेरि घसीटिये, किंचित् करुणा नाहिं ॥ ४५ ॥ केई रक्त चुवात तन, त्रिशूल भाजें तास। परवत अन्तर जायकें, करो बैठि विसरास ॥४६॥ तहां भयानक नारकी, धारि विक्रिया भेष। व्याघ सिंह अहि रूपसों, दारें देह विशेष ॥ ४७ ॥ केई करसों पायं गहि, गिरिसों देहिं गिराय। परे आनि दुर्भूमिपे खण्ड खण्ड हो जायं ॥ ४८ ॥ दुखसों कायर चित्त कर ढूंढें शरण सहाय । वे अति निर्दय घात हीं, यह अतिदीन घिंघाय ॥ ४९ ॥ व्रण वेदन नीकी करें एसे करि विश्वास। सींचें खारे क्षार सों, ज्यों अति उपजै त्रास ॥ ५० ॥ केई जकड़ जंजीर सों खेंचि खम्भ तें बांधि। सुधि कराय अघ मारिये, नाना आयुध साधि ॥ ५१ ॥ जिन उद्धत अभिमान सों, कीने पर भव पाप। तपत लोह आसन विषैं, त्रास दिखावें थाप ॥ ५२ ॥ ताती पुतली लोह की, लाय लगावें अंग। प्रीति करी जिन पूर्व भव, पर

कामिनि के संग ॥ ५३ ॥ लोचन दोषी जानि के, लोचन लेहिं निकाल । मदिरा पानी पुरुष कों, प्यावें तांवो गाल ॥ ५४ ॥ जिन अंगन सों अघ किये, तेई छेदे जाहिं । पल भक्षण के पापतें, लोहि लेछितन खाहिं ॥५५॥ कोई पूरव बैर कों, याद दिखावें नाम । कहि दुर्वचन अनेक विधि, करें कोय संग्राम ॥ ५६ ॥ भये विक्रिया देह सों, वह विधि आयुध जात । तिन ही सों अति रिस भरे, करें परस्पर घात ॥ ५७ ॥ शिथिल होय चिर युद्धतें, दीन नार को जाम । हिंसा नंदी असुर दुठ, आनि लरावें तान ॥ ५८ ॥ सोरठा

त्रितिय नरक परजंत, असुरी दीरघ दुःख है । भाखो जैन सिद्धन्त, असुर गमन आगे नहीं ॥ ५९ ॥ दोहा

इहि विधि नरक निवास में, चैन एकपल नाहिं । तपै निरंतर नारकी, दुख दावानल माहिं ॥ ६० ॥ मार २ सुनिये सदा, देत्र महा दुर्गंध । वहें व्यार असुहावनी, अशुभ क्षेत्र सम्बन्ध ॥६१॥ तीन लोक को नाज सब, जो भक्षण कर लेय । तो भी भूंक न उपशमे, कौन एक कण देंय ॥ ६२ ॥ सागर के जल सों जहां पीवत प्यास न

जाय। सहे न पानी बूंद सम, दहे निरंतर काय ॥६३॥ वात पित्त कफ जनित जे, रोग जात यावंत। तिनके सदा शरीर में, उदै आयु परयंत ॥ ६४ ॥ कटु तूंबी सो कटुक रस, कर क्षत की सम फांस। जिन की मृतक मं जार सो, अधिक देह दुर्वास ॥६५॥ योजन लाख प्रमाण जहां, लोह पिण्ड गलजाय। ऐसी है अति उष्णता ऐसी शीत सुभाय ॥ ६६ ॥

अडिल्ल—पंक प्रभा परयंत उष्णता अति कही।
धूम प्रभा में शीत उष्ण दोनों सही ॥
छठी सातवीं भूमिनि केवल शीत है।
ताकों उपमा नाहिं महा विपरीत है ॥६७॥

दोहा—श्वान स्याल मंजार को, परी कलेवर रास।
मास लसा अरु रुधिर की, कादौ जहां कुवास॥६८

ठाम २ असुहावने, सेवल के तरु भूर। पैने दुख देने कठिन, कंटक कलितक शूर ॥ ६९ ॥ और जहां असि पत्रवन, भीम तरोवर खेत। जिन के दल तरवार से, लगत घाव करदेत ॥ ७० ॥ वैतरणी सरिता समल, लोहित लहर भयान। बहे क्षार श्रोणित भरी, मांस कींच

घिन थान ॥ ७१ ॥ पक्षी वायस गीध गण, लोह तुंड सो जेह । मरम विदारैं दुख करैं, चोंथे चहुंदिश देह७२ पंचेन्द्री मन को महा, जो दुखदायक जोग । ते सब न-र्क निकेत में, एक निंद अमनोग ॥ ७३ ॥ कथा अपार कलेश की, कहै कहां लों कोय । कोट जीभ सों बरनि-ये तऊ न पूरी होइ ॥ ७४ ॥ सागर बंध प्रमाण थिति, छण २ तीजग त्रास । ये दुख देखे नारकी परवश परो निरास ॥ ७५ ॥ जैसी परवश वेदना, सहै जोय बहु भाय । सुवस सहै जो अंश भी, तो भव जल तरिजाय ॥७६॥ ऐसे नरक नारकी, भयो भील दुठ भाव । सागर सत्ताईस की, धारी मध्यम आव ॥ ७७ ॥ सागर काल प्रमाण अब, बरनों औसर पाय । जिनसों नरक निवास की, थित बरनी जिनराय ॥ ७८ ॥

॥ इति सम्पूर्णम् ॥

६८ श्री जिनवर पचीसी छप्पय छन्दः

ऋषभ आदि चउवीस तीर्थ पति तिन गुण गाऊं । दिव पुर कुल पितु मात वर्ण लक्षण बतलाऊं ॥ कार्य आयु शिव आसन अरु शिव थान मनोहर । कहूं सर्व

दरशाय जांय पातक भवभय हर ॥ प्रातः काल प्रतिदिन पढ़े स्वर्ग मुक्ति सुख सो लहै। क्रमशः कं सें पाय पद नाथूराम सेवक कहै ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धि से ऋषभोजन वसे अयोध्या। वंशेक्ष्वाकु प्रधान नाभिपितु अनुपम योद्धा ॥ मरुदेवा जिनमात वर्ण कंचन तनु सोहै। वृष लक्षण शतपांच चाप तनु लखजग मोहै ॥ थिति चौरासी पूर्वलख पद्मासन कैलास गिरि। मुक्ति थान जिनराज का नमौं जन्म ना होय फिर ॥ २ ॥ तज सर्वार्थ सिद्धि अयोध्या वसे अजित जिन। श्रेष्ट वंश इक्ष्वाकु पिता जिन शत्रु कहे तिन ॥ विजयासेना मात तनु गज लक्षण वर। ढौंच शतक धनु तनु थिति पूर्व लाख बहत्तर ॥ कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेद चल। नमौं त्रियोग सम्हालके त्रिजगनाथ तुमको स्वथल ॥ ३ ॥ संभव ग्रीवक त्याग जन्म श्रावस्ती लीना। वंश कहो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख दीना ॥ मात सुसेना हेम वर्ण घोटक शुभ लक्षण। शतक चार धनु देह साठ लख पूर्व आयु गण ॥ खड्गासन से शिव गये मुक्ति थान सम्मेद गिरि। नमो त्रिलोकीनाथ को

जन्म मरण ना होइ फिर ॥ ४ ॥ अभिनन्दन तज वि-
जय अयोध्या पितु संवर घर। सिद्धार्था जिन मात
वंश इक्ष्वाकु जन्मवर ॥ कनक वर्ण कपि चिन्ह हूंठ
शत चांप काय जिन। पूर्व लाख पंचास आयु खड्गासन
है तिन ॥ श्रीसम्मेदाचल विमल मुक्तिथान जिनराज
का। त्रिकाल वंदों भाव से धन्य जन्म है आजका ॥५॥
वैजयंत तज सुमति अयोध्या नगरी आये। पिता मेघ
प्रभु मात मंगला अति मन भाये ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु
हेम तनु चकवा लक्षण। धनुष तीन शत देह तुंग त्रि-
भुवन के रक्षण ॥ आयु पूर्व चालीस लख खड्गासन राजे
अटल। सम्मेद शिखर से शिवगये नमों नमों तुमको
स्वथल ॥ ६ ॥ पद्म प्रभु ग्रीवक सु त्याग कोसाम्बी आ-
ये। धारण नृप पितु मात सुसीमा आनंद पाये ॥ वंश
कहो इक्ष्वाकु कमल सम लालवर्ण तन। कमल चिन्ह
तन तुंग चांप ढाईसौ भगवन ॥ आयु तीस लख पूर्व
का खड्गासन से शिवगये। सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र जिन
नमों आज आनंद लये ॥ ७ ॥ नाथ सुपार्श्व ग्रीवक से
काशी उपजाये। सुप्रतिष्ठित पितु माता पृथिवी के मन

भाये ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु हरित तनु स्वस्तिक लक्षण। धनुष दोयसौ काय बीस लख पूर्व आयु भण ॥ खड्गासन सम्मेद गिर सिद्ध क्षेत्र से शिव गये। त्रिजग ताप हर्त्तारि को हाथ जोड़ हम इत नये ॥ ८ ॥ वैजयंत तज चन्द्रपुरी चन्द्रप्रभु स्वामी। महासेन पितु मात लक्ष्मणा के भये नामी ॥ श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि लक्षण वर। धनुष डेढ़सौ देह लाख दश पूर्व आयु धर ॥ खड्गासन से मुक्त हो अजर अमर अव्यय भये। शिवथान शिखर सम्मेद जिन तिन पद को हमनित नये ॥ ९ ॥ पुष्पदन्त आरण दिव तज काकन्दी राजे। पिता नृपति सुग्रीव मात रामा सुख साजे ॥ वंश लहो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मगरा लक्षण। सौधनु तुंग शरीर आयु दोलाख पूर्व गण ॥ खंगासन से शिवगये, सम्मेदाचल मुक्ति थल। नमों त्रिलोकीनाथ मैं तुम पद पंकज युगविमल ॥ १० ॥ शीतल अच्युत त्याग वास भद्दलपुर लीना। दृढ़रथ तात सुमात सुनन्दा को सुख दीना ॥ निर्मल कुल इक्ष्वाकु हेमतन श्रीतरु लक्षण। नव्वे धनुष शरीर आयु लख पूर्व विचक्षण ॥ खंगासन दृढ़धार

के सम्मेदाचल ध्यान धर । मुक्त भये तिनको नवें शीस नाय हम जोड़कर ॥ ११ ॥ श्रेयान्स पुष्पोत्तर से चय बसे सिंहपुर । विष्णु पिता विष्णु श्रीमाता उभय धर्म धुर ॥ वंशइक्ष्वाकु पुनीत हेमतन गेंड़ा लक्षण । असी चाप तनु लाख असीचउ वर्ष आयु भण ॥ खड्गासन दृढ़ शिव समय मुक्ति थान सम्मेदगिर । नवों त्रियोग लगाय के अशुभ कर्म खलु जांयखिर ॥ १२ ॥ वास पूज्य कापिष्ट स्वर्ग से चय चम्पापुर । लिया जन्म वसु पूज्य पिता माता विजया उर ॥ ख्यात वंश इक्ष्वाकु अरुण तनु महिषा लक्षण । सत्तर धनुष शरीर उच्च जग जन के रक्षण ॥ लाख बहत्तर वर्ष का आयु पद्म आसन अटल । सिद्ध क्षेत्र चम्पापुरी बन्दों सुख दाता अचल ॥ १३ ॥ विमल शुक्र दिव त्याग कम्पिला जन्म लियावर । कृतवर्म्मा जिन तात सुरम्या मात गुणाकर ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु कनक तन बराह लक्षण । साठ चांप तनु तुंग साठलख वर्ष आयुगणं ॥ खड्गासन सम्मेद गिर मुक्ति थान वंदन करों । त्रिभुवन नाथ प्रसाद से अब न भवोदधि में परों ॥ १४ ॥ सहस्त्रार दिव से अ-

नन्त जिन जन्म अयोध्या । सिंहसेन पितु ग्रेह लिया भविजन प्रति बोधा॥ सर्व यशा जिनमात वंश इक्ष्वाकु बखानो । हेमवर्ण सेई लक्षण जिनवर के जानो ॥ काउ धनुष पंचास का आयु तीसलख पूर्व जिन । खड्गासन सम्मेद शिव नवोचरण करजोड़ तिन ॥ १५ ॥ पुष्पोत्तर से धर्मनाथ चय वसे रत्नपुर । भानु पिता सुव्रता मात इक्ष्वाकु वंश धुर ॥ हेमवर्ण लक्षण सु वज्रतनु धनु पैंतालिस । आयु लाख दशवर्ष खड्ग आसन विधि जालिस ॥ सम्मेदाचल मुक्तिथल धर्मपोत धर भव्यजन । पार किये भव उदधि से करुणाकर करुणायतन ॥ १६॥ शान्तिनाथ पुष्पोत्तर से चय गजपुर आये । विश्वसेन ऐरा माता गृह बजे बधाये ॥ कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण मृग सोहै । काउ धनुष चालीस आयु लखवर्ष लयो है ॥ खड्गासन से शिव गये मुक्तिथान सम्मेदगिरि। युगचरण कमल मस्तक धरों बंधे कर्म खलु आयखिरि ॥ १७ ॥ कुंथुनाथ पुष्पोत्तर से चय जन्म गजपुर । सूर्य पिता श्रीदेवी माता उभय धर्मधुर ॥ कुरुवंशी तनु हेम वर्ण लक्षण अज जानो । काउ धनुष पैंतीस कामसुरकी

पहिचानो ॥ आयु सहस्र पंचानवे वर्ष खंग आसन कहो । सम्मेद शिखर शिवक्षेत्र शुभ जिनवन्दत हम सुख लहो ॥ १८ ॥ अरहनाथ सर्वार्थ सिद्धि से गजपुर आये । पिता सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये ॥ शुभ कुरुवंश महान हेम तनु मच्छ चिन्हवर । तीस चांप तनु तुंग त्रिजग मनमोहन सुन्दर ॥ सहस्र चउरासी वर्ष का आयु खड्ग आसन अटल । शिवथान शिखर सम्मेद जिनवन्दों तिनके पदकमल ॥ १९ ॥ मल्लिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना । कुम्भ पिता रक्षिता मात को बहुसुख दीना ॥ वंश कह्यो इक्ष्वाकु हेम तनु घट लक्षण वर । काय धनुष पच्चीस तुंग मोहैं लख सुर नर ॥ आयु वर्ष पचपन सहस्र खड्गासन सोहै अचल । शिवथान शिखर सम्मेद वर तीर्थराज विसरे न पल ॥ २० ॥ मुनि सुव्रत अपराजित से कुशाग्रपुर राजे । पितु सुमित्र पद्मावति माता को सुख साजे ॥ हरिवंशी तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोहै । वीस धनुष का काय तुंग देखतमन मोहै ॥ तीस सहस्र सु वर्ष का आयु खड्ग आसन सुभग । सम्मेद शिखर शिवथान

प्रभु तीर्थ राज भवि मुक्ति मग ॥ २१ ॥ प्राणंत तज न-
मिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना । विजय पिता वप्रा
माता कों अतिसुख दीना ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु वर्ण
तनु हेम सुहावन । पद्म पांखुरी अंक पंचदश चाप सुभग
तन ॥ आयु वर्ष दश सहस्र का पद्मासन से शिवगये ।
सिद्धक्षेत्र सम्मेद गिरि वन्दत हों मङ्गल नये ॥ २२ ॥
वैजयन्त से नेमनाथ सूरी पुर प्रगटे । सिंधु विजय शिव
देवी के देखत दुख विघटे ॥ लहो श्रेष्ठ हरिवंश श्याम-
तनु शंख अङ्कवर । काय धनुष दश सहस्र वर्ष का आयु
पूर्णधर ॥ खंगासन गिरिनारि से राजमतीपति शिव गये ।
पशुवंदि छुड़ाई दयाकर तिन पद पंकज हमनये ॥२३॥
पारस प्रभु आनत दिव तज काशी में राजे । अश्वसेन
वामा माता गृह दुंदुभि वाजे ॥ उग्र वन्श तनुनील
चिन्ह अहिराज विराजे । नवकर काय उतंग आयु श-
तवर्ष सु छाजे ॥ खंगासन सम्मेद गिर मुक्ति धाम मद
कमठ हर । ममवच तनु वन्दन करों तेवीसम जिनरा-
जवर ॥ २४ ॥ वर्धमान पुष्पोत्तर से कुण्डलपुर आये ।
सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये ॥ नाथ

वंश तनु हेम वर्ण हरि चिन्ह मनोहर। सात हाथ तनु आयु बहत्तर अब्द लयोवर ॥ खंगासन पावा पुरी मुक्ति थान जगतापहर। नबे सुनाथूरामनित हाथ जोड़ युग शीशधर ॥ २५ ॥

इति श्रीजिनवरपचीसीसम्पूर्णम्।

६९ जिनगुणमुक्तावली।

श्रीजिनेश यतीश को, सुमिर हिये उपगार।
जिनवर गुण मुक्तावली, लिखूं स्वपर सुखकार १

चौपाई॥ तीर्थंकर पद के गुण घणे। घन धारावत जाहिं न गिणें॥ यथाशक्ति करिये चिन्तौन, जाते होय पाप विष वौन ॥ २॥ सतयुग में प्रगटै परवीन। मानुष देह दोषकर हीन। आर्य्यखण्ड आय अवतरें। युगल सृष्टि में जन्म न धरे ॥ ३ ॥ क्षत्री वंश बिना नाहिं और। जाके गर्भ जन्म की ठौर॥ माता के रज दोष न होय॥ एक पूत जन्मै शुभ सोय ॥ ४ ॥ मात पिता के देह मझार। मल अरु मूत्र नहीं निर्धार॥ गर्भ शोध देवी आदरै। स्वर्ग सुगन्धि लाय शुचिकरै ॥ ५॥ जाके औदारिक तन माहिं। सात कुधातु मल तैं नाहिं ॥

यातैं परमोदारिक कहो । आदि पुराण देख सर दहो ॥ ६ ॥ केवल ज्ञान समय तन सोय । सहज निगोद विना तब होय॥ नारी नपुंसक के संबंध । तीर्थंकर पद उदय न बंध ॥ ७॥ जाके संयम समय सही । आलोच न विधि वरणी नहीं ॥ मस्तक भाग विराजै केश । श्याम सचिक्कन सुभग सुवेश ॥ ८ ॥ अधिक हीन जिस अंगन होय । आधिव्याधि व्यापै नहिं कोय । विष शस्त्रादिक कारण पाय । आयु कर्म स्थित छेद न ताय ॥ ९ ॥

॥ दोहा ॥

इत्यादिक महिमा घणी, तीर्थंकर परमेश ।

दश विधि जाके जन्म तैं, अतिशय और विशेष १०

चौपाई ॥ प्रभु के अंग न होय पसेव, नहीं निहार क्रिया स्वयमेव । नाशा नेत्र कर्ण मल नहीं । जीभ दंत मल मूल न कहीं ११ क्षीर बराबर रुधिर अनूप, शंख वर्ण शुचिमान सरूप । समचतुरस्र सुभग संठान । तुंग देह दश ताल प्रमाण ॥ १२ ॥

॥ दोहा ॥

अपने कर अंगुष्ठ सो, मध्यमिका परयंत ।

बारह अंगुल ताल यह, अवधारो मतिवंत १३

याही अपने ताल सों, दशगुण ऊंच शरीर।
सम चतुरस्र संठानको, यह प्रमाण है वीर १४

चौपाई॥ प्रथम सार संहनन अविद्ध। वज्रवृषभ नाराच प्रसिद्ध॥ रूप सम्पदा अचरज कार। सुरनर नाग नयन मनहार॥१५॥ सहस्रअठोतर लक्षण लसें। चक्री के तन चौंसठ बसैं। लक्षण पाय सुलक्षण भिन्न। सो प्रतिमा के आसन चिह्न॥ १६॥ सहज सुगन्धि वसै वपु माहिं। सब सुगन्धि जासो दबजाहिं॥ लोक उठावन शक्ति निवास। अतुल अनंत देह बल जास॥ १७॥ प्रिय हित वचन अमृत मनहार। सब जगजंतु श्रवण सुखकार॥ जन्म जात अतिशय दश येह। अब दश केवल के सुन लेह॥ १८॥ दोसौ योजन परिमित लोय। चहुंदिश में दुर्भिक्ष न होय॥ व्योम विहार भूमिवत जास। वपुसों होय न प्राण निवास॥ १९॥ सब उपसर्ग रहित जग भूप। निराहार अतितृप्त स्वरूप॥ एक दिशा सन्मुख मुख जोय। चतुरानन देखे सब कोय २०। सब विद्यापति अति गंभीर। छाया बरजित विमल शरीर॥ पलक पात लोचन नहिंगहैं। नख अरु केश एक से रहैं॥ २१॥

सोरठा—नई रसादिक धात, होय न अशन अभावतैं, तिसकारण तैं भ्रात, नखअरुकेशबढ़ै नहीं ॥ २२ ॥

। दोहा ।

ये दश अतिशयज्ञान के, लिखे ग्रन्थ परिमान ।
चौदह सुरकृत होत हैं, ते अब सुनों सुजान ॥ २३ ॥

। चौपाई ।

भाषा अर्धमागधी नाम । सकल जीव समझै तिहि-ठाम ॥ मागध नाम देव परिभाव । यह गुण प्रगटै स-हज सुभाव ॥ २४ ॥ सब की होय एकसी टेव । उर मैत्री करतैं स्वयमेव ॥ सब ऋतु के फल फूल समेत । व-नस्पति अति शोभा देत ॥२५॥ रत्नभूमि दर्पण उनहार गति अनुकूई पवन संचार ॥ सकल सभा आनंद रस-लेह । मरुत कुमार बुहारी देह ॥ २६ ॥ योजन मित निर्मलभूठवै। मेघ कुमार गंधि जल चवै ॥ छप्पन छ-प्पन चहुंदिश मांहि। कंचन कमल गगन पथ जांहिं ॥२७॥ एक सरोज मध्य सुर करै । तातैं अधर पैंड प्रभु धरै ॥ निर्मल दिश निर्मल नभ होय । जन आह्वान करैं सुर-लोय ॥ २८ ॥ धर्म चक्र आगे तम भिन्न । चलै धर्म च-

शचीपति चिन्ह ॥ झारी दर्पण प्रमुख मनोज्ञ। मंगल द्रव्य आठ विधि योग्य ॥ २९ ॥

। दोहा ।

आठ प्रातिहार्यव विभव, तीरथ प्रभु के होय।
नाम ठामतिन के सुभग, सुनिये सज्जनलोय ॥ ३० ॥
समोसरसमें मणिखचित, मध्य त्रिमेखलपीठ। गंधकुटी तापर बनी, चतुरामुख मन ईठ ॥ ३१ ॥ बीच सिंहासन जगमगै, मणिमाणकमय रूप। अंतरीक्ष राजै तहां पद्मासन जग भूप ॥ ३२ ॥

॥ सोरठा ॥

समोसरण में मीत, प्रभु पद्मासन ही रहैं।
यह अनादि की रीति, और भांत मत जानयो ॥३३॥

॥ दोहा ॥

तीन छत्र सिर सोहियैं, चन्द बिंब उनहार ॥ भामंडल चहुंदिशदिपै, रविछविछिपै निहार ॥३४॥ यक्ष अमर चौंसठ चमर, ढारत खरे सुहाहिं। बरषैं सुमन सुहावनै, सुरदुंदुभि गरजाहिं ॥ ३५ ॥ जातरू नीचै नाथ को, उपजै केवल ज्ञान। सोक शोक के हरणतैं, सो अशोक

अभिराम ॥ ३६ ॥ तीनकाल वाणी खिरै, छहछह घड़ी प्रमाण । श्रोताजन के श्रवणलों, सो निरक्षरी जान ।३७। इह विधि जिनवर गुण कथा, कहत लहत कोपार । वाहिय गुण निज प्रगट सो, लिखे ग्रंथ अनुसार ॥ ३८॥ अंतरंग महिमा अतुल, का पै वरणी जाय । सुरगुरुते नहिं कहसके, थकेस्थविर मुनिराय ॥३९॥ तीर्थंकर गुण चिंतवन, परम पुण्य को हेत । सम्यक् रत्न अंकूर है, उपजै भवि उर खेत ॥ ४० ॥ जिनवर गुण मुक्तावली छंद सूत में पोय । गुण माला भूधर गुही. करत कंठ सुख होय ॥ ४१ ॥ इति सम्पूर्णम् ।

७० साधु वन्दना भाषा ।

॥ दोहा ॥

श्री जिन भाषित भारती सुमिर आन मुख पाठ ॥ कहूं मूल गुण साधु के परमित विंशति आठ ॥१॥ पंच महाव्रत आदरन समिति पंच विधिसार । प्रबल पंच इन्द्रिय विजय षटावश्यकाचार ॥ २ ॥ भूमि शयन मंजन तजन बसन त्याग कच लोंच । एक बार लघु असनं थिति असन दंतवन मोच ॥ ३ ॥

॥ चौपाई ॥

थावर जीव पंच परकार। चार भेद जंघम तन धार॥ जो सब जीवन का रक्षपाल। सो साधू वन्दों त्रयकाल ॥ ४ ॥ संतत सत्य वचन मुख कहैं। अथवा मौन सुव्रतधर रहैं ॥ मृषा वाल बोलैं ना रती। सो जिन मारग सांचेयती ॥ ५ ॥ कौड़ी आदि रत्न पर्यन्त। घटित अघट धन भेद अनंत ॥ दत्त अदत्त न परसैं जोय। तारण तरण मुनीश्वर सोय ॥ ६ ॥ पशु पक्षी नर दानव देव। इत्यादिक रमणी रति सेव ॥ तजैं निरन्तर मदन विकार। सो मुनि नमो जगति हितकार ॥ ७ ॥ द्विविधि परिग्रह चउविस जान। संख्य असंख्य अनन्त बखान ॥ सकल संग तज होंय निरास। सो मुनि लहैं मोक्ष पुर बास ॥८॥ अधो दृष्टि मार्ग अनुसरैं। प्राशुक भूमि निरख पद धरैं ॥ सदा हृदय साधैं शिव पन्थ। सो तपसी निर्भय निर्ग्रंथ ॥ ९ ॥ निराभिमान निबन्ध अधीन। कोमल मधुर दोष दुःख हीन ॥ ऐसे सुवचन कहैं स्वभाव। सो ऋषि राज नमों धर भाव ॥ १० ॥ उत्तम कुल श्रावक साचार। तास ग्रेह प्राशुक आहार ॥

भुंजें दोष छयालिस टालि। सो मुनिवर वहु सुरति सम्हालि ॥ ११ ॥ उचित वस्तु निज हित परहेत। तथा धर्म उपकरण अचेत ॥ निरख यत्न से गहते सोय। सो मुनि नमों जोड़ कर दोय ॥ १२ ॥ रोग विकृत पूर्व आदान। नवो द्वार मल अंग उठान ॥ डालें प्राशुक भूमि निहारि। सो मुनि नमों भक्ति उर धारि ॥ १३ ॥ कोमल कर्कश हलवे भार। रूक्ष सचिक्कण तप्त तुषार-इन को परसि न सुख दुःख लहैं। सो मुनि राज जिनेश्वर कहैं ॥ १४ ॥ आमल कटुक कषायल मिष्ट। तिक्त क्षार रस इष्ट अनिष्ट ॥ इन्हैं स्वादि रति अरति न वेद। सो ऋषि राज नवें तिन देव ॥ १५ ॥ शुभ सुगन्ध नानाधु प्रकार। दुःख दायक दुर्गन्ध अपार ॥ नाशा विषय गिनैं सम तूल। सो मुनि जिन शासन तत मूल ॥ १६ ॥ श्याम हरित सित रक्त पीत। वर्ण विवर्ण मनोहर भीत ॥ ये निरखें तज राग विरोध। सो मुनि करें कर्म मल सोध ॥ १७ ॥ कुशब्द सुशब्द समरस स्वाद। श्रवण सुनत नहीं हर्ष विषाद ॥ स्तुति निन्दा को सम सुनें। सो मुनि राज परमपद गुने ॥ १८ ॥ सा-

मायक साधें तिहुंकाल । मुक्ति पंथ की करें सम्हाल ॥ शत्रु मित्र दोनों सम गनें । सो ऋषि राज कर्म रिपु हनें ॥ १९॥ अरिह सिद्ध सूर उवझाय । साधू पंच परम पद दाय ॥ इन के चरण नवें मन ल्याय । तिन मुनि-वर के वन्दों पांय ॥२०॥ पावन पंच परम पद इष्ट । जगति माहिं जाने उत्कृष्ट ॥ ठाने गुण थुति बारंबार । सो मुनि राज लहैं भवपार ॥ २१ ॥ ज्ञान क्रिया गुण धारें चित्र । दोष विलोकि लहैं प्रायश्चित्त ॥ नित प्रतिक्रमण करें रस लीन । सो साधू संयमी प्रवीण ॥२२॥ श्री जिन बचन रचन विस्तार । द्वादशांग परमागम सार ॥ निज मति सान करें सम भाव । सो मुनिवर बन्दों धर चाव ॥ २३ ॥ कायोत्सर्ग मुद्रा धर नित्त । शुद्ध स्वरूप विचारें चित्त ॥ त्यागे त्रिविधि योग ममकार । सो मुनिराज नमों उरधार ॥२४॥ प्राशुक शिला उचित भू खेत । अचल अंग सम भाव सचेत ॥ पश्चिम रैन अलप निद्राल । सो योगीश्वर बंचे काल ॥२५॥ धर्म ध्यान युत पर्व विचित्र । अन्तर बाहर सहज पवित्र न्हौंन विलेपन तजें त्रिकाल । सो मुनि बन्दों दीन द-

याल ॥ २६ ॥ लोक लाज विगलित भयहीन । विषय वासना रहित अदीन ॥ नग्न दिगम्बर मुद्रा धार । सो मुनिराज जगति हितकार ॥ २७ ॥ सघन केश गर्भित मल कीच । त्रस असंख्य उपजें तिन बीच ॥ ताच लुंचे यह कारण जान । सो मुनि नमों जोड़ युग पान ॥ २८ ॥ क्षुधा वेदना उपशम हित । रस अनरस सम भाव समेत ॥ एक बार लघु भोजन करें । सो मुनि मुक्ति पंथ पद धरें ॥ २९ ॥ देख सहारा साधन मोक्ष । तब लों उचित काय बल पोष ॥ यह विचार थिति लेत अहार । सो मुनि परम धर्म धनधार ॥ ३० ॥ जंह जंह नव द्वारा मल पात । तंह तंह अमित जीव उत्पात ॥ यह लख तजें दंतवन काज । सो शिव पद साधक ऋषि राज ॥ ३१ ॥

। दोहा ।

ये अट्ठाइस मूल गुण जो पालें निर्दोष । सो मुनि कहत बनारसी पावें अविचल मोक्ष ॥ ३२ ॥

इति श्री साधु वन्दना सम्पूर्ण ।

॥ ॐनमःसिद्धेभ्यः ॥

७१ सूवा बत्तीसी ॥

॥ दोहा ॥

नमस्कार जिन देवको, करों दुहुं करजोर ॥ सुवा बत्तीसी सुरस मैं, कहुं अरिनदल मोर ॥ १ ॥ आतम सुआ सुगुरु बचन, पढ़त रहै दिन रैन ॥ करत काज अपरीतिके, यह अचरजलखि नैन ॥ २ सुगुरु पढावे प्रेम सों, यहू पढ़त मनलाय ॥ घटके पट जो ना खुलै, सबहि अकारथ जाय ॥ ३ ॥

॥ चौपाई ॥

सुवा पढ़ायो सुगुरु बनाय । करम बनहि जिन जइयो भाय ॥ भूलें चूके कबहु न जाहु । लोभ नलिन पैं दगा न खाहु ॥ ४ ॥ दुर्जनमोह द' के काज । बांधी नलनी तर धर नाज ॥ तुम जिन बैठहु सुवा सुजान । नाज विषयसुख लहि तिहं थान ॥ ५ ॥ जो बैठहु तो पकरि न रहियो । जो पकरो तो दृढ़ जिन गहियो ॥ जो दृढ़ गहो तो उलटि न जइयो । जो उलटो तौ तजि भजि

धइयो ॥ ६ ॥ इह विधि सूआ पढ़ायो मित्त । सुवटा पढ़िके भयो विचित्त ॥ पढ़त रहै निशदिन ये बैन । सुनत लहै सब प्रानी चैन ॥ ७ ॥ इक दिन सुवटै आई मनै । गुरु संगत तज भज गये बनै ॥ बन में लोभ नलिन अति बनी । दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ ता तल विषय भोग अन धरे । सुवटै जान्यो ये सुख खरे उतरे विषय सुखन के काज । बैठ नलिनदैं खिलवै राग ॥९॥ बैठो लोभ नलिनपैं जबै । विषय स्वाद रस लटके तबै ॥ लटकत तरैं उलटि गये भाव । मुंखरडी ऊपर भये पांव ॥ १० ॥ नलिनी दृढ पकरैं पुनि रहै । मुखतैं वचन दीनताकहै । कोउ न बनमें छुड़ावन हार । ललनी पकरहि करहि पुकार ॥ ११ पढ़त रहै गुरु के सब बैन । जे जे हितकर सिखये ऐन ॥ "सुवटा बनमें उड़ जिन जाहु । जाहु तो भूल खता जिन खाहु ॥ १२ ॥ नलनीके जिन जइयो तीर । जाहु तो तहां न बैठहु बीर ॥ जो बैठो तो दृढ जिन गहो । जो दृढगहो तो पकरि न रहो १३ जो पकरो तो चुगा न खइयो । जो तुम खावो तो उलटन जइयो । जो उलटो तो तज भज धइयो । इतनी

सीख हृदय मैं लहियो" ॥ १४ ॥ ऐसे बचन पढ़त पुन रहै । लोभ नलनि तज भज्यो न चहै ॥ आयो दुर्जन दुर्गति रूप । पकड़े सुवटा सुन्दर भूप ॥ १५ ॥ डारे दुखके जाल मझार । सो दुख कहत न आवै पार ॥ भूख प्यास बहु संकट सहै । परबस परे महा दुख लहै ॥ १६ ॥ सुवटा की सुधि बुधि सब गई । यह तौ बात और कछु भई ॥ आय परे दुख सागर माहिं । अब इतलैं किलको भज जाहिं ॥ १७ ॥ केतोकाल गयो इह ठौर । सुवटे जिय में ठानी और ॥ यह दुख जाल कटै किहँ भांति। ऐसी मन में उपजी शांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु सुमरन करै । पाप जाल काटन चित धरै ॥ क्रम २ कर काटयो अघ जाल । सुमरन फल भयो दीनदयाल ॥ १९ ॥ अब इतलैं जो भज कैं जाउं । तौ नलनीपर बैठ न खाउं॥ पायो दाव भज्यो तत्काल। तज दुर्जन दुर्गति जंजाल२० आये बहुत बहुर बनमाहिं । बैठे नरभव द्रुमकी छाहिं तित इक साधु महा मुनिराय । धर्म देशना देत सुभाय ॥ २१ ॥ यह संसार कर्मवन रूप । तामहि चेतन सुआ अनूप ॥ पढ़त रहै गुरु बचन विशाल । तौ हू न अप-

नी करै संभाल ॥२२॥ लोभ नलिनपैं बैठे जाय। विषय स्वाद रस लटके आय ॥ पकरहि दुर्जन दुर्गति परै तामें दुःख बहुल जिय भरै ॥ २३ ॥

सो दुख कहत न आवै पार। जानत जिनवर ज्ञान सभार ॥ सुनतैं सुवटा चौंक्यो आप। यह तो मोहि परयो सब पाप ॥ २४ ॥ ये दुख तौ सब मैं ही सहे। जो मुनिवर ने मुखतैं कहे ॥ सुवटा सोचै हिये मझार ये गुरु साचे तारनहार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिरयो करम वन माहिं। ऐसे गुरु कहुं पाये नाहिं ॥ अब मोहि पुण्य उदै कुछ भयो। सांचे गुरु को दर्शन लयो ॥२६॥ गुरु की गुण स्तुति वारंवार। सुमिरै सुवटा हिये मझार ॥ सुमरत आप पाप भज गयो। घट के पट खुल सम्यक थयो ॥२७॥ समकित होत लखी सब बात। यह मैं यह परद्रव्य विख्यात ॥ चेतन के गुण निजमहि धरे। पुद्गल रागादिक परिहरे ॥२८॥ आप मगन अपने गुण माहि। जन्म मरण भय जिय को नाहिं ॥ सिद्ध समान निहारत हिये। कर्म कलंक सबहि तज दिये ॥ २९ ॥ ध्यावत आप माहिं जगदीश। दुहुंपद एक विराजत ईश ॥

इहविधि सुवटा ध्यावत ध्यान । दिन दिन प्रति प्रगटत कल्यान ॥ ३० ॥ अनुक्रम शिवपद जियको भया । सुख अनंत विलसत नित नया ॥ सतसंगति सब को सुख देय । जो कछु हिय में ज्ञान धरेय ॥ ३१ ॥ केवलि पद आतम अनुभूत । घट घट राजत ज्ञान संजूत ॥ सुख अनंत विलसे जिय सोय । जाके निजपद परगट होय ॥३२॥ सुवा बतीसी सुनहु सुजान । निजपद प्रगटत परम निधान सुख । अनंत विलसहु ध्रुव नित्त । 'भैयाकी' विनती धर चित्त ॥ ३३ ॥ संवत सत्रह त्रेपन माहिं । अश्विन पहिले पक्ष कहाहिं ॥ दशमीं दशों दिशा परकाश । गुरु संगति तैं शिव सुखभास ॥

इति सूवाबत्तीसी ।

७२ अथ सुगुरुशतकम् ।

। दोहा ।

नमूं साधु निर्ग्रन्थ गुरु, परम धर्म हितदैन । सुगति करण भवि जनन को, आनंदरूप सुवैन ॥ १ ॥ बुद्धि बधे सुध ऊपजे, सुगुरु कुगुरु सुध होय । सुगुरु शतक के सुनत ही, दुविधा रहै न कोय ॥ २ ॥ ठौर ठौर जिन

ग्रन्थ में, कह्यो साधुको भेद । आठबीस गुण मूल बिन, वृथा लिंग को खेद ॥ ३ ॥ उत्तर गुण के परचाले, मुनि पद बिन से नाहिं । मूल बिनट्ठे वृक्ष ज्यूं, डाल मूल फल आहिं ॥ ४ ॥ तिलतुष आदि लगाय के, बहुत परिग्रह भेद । सो कबहूं राखें नहीं, तीनों काल निषेद ॥५॥ अब इस पंचम काल में, सो गुरु दीखैं नाहिं । तिन बिन और गुरू नहीं, नमें तो सम्यक्त जाहिं ॥६॥ विमल शीलयुत नारि को, भर्तागये विदेश । पति पै रहै सुशीलिया, तजे कुशीली शेष ॥ ७॥ तातें समकित भाव को, राखा चाहे कोय । नेकमात्र भी कुगुरु को, नमे न कबहूं सोय ॥ ८ ॥ कल्पित युक्ति बनाय के, केई कहें इषाय । नेकनमें तो कुगुरु को, हिंसा किस विधिथाय ॥ ९॥ हिंसा के दो भेद हैं, स्व पर कहे जिनेश । आपो आप इबोइयो, हिंसा भई विशेष ॥१०॥ पर हिंसा परजीव के, करे प्राण को नाश । स्व हिंसा ऐसी कही, भवभव पावे त्रास ॥ ११ ॥ केई भोले यूं कहैं, जैन जैन सब एक । तिन के जैन अभ्यास को कैसे होय विवेक ॥ १२ ॥ शिव मारग को गौणकर, मुख्य

चाहैं जगराह। गुरु नाहीं ठग हैं वही, बिन पूंजीके साह॥ १३॥ सांची कथनी सुगुरु बिन, कहैं न लोभ लगाव। कै सांची श्रावक कहे, लेनेको नहीं भाव॥१४॥ पर को धर्म सुनाय के, चाहैं पूजा भेट। ग्रन्थ सहित गुरु बन रहे, दया धर्म सब मेट॥ १५॥ ऐसे कुगुरु जाके घरां, गुरुहो भोजन लेह। धर्मगयो धनहू गयो, गयो जन्म नरदेह॥१६॥ गिरहू तें गिरणो भलो, पड़न जल धि में सार। बांबी मुख पैंठन भलो, बुरो कुगुरुव्यव-हार॥१७॥ हालाहल पीतो भलो, अग्नि प्रवेशहु ठीक। लाल पाल कुगुरुनथकी, भली नहीं हैं अलीक॥१८॥ घर बन चैत्यालो गिनें, श्रावकूं जनकूं शिष्य। हो महंत तिनसूं कहैं, हम तो तुम्हरे मित्त॥ १९॥ तुम्हरे बड़े कदीम ते, मानत चालत आहि। ताही मारग तुमचलो, धर्म मूर्त्ति लौलाहि॥२०॥ ऐसे वचनन से बंध्यो, बोझ बड़ाई पाय। सूवो पकरोनलनी से, उड़ो न तासों जाय॥२१॥ जैसे वेश्यासक्त नर, ठगो थको हर्षाय। त्यूं जो ठगो मिथ्यात गुरु, हसहस धर्म ठगाय॥ २२॥ नेक नमैं सग्रन्थ गुरु, समकित रत्न ठगात। खल सांटे नहीं

खोइये, जन्म जवाहर भ्रात ॥ २३ ॥ परनर नेक निहार तें, जात त्रिया को शील। त्यों जोनमें सग्रंथ को, समकित जाय न ढील ॥ २४ नेक फिरे तो जंग में, सूरपना सब जाय। नेक नमें सग्रन्थ को, समकित जाय पलाय ॥२५॥ विंदु गिरे जो स्वप्न भी, यती सती पन जाय। स्वप्न मात्र सग्रन्थ को, नमते समकित जाए ॥ २६ ॥ केई कुगुरु यूं कहे, भोलों को बहकाय। ऊपर से नमनेथकी, समकितकिस विधि जाय ॥ २७ ॥ मन वच काया तीन में, प्रवल काय को पाप। तीनों आरंभ के विषे, निर्णय करो स्याप ॥ २८ ॥ तातें मन वचकाय में, प्रवल कोन हो जाय। ताही को दूषण अधिक, कहो सुगरु मुनिराय ॥ २९ ॥ मात तात मित भ्रात को, नमें जगत् की राह। धर्म नमें शिवराह है, जित भावे तितजाय ॥ ३० ॥ तातें मन वच काय कर, सुनों सयाने लोक। जगत् रसावन जनन को, कवहूं न दीजे धोक ॥ ३१ ॥ जैन ग्रंथ भेदी नहीं, नहीं सुगुरु की बात। तिनकं ओलंभो नहीं, उल्लू भानु प्रकाश ॥३२॥ तानजे कहैं हम जानियो, सुगुरु कुगुरु को भेद। पै इन

तें व्यवहार तो, छोड़े उपजे खेद ॥ ३३ ॥ काल अनंता बीतियो, साधतही व्यवहार । कबहूं तुम को नाभयो, सुगुरु कुगुरु निर्धार ॥ ३४ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म को, नमस्कार एक वार । दोष लगै परनाम को, यामें फेरन-सार ॥ ३५ ॥ श्रुत सागर टीका करी, कुगुरु निषेध अपार । संशय जाके होय सो, देख करो निर्धार ॥ ३६ ॥ गत गत में बहु विपत युत, कह्यो ग्रहीत मिथ्यात । बोझ बड़ाई पाय कर, तजन सको यह बात ॥ ३७ ॥ जो मूरख अज्ञान तें, ग्रह्यो न छांड़ों जाय । तब ग्रहीत शल जासको, भव अनंत दुखदाय ॥३८॥ परिवर्तन करवावही, यह ग्रहीत मिथ्यात । भेद बिना छाड़ो नहीं, धरे अनंते गात ॥ ३९ ॥ नमें कायते कुगुरु को, मन बच भेद न पाय । ता विपाक भव भव विषे, धरे अनंती काय ॥ ४० ॥ नाम दिगम्बर को कहें, अंबर धारें जेह। देखत भूली करत हैं, मूढ़ न जाने केह ॥ ४१ ॥ पक्षपात छाड़े नहीं, पर को मूरख जान । श्रावक जन को नायकर, चतुर आप को मान ॥ ४२ ॥ वैसे गुरु श्रावक नहीं, ऐसे दुक्खम काल । जैसे तुम श्रावक रहे, तैसे हम

गुरु चाल ॥ ४३ ॥ निगुरा रहना योग्य नहीं, गुरु बि-
न ज्ञान न होय । ऊंट ब्याह खर गान को, कौतुक क-
हिये सोय ॥ ४४ ॥ कमल कठोड़े नीपजे, अग्नि माहिं
हिम होय । धारें संग दिगम्बरां, तिन सुख धर्म न कोय
॥ ४५ ॥ बालू पेले तेल हू, अहिमुख अमृत जोय ।
तोऊ न कबहू जैन के, वसन सहित गुरु होय ॥ ४६ ॥
अहं दग्ध अज्ञान नर, पक्षपात की भूल । भेद बानकर
नमत हैं, तिन के मस्तक धूल ॥ ४७ ॥ जान हलाहल
खाइये, अन जानेहू खाय । दोउ मरैं संशय नहीं, पाप
न अहलो जाय ॥ ४८ ॥ याते जान अजान तू, भूल वि
सरहू चित्त । नमस्कार मुनि कुगुरु विन, कहुन कीजो
मित्त ॥ ४९ ॥ हंस नहीं जादेश में, कालदेश है सोय ।
कागन को हंसा गिने, ऐसे मूरख लोय ॥ ५० ॥ लौकिके
वचननसे ठगे, मूढ़ न जाने भेद । गुरु संज्ञा के कथनतें,
यह मांडे धर खेद ॥ ५१ ॥ वचन गुरु शिक्षा गुरु, वय
अधिको गुरु होय । धर्म गुरु कछु और है, उनकू नमो
मद दोय ॥ ५२ ॥ हेय कथनहू बहुत है, गेय कथनहू
होय । उपादेय हू वचन हैं, देख जान यह सोय ॥५३॥

काल अनंता बीतियौं, इस बिधि धर २ काय। सुगुरु कुगुरु की परख, कौ कबहुन बनो उपाय ॥ ५४ ॥ उलट पलट शिक्षा सुनी, मत मलकी बहुबार। स्वरग नरक चहूं गति विषे, नाहिं भयो निर्धार ॥ ५५ ॥ चेतन को यह दाव है, जो चेते तौ वीर। सहज नबेड़ो होत है, सुगम गहंते धीर ॥ ५६ ॥ मोक्षदेश की राह यह, कुंद कुंद मुनिराय। प्रगट दिखाई सबन को, हूं विदेह अब जाय ॥ ५७ ॥ नय प्रमाण निक्षेप तें, देवधर्म गुरु ठीक। कर आत्मानुभवन कर, विकलपत जो अलीक ॥ ५८ ॥ कर समाधि तन छांड़के, सदा चाउथो काल। उस सुक्षेत्र में ऊपजे, तुरतहिं होत संभाल ॥ ५९ ॥ श्रुतकेवलि केवलि जहां, रहैं शासते धीर। शुद्धात्म सुनिपद बिमल, भावलिंगधरवीर ॥ ६० ॥ प्रश्न करे फिर शिष्य यह, किस विधि साधन होय। इस दुक्खम कलिकाल में, किस बिधि पैये सोय ॥ ६१ ॥ अनंतानुबंधी प्रबल, प्रथम चौकड़ी सोय। बहुर तीन मिथ्यात हैं, सात प्रकृति इस होय ॥ ६२ ॥ क्षय होते सातूं प्रकृति, क्षायक समकित होय। उपशमतें उपशम कहो, क्षय उपशम क्षय

होय ॥ ६३ ॥ क्षय उपशम विधि तीन हैं, वेद कहैं वि-
धचार । क्षायक के द्वै भेद हैं यूं, नव भेद विचार ॥६४॥
करण लब्धि है पंचमी, सो न भई रे जीव । चारलब्धि
बहु वर भई, आनहु आतमपीव ॥ ६५ ॥ काल लब्धि
तें सहज ही, उपजे विन उपदेश । कै गुरु के उपदेशतें,
द्वय प्रकार परवेश ॥ ६६ ॥ चारों गति में होत है, सैनी
जिय सरवंग । मिथ्या भाव विदार के, समकित होय
अभंग ॥ ६७ ॥ ज्ञानगर्व मतिमंदता, निठुर वचन दुर-
भाव । आलस पाचों विधि थकी, समकितनाश प्रभाव
॥ ६८ ॥ चित्त प्रभावना में रहै, हेयाहेय सुज्ञान ॥ धी-
रज हर्ष प्रवीणता, भूषण पांच बखान ॥ ६९ ॥ षट् अ-
नायतन मूढ़त्रय, आठ दोष मद आठ । यह पच्चीसों
मल कहे, मलो मूलते ठाठ ॥ ७० ॥ ठौर ठौर जिन
ग्रंथ में, भरा भेद आपार । देख सीख निर्णय करो, तु-
रत होय निर्धार ॥ ७१ ॥ सरधानी जनदेखकर, मन में
हर्षित होय । मिथ्या विषई जनन को, नाहिं सराहै
सोय ॥ ७२ ॥ इक मिथ्या औगुण लगे, सब गुण जाय
पलाय । हीरकणी मोदक पड़ी, तिनको कोउ न खाय

॥ ७३ ॥ घृत मीठो मेवा विविध, औगुण भये समस्त। शुभ क्रिया बाह्यादिवहु, समकित विना निरस्त ॥७४॥ एकहु गुण न सराहिये, सब गुण गहिये मित्त। विष-मेलाके मोद का, चतुर न चाखे चित्त ॥ ७५ ॥ प्रगटभेष मिथ्यात को, मूढ़न जाने भेद। गुण बिन आप पुजाइ है, श्रुततें करे निषेद ॥ ७६ ॥ निंद्यनीय सो निंद्य है, बंदनीय सो ऐन। निंद्य बंद्य अरु बंद्यनिंद, ऐसो भेद न जैन ॥७७॥ सम्यक्ज्ञान बिना कछू, भेद न जानो जाय। तातें समकित होन को जैनी करो उपाय ॥७८॥ जैसे चिंतामणि बडो सब रतन के माहिं। त्यूं सब धर्मन में बड़ो समकित संशय नाहिं ॥ ७९ ॥ सिद्ध भये हैं होंयगे तीनकाल तिहुं लोय। समकित को परताप यह भ्रम जानो मत कोय ॥ ८० ॥ चार चिन्ह समकित भये कहे जिनागम माहिं। प्रशमभाव संवेगता दया आस्तिक ताहिं ॥ ८१ ॥ कुगुरादिक के त्यागते बाहिर की सुध होय। अंतरंग पर द्रव्य तें भिन्न तत्व है सोय ॥ ८२ ॥ बाहिर वस्तर त्यागतें होत छठे गुण थान। कुगुरादिक बाहिर तजे कहिये सम्यक् वान् ॥ ८३ ॥ बाहर की द्र-

ढ़ता भये शंकादिक सब जाय। धर्मरत्न खोवे नहीं बोझ बड़ाई पाय ॥ ८४॥ जिते न बाहिरतें मिटे नमनक्रिया की भूल। तिते न सरधा उज्जली है है कबहु न मूल ॥८५॥ नेक बड़ाई के कहे तजे न मूरख टेक। भेष कुभेष लखे नहीं नमें धार अविवेक ॥ ८६ ॥ वह मूरख वहिरा-त्मा करे कुगुरु की पोष। कहे नमन क्रिया विषे हमें न दीखै दोष ॥ ८७ ॥ अध्यात्म शैली विषे सुने सिद्धांत न मूल। बिन समझे पक्ष गहि रहै हिये अपर बल भूल ॥ ८८ ॥ पढ़े पके भी अपढ़ हैं छते ज्ञान अज्ञान। नेक पक्षके कारणे खोवें धर्म अयान ॥ ८९ ॥ अध्यातम शैली सदा रहै अनंते काल। या बिन कैसे पाइये धर्म दि-गम्बर चाल ॥ ९० ॥ श्वेत रक्त पीतादि यह धारैं मत की टेक। जैन जैन सब गाइ हैं नाहि दिगंबर एक ॥९१॥ आगम सेवन युक्ति बल शैली परम्पराय। अनुभव चारों एक कर मत परखो यह भाय ॥९२॥ परख बिना व्यवहार में तुरतहि खोटा खाय। यातें पहले परखकर मत गहियेरे भाय ॥ ९३ ॥ जिनके हिय में पक्ष है ति-न्हें नाहिं निर्धार। फिर फिरता छूटे नहीं धूल छान

सौवार ॥ ९४ ॥ पढ़े सुने इस शतक को मन में धारे ज्ञान । होय दिगंबर पंथ को ताही के सरधान ॥९५॥ अल्पकाल में शिव लहे यामें संशय नाहिं । सुगुरु दिगंबर पंथ के इत उत भटकें नाहिं ॥ ९६ ॥ मध्य देशमें देश यह नाम दुढाहड़ कोय । जयपुर नगर सुहावनो तामें कहिये सोय ॥ ९७ ॥ तहां जैनमत की बड़ी सदा रहे परभाव । जैन जेन में है रहे भेदा भेद लखाव ॥९८॥ भेद भाव अति होत ही सुदृढ़ भई परतीत । पितामह पिता ते हमैं तजी कुलिङ्गन प्रीत ॥ ९९ ॥ गोधा जाको गोत है श्रावक कुल है जास । अध्यात्म शैली विषे नासक हैं जिनदास ॥ १०० ॥ अठारह से वानवे चैत मास तम लीन ॥ सोमवार आठैंतिथि शतक संपूरण कीन ॥ १०१ ॥

इति सुगुरु शतकम् ।

ओंनमः सिद्धेभ्यः ।

७३ प्रतिमाचालीसी ।

दोहा ॥

दुःखहरण सब सुख करण, श्रीजिनमुद्रासार । नित-

प्रति वंदे भव्यजन, नागा करें गंवार ॥१॥ प्रतिमा आगे विघ्नक्षय, मंगल होय हजूर । जैसे आंधी मेटके, घन वर्षे भरपूर ॥२॥ दर्शन चिन्ता कोटि फल, चलते कोटा कोर । कोटा कोटि कोट पथ, फल अनंत प्रभु ओर ॥३॥

चौपाई ॥

अब जो ढूंढिया करत हैं आन । प्रतिमा निन्दा-चार विधान॥ प्रथम अचेतन कृत्रिम दोय । एकेंद्री अरु आरम्भ होय ॥ ४ ॥

उत्तर दोहा ॥

तासों जनी कहत है, उत्तर चार विचार । सांच होय तो पूजियो तज झूठा हंकार ॥ ५ ॥

अचेतनका उत्तर चौपाई ॥

वाणी श्रीजिनवर की होय । पुद्गलमई अचेतन सोय । तिन के सुनते प्रगटे ज्ञान । यूं प्रतिमा लख उ-पजे ध्यान ॥ ६॥ जिनवर अमर भए शिव पाय । रही अचेतन जड़मय काय ॥ सो पूजी वन्दी सुरराय । बहु विध नाचे गाय बजाय ॥ ७ ॥

कृत्रिम का उत्तर चौपाई ॥

उत्तम स्तवन अनेक प्रकार । ढाल बीनती आदिक

सार ॥ पढ़ते सुनते पुण्य बढ़ाय । ज्यों प्रतिमा तें नि-र्मल भाय ॥ ८ ॥

एकेन्द्री का उत्तर दोहा ॥

बनस्पती कागद कलम, स्याही अग्नि सुभाय । ए-केन्द्री पुस्तक प्रगट, क्यों मानो शिरनाय ॥ ९ ॥

प्रश्नोत्तर दोहा ॥

पोथी पंचेंद्री लिखे, तातें कही मनोज्ञ । प्रतिमा पं-चेंद्री घड़े, सो क्यूं नाहीं योग्य ॥ १०॥ पोथी ज्ञानी प-ढ़त हैं, ताते उपजे बोध । पूजा वरती करत है, आ-रत रौद्र निरोध ॥ ११ ॥

आरंभ का उत्तर । गीता छन्द ॥

जिन गर्भ होत नगर बनायो न्हवनजन्म कल्याणमें तप में करी बर्षा पुहुप की बाग सरवर ज्ञान में ॥ नि-र्बाण होत शरीर दाहा इन्द्र हरष सुर में गया । यह पं-चकल्याणक भक्ति कर एक अवतारी भया ॥ १२ ॥

व्रती को आरंभ का फल । चौपाई ॥

भरत सम किती गृह व्रत धार । सेना सहित नाग असवार ॥ पूज्यो आदीश्वर जिनराय । अवधि ज्ञान

पायो सुखदाय ॥१३॥ भरत जाय कैलाश पहार। करे बह-त्तर जिन ग्रह सार ॥ तामें धरे बहत्तर विम्ब। मुक्ति भये तजके अगडिम्भ ॥ १४ ॥ श्रेणि कहो हाथी असु-वार ॥ महावीर पूजो जिनसार ॥ बांध्यो शुभतीर्थंकर गोत | आरंभ को फल प्रगट उद्योत ॥ १५ ॥

दोहा ॥

साध वन्दने जात हो, जुती पहर हमेश। राह पाप तुम को लगे, किधौं साध को लेश ॥ १६ ॥ जो पातक तुमको चढ़े, क्यों आवो हो वीर। जो मुनि वरको ल-गत है मने करे कि न धीर ॥ १७ ॥ पूजा में हिंसा स-हल, पुण्य अनंत अपार । विपक्षनिकानहिं कर सके, सागरदोष लगार ॥ १८ ॥ पैसे का टोटा जहां, बढ़ता लाख किरोर । सो व्यापार करे नहीं, सांच कहो तज थोर ॥ १९ ॥ चित्र लिखी नारी लखे, मन गदला वहु होत | मूर्ति शांत जिनेशकी, देखे ज्ञान उदोत ॥ २० ॥ यह बातें प्रगटे सुनी, ज्वाब दियो नहिं जाय | हार-मान के यूं कह्यो, हम नहिं मानें भाय || २१ ||

चौपाई ॥

नाम थापना द्रव्यरु भाव। निक्षेपे हैं चार सुभाव॥ तीनों मानत हो महाराज। थापन नहिं मानो किह काज पैंतालीसों आगम माहिं। प्रतिमा पूजा है सब थाहिं॥ सो तुम साधु सुनो सब लोय। नरभव सफल करो भ्रम खोय। जीवा अभिगम ग्रन्थ मंझार। सुरविज इन्द्र नामनेसार॥ अक्रितम प्रतिमा की बहुकरी। पूजा भक्ति विनय बहुधरी। उववाई में कथन निहार। अंबड़ संन्यासी व्रतधार॥ जिन पूजा बंदना सो करी। है कि नहीं तुम भाषो खरी॥ ज्ञातृ कथा में देखो बीर। सती द्रौपदी ने धर धीर। कृत्रिम प्रतिमा पूजा करी। महा सती में सो गुण भरी॥ २६॥ नाम उपासक दशा प्रधान। दश श्रावकने क्रिया प्रवान। परतीर्थ परदेवन रमें। निज तीरथ निजदेव सो नमें। सूत्र कृतांग माहिं विस्तार। प्रतिमा भेजी अभय कुमार। आर्द्रकुमार मीतको जान। तिस तें पायो सम्यक् ज्ञान। सूत्र भगौती माहिं विचार। जंघा चारण विद्या चार॥ अक्रितम प्रतिमा पूजाकरी॥ महामुनों ने थुतिरस भरी॥

। दोहा ।

इन्हैं आदि बहु शास्त्र हैं, तुम आगम में वीर ।
सांची के झूंठी कहो, पक्षपात तजधीर ॥ ३० ॥

। प्रतिमा मानी तिसका वचन । दोहा ।

प्रतिमा दर्शन योग्य है, दोष चढ़ावन वीर ।
दीपधूप फल फूल चरु, चन्दन अक्षत धीर ॥ ३१ ॥

। उत्तर दोहा ।

आठों आरंभके किये, गये स्वर्ग जे जाहिं ।
तिनकी कथा प्रसिद्धहै, जिन आगम के माहिं ॥३२॥

। पूजाफल । कवित्त ।

नीरके चढ़ाये भवनीर तीर पावे जीव चंदन चढ़ाये चंदसेवे दिन रात है । अक्षत सों पूजते न पूजे अक्षदुख ताको फूलन सों फूले फूल जात मैं न जात है ॥ दीजे नैवेद्य तातें लीजे निर्वेदपद दीपक चढ़ाये ज्ञान दीपक विकसात है । धूपके खेयते भूसदौर धूप जाय जैसे फल सेती मोक्ष फल अर्घ अघघात है ॥

। सवैया ।

साधु छुकीपूजातें हज़ार गुणा फल जिन जिनते ह-

आर गुणा फल पूजा सिद्ध की। सिद्ध तैं हजार गुणा फल पूजा प्रतिमा की तिहुंकाल दाता आठों नवों नि-धिसिद्ध की ॥ शांत मुद्रा देख साध अरहंत सिद्ध भये प्रतिमा ही कर्ता है पांचों पद वृद्धि की। करे न व-खान सिद्ध होनको है यही ध्यान मोक्षफल देय कौन बात स्वर्ग ऋद्धि की ॥ ३४ ॥

। कुंडली छंद ।

चूल्हा चक्की ऊखली नीर बुहारी पंच। छट्टा द्रव्य उपावना छहों कार्य अघसंच ॥ हरण इन्हों के पाप अर्थ षट्कर्म बखानं। जिन पूजा गुरु सेव पढ़त संयम तपदा-नं ॥ सब में पहिले प्रात उठत पूजा सुख मूला। कर पूजा जिनराज काज तज चक्की चूल्हा ॥ ३५ ॥

। सवैया ।

धन्य जिन भवन करे हैं सोभी धन्य बिम्ब धरे दोनों निस्तरें वह संघई कहावई। कोऊ पूजा करे आय कोऊ न्हौन देखे आय गंधोदकपाय लाय आनंद बढ़ा-वई ॥ कोई द्रव्य लावे कोई पढ़े कोई नमे ध्यावे कोई छत्र चामर सिंहासन चढ़ावई। कोई नाचे गावे वा ब-

जाते भक्ति को बढ़ावे पुण्य तीन लोक में न पूजा सम पावई ॥ ३६ ॥

। दोहा ।

तीन लोकतिहुं काल में, पूजा सम नाहिं पुन्य ।
ग्रहवासी को प्रातही, बिन पूजा घर सुन्य ॥ ३७ ॥

। अडिल्ल ।

ढूंढक मत के शास्त्र उक्त बातें कही ॥ निज मत पोषा नाहीं न पर निंदा गही । समझे सज्जन संत बसायन मूढ़सों । ज्ञान हिये में नाहि लगे हैं रूढ़सों ॥३८॥

। दोहा ।

थोरासा यह कथन है, लेहु बहुत कर मान ।
नित प्रति पूजाकीजिये, यह परभव सुखदान ॥३९॥

। चौपाई ।

दिल्ली तख्तवक्त परकाश । सत्रहसै इक्यासी मास ॥
जेठ शुक्ल जुगचंद उदोत । द्यानतप्रगट्यो प्रतिमा जोत॥

इति प्रतिमाचालीसी संपूर्ण

मूढ़ दशा सवैया

ज्ञान के लखनहारे विरले जगत् माहीं ज्ञान के लि-

खनहारे जगत् में अनेक हैं । भाषे निरपक्ष बैन सज्जन पुरुष कोई दीसत बहुत जिन्हैं वचन की टेक हैं ॥ चूकपरे रिस खात ऐसे जीव बहु भ्रात और अचूक थोरे धरे जो विवेक हैं । ज्ञाता जन थोरे मूढ़मति बहुतेरे नर जाने नाहिं ज्ञान सर कूप कैसे भेक हैं ॥ शुभम् ॥

ओं नमः सिद्धेभ्यः ॥

७४ बारहखड़ीसूरत ।

दोहा ॥

प्रथम नमूं अरहंत को. नमूं सिद्ध आचार । उपाध्याय सर्व साधुको. नमूं पंच परकार १ भजन करूं श्री आदि को अंत नाम महावीर । तीर्थंकर चौबीसको. नमूं ध्यान धर धीर । जिन ध्वनि तैं बाणी खिरी. प्रगट भई संसार नमस्कार ताको करूं । एकचित्त मनधार ३ ता बाणीके सुनत ही. बाढ़ै परमानन्द । हुई सुरत कछु कहन की. बाराखड़ी के छन्द ४ बाराखड़ी के छन्द बनाऊं. यह मेरे मन भाई । जो पुराण में जाय बखानी. सो मैंने सुन पाई । गुरुप्रसाद भव्यन की संगत. यह उपजी चतुराई । सूरत कहे बुद्धि है थोरी. श्रीजिननाम सहाई ॥

कका ॥

कका करत फिरो सदा, जामन मरण अनेक। लख चौरासी में रुलो, काज न सुधरो एक। काज न सुधरो एक दिवाने, तैं शुभ अशुभ कमाये। तेरी भूल तोह दुःख देवे बहुतेरे दुःख पाये भटकत फिरो चहूंगति भीतर, काल अनंत गमाये। सूरत सतगुरु सीख न मानी, तातैं जग भरमाये, अरे सुन मूर्ख प्राणी। धर्म्म की सारन जाणी, छाड़ सकल मिथ्यात्व। भजो श्रीजिन की वाणी,

खखा ॥

खखा खूबी मत तजो, संसारी सुख जान, यह सुख दुःख की खान है, सतगुरु कही बखान, सतगुरु कही बखान जान यह, तू मत होय अयाना। विना शीक सुख इन्द्रियन का यह, तैं मीठा कर जाना। यह सुख जान खान है दुःख की, तू क्यों भर्म भुलाना, सूरत कहे सुनोरे प्राणी, तू क्यों रहा लुभाना, अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी० ॥ गगा ॥

गगा गुरु निर्ग्रन्थ की, सद् वाणी सुख भाष। और विकार सकल तजो, यह थिरता मन राख, यह थिरता

मन राख चाख रस. जो अपना सुख चाहे. और सकल जंजाल दूर कर, ये बातें अक गाहे. पांचों इन्द्रिय बश कर राखो. कर्म मूल को दाह। सूरत चेत अचेत होय मत अवसर बीता जाहे. अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सारन जानी० ॥ घघा ॥

घघा घाट सुघाट में. नाव लगी है आय. जो अब के चेते नहीं. तो गहरे गोते खाय. गहरे गोते खाय जब कौन निकासन हारा. समय पाय मानुष गति पाई. अजहू नाहिं संभांरा. बार बार समझाऊं चेतन. मानो कहा हमारा, सूरत कही पुकार गुरुने, यों होवे निस्तारा. अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सारन जानी० ॥

नना ॥

नना नाता जगत् में. अपस्वार्थ सब कोय. आन भीड जा दिन पडे. कोई न साथी होय। कोई न साथी सगा सगाथी, जिस दिन काल सतावे. सब परिवार अपने सुख का है. तेरे काम नहीं आवे। जैसे ज्ञान ध्यान तू कर है, तैसा ही सुख पावे. सूरत समझ हो मत बौरा. फिर यह दाव न पावे अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सार

न जानी० ॥ चचा।

चचा चंचल विकल मन. तिस मन को वश आन जब लग मन बश में नहीं. काज न होय निदान। काज न होय निदान जान यह. मन नाहीं बश तेरा। पांचों इन्द्री छठा और मन. तिनका तू भया चेरा। राग द्वेष अर मोह समीपी. इने आन्हे मिल घेरा। सूरत जिस दिन मन थिर होगा. तिस दिन होय निवेरा। अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सार न जानी० ॥

। छछा ।

छछा है रस स्वाद में. रहो छहों रतिमान। छकृत रहो छाडत नहीं. समझत नाहि अज्ञान। समझत नाहि अज्ञानपाय यह. इन स्वादन में राचो। दही दूध घी तेल नमक और. मीठा खाखा माचो। आर्त्तचिंता लाग रही है. ज्ञान ध्यान को काचो। सूरत फिरो चहुं गति भटकत. सत् गुरु मिलोन साचो। अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सारन जानी० ॥ जजा।

जजा जाग सुजान नर. यह जागन की बार। जो अब के जागे नहीं। फेर न होय संभार। फेर न होय संभार

जान यह, जो अब के नहिं जागे जो जागे निरभय पद पावे, जरा मरण भय भागे। जातर फेर फिरे भव सागर, हाथ कछू नहि लागे। सूरत होय भला जब तेरा, संसारी सुख त्यागे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

झझा ॥

झझा झाड पिछोड कर, काहूं तोहि समझाय। जामें तैं बासा किया, सो तेरी नहिं काय। सो तेरी नहिं जाय संग, तुझे अकेला जाना। तैंने घर बहुतेरे कीन्हे, आवत जात भुलाना। थावर त्रस पक्षी मानुष भया, देव कहाया दाना। सूरत कहीं पाय तैं भुगती, आप नहीं पछताना। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी०॥

नना ॥

नना नरपद हैं भला, ऐसे और न कोय। जे संभालेते तिर गए, भवसागर से सोय। भवसागर से तिरे बहुतेरे, जे इस वार संभारे। तीन् काल जिन सही परीषह, कर्म चूर करडारे। आवन जान जगत् सो बीता, लोकालोक निहारे सूरत जो ऐसा सुख चाहे, तू भी चेत अवारे। अरे सुन मूर्ख प्राणी। धर्म की सारन जानी० ॥

टट्टा ॥

टट्टा टारा जिन कियो। ते बहुत रुले संसार। फिरे जगत् में भटकते, तिन को वार न पार। तिनको वार न पार कहूं वे फिरते फिरे विचारे। नर तिर्यंच नरक देवागति, चारों धाम निहारे। जामन मरण धरे बहुतेरे, सहे महा दुःख भारे। सूरत कौतुक आप कमाये, कापे जाय उवारे। अरे सुन मूर्ख प्राणी। धर्म की सार न जानी० ॥

ठठा ॥

ठठा ठिठक रहो कहा। वेग करो संभाल। छोड़ ठाठ संसार को, ज्यों टूटे जग जाल। ज्यों टूटे जगजाल बावरे, बहुर नहीं दुख पावे। सतगुरु कही मान सो शिक्षा, फिर नहिं आवे जावे। छाड़ो संग कुमति गणिकाको, जो तुम को बहकावे। सूरत संग सुमति की कीजे, शिवपुर आन दिखावे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

डड्डा ॥

डड्डा डगमग तुम तजो, अडिग होय पद साध। ढूंढता कर परमात्म की, ज्यों सुख लहै समाध। ज्यों सुख लहे समाधि बादतज, आपा खोजो भाई। सिद्ध रूप

तेरे घट भीतर कहा ढूण्ढयो जाई ॥ जड़ चैतन्य भिन्न जानो तुम मिटे कर्म दुखदाई । सूरत आप आपको साधो, ऐसे गुरु फरमाई । अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सार न जानी० ॥

। ढढा ।

ढढा ढोरी छाड़दे, इनके ढिग मत जाय । कुगुरु कुदेव कुज्ञान को, तू मत चित्त लगाय । तू मत चित्त लगाव भाव तज, कुगुरु कुदेव कुज्ञानी । यह तोको दुर्गति दिखलावें, सो दुख मूल निशानी । इनतें काज एक नहि सुधरत, कर्म भरमके दानी । सूरत तजिये प्रीति इन्हों की, सतगुरु आप बखानी । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जानी० ॥

। णणा ।

णणा रण ऐसा करो, संवर शस्त्र संभार । कर्म रूप ये अरि बड़े, तीर ताक कर मार । तीर ताक कर मार बीर तिन्हें, कर्म रूप अरिसोई । ये अनादि के हैं दुखदाई, तेरी शांति बिगोई । नारायण अरुप्रतिहर चक्री, यातैं बचा न कोई । सूरत ज्ञान सुभट जिन जागो, तिन याकी जड़ खोई । अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न

जानी० ॥ । तता ।

तता तन तेरा नहीं, तामे रहो लुभाय। माता तोड़े छिनक में, ताहि कहा पतियाय। ताहि कहा पतियाय पाय दुख, होय रहो या दासी। क्षण में मरे क्षणक में उपजे, होय जगत् में हांसी। याके संग बढ़े ममता बहु पड़े महा दुःख फांसी। सूरत भिन्नजान इस तन को या से होय उदासी। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ । थथा ।

थथा थिरपद जो चहे, यों थिरपद नहीं होय। जाके घट थिरता प्रगट, थिरपद परसे सोय। थिरपद परसे सोय होय सुख, गति चारोंसे छूटे। ज्ञान ध्यान को करहै जो मन, कर्म अरिन कोकूटे। यह जगजाल अनादि काल को, सो छिन माहि टूटे। सूरत तौ थिरपद को परसे, शिवपुर के सुख लूटे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ । ददा ।

ददा द्रव्य छहो कहे, प्रगट जगत् के मांहि। और द्रव्य सब यथ हैं, ज्ञानी मानत नाहि। ज्ञानी मानत नांहि द्रव्य है, जेधातुन के जानो। माटी भूमि शैल की शोभा

जग में प्रगट बखानो। पुद्गल जीव अधर्म धर्म अर, काल अकाश प्रमानो। सूरत इन द्रव्यन की चर्चा, ज्ञानी गिने सजानो। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जाणी०॥

। धधा ।

धधा ध्यान जगत् विषे, प्रगट कहे हैं चार। आर्त्त रौद्र धर्म शुक्ल, जिन मत कहे विचार। जिनमत कहे विचार चारये, ध्यान जगत के माहि। आर्त्त रौद्र अशुभ के करता, इनसे शुभगति नाहि। धर्म ध्यान के धारक जे नर, शुभ सुख होत सदा ही। सूरत शुक्ल ध्यान के करता, सो शिवपुर को जाही। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ । नना ।

नना नाशे मरण जन्म, नेह धरे निज माहि। नटकी कला जगत विषे, नेह धरे निज माहि। नेह धरे निज माहि जगत् में, आपा नाहि फसावे। ज्यों पानी बिच रहे कमल तरु, जल भेदन नहि पावे। शुभ और अशुभ एक से जाने, रीझ नहीं पछतावे। सूरत भिन्न लखे ऐसी विधि, कर्म नाहि ढिंग आवे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ । पपा ।

पपा प्रभु अपने लखो, पर संगत दे छोड़। पर संगत आश्रव बंधे, देय कर्म झकझोर। देय कर्म झकझोर जोर कर, फिर निकसन नहिं पावे। आश्रव बंधकी पड़ी बेड़ियां, लगे कोई न उपावे। तातैं प्रीति धरो संयम सों, हित करहै दिल खोवे। सूरत यों संवर को कीजे, कर्म निर्जरा होवे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जानी० ॥ । फफा ।

फफा फूलों ही रहे, फोकट देख न भूल। फांसी फंद प्रमादकी, कर तोड़न को शूल। कर तोड़न को शूल भूल मत, दाव भलातैं पाया। भमते भमते भवसागरमें मानुष गति में आया। याही गति में भये तीर्थंकर, केवल ज्ञान उपाया। सूरत जान बूझ मत चूके, दाव भला तैं पाया। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ बबा ॥

बबा बसन कुव्यसन हैं, इन सातन को त्याग। पांचों इन्द्रिय वश करो, शुभ कारज को लाग। शुभ कारज को लाग दिवाने, व्यसन सातये भारी। जूवा मांसमद वेश्या चोरी, और खेटक पर नारी। भला चाहे तो

त्याग इन्हें तू, ले ये वरत अवधारी। सूरत इस भवमें सुख पावे, परभव सुख अधिकारी। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ भभा ॥

भभा भटकत ही फिरो, गहो महा मिथ्यात। भेद न पायो ज्ञान को, तातैं आवत जात। तातैं आवत जात बात सुन, भेदज्ञान नहि पायो। क्रोध लोभ और मान जो माया, तातैं नेह लगायो। परमार्थ की रीति न जानी, स्वार्थ देख भुलायो। सूरत जागो भेद ज्ञान जब तब मिथ्यात मिटायो। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सार न जानी० ॥ ॥ ममा ॥

ममा मति तिनकी सही, जिन मल कीनो दूर। मत वाले मल से भरे, तिनको नाहि शहूर। तिन को नाहि शहूर दूर है, कुमती कुमत विचारैं। तिन के कुगुरु तिन्हें बहकावैं, पकरैं भवजल डारैं। पुण्य पापका भेद न जाने, जीव अनाहक मारैं। सूरत ते नर पड़ें कुसंगति, किस विधि दोष निवारैं। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सार न जानी० ॥ यया ॥

यया अजाण पणो बुरो, याते होय अकाज। जाण

पणो कछु कीजिये, आहि न आवे लाज। आहि न आवे लाज बात सुणि, कहो तेरा यहां को है। तात मात बंधु सुत का मन, तू इनके सुख मोहै। आठों याम मग्न है इनमें, यह तुम को नहिं सोहै। सूरत तज अज्ञान शिक्षा गह, जब तोहि शिव सुख हो है। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

॥ ररा ॥

ररा रचो अनादि को, रुचि विषयन की प्रीति। रस नहीं चाख्यो आत्मीक, लखी न रस की रीति। लखी न रस की रीति नीत तैं, विषयन सो सुख जानो। आत्मीक रस है सुख दाई, सो तैं नहीं पिछानो। जिन रस रीति लखी आत्म की, सो शिवपुर को राणो। सूरत तें भवि मुक्त गये हैं, जिन आत्म हित आनो। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥

॥ लला ॥

लला लिपटो ही रहे, लगो जगत् के भेक। लखो न आप स्वरूप को, लहो न शुद्ध विवेक। लहो न शुद्ध विवेक रीझ तै, पर आपा नहिं बूझा। वस्तु प्रकाशी नाहि

विरानी, तू कर्मन सो भूझा। जिन जिन आत्म शुद्ध लखो है, पर सो नाहिं अरूझा। सूरत भिन्न जो है वि-षयन सो, तिन को आत्म सूझा। अरे सुन मूर्ख प्राणी धर्म की सार न जानी० ॥ ववा ॥

ववा वह संगत बुरी, जामें होय कुभाव। वह सं-गत सेली भली, जामें सहज सुभाव।
जामें सहज स्वभाव भाव है, सोसेली मोहि प्यारी। तत्व द्रव्य की चर्चा तिनके, तजे कुचर्चा न्यारी। भ-रमभाव ते दूर रहत हैं, धर्म ध्यान के लारी। सूरत यह बांछा मेरे मन, इन मित्रन सो यारी। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सारन जानी० ॥

ससा ॥

ससा सज्जन वेभले, सुनें सुगुरु की सीख। सदा रहें सुख ध्यान में, सही जैन की टीक। सही जैन की टीक जिन्होंके, सो सज्जन मोहे भावें। आगम और अध्या-त्म बाणी, सुने सुनावें गावें। कुकथा चार विकार ज-गत की, तिन को नहीं सुहावें। सूरत वे सज्जन मोहि प्यारे, जे शिव पंथ दिखावें। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म

की सार न जानी० ॥ षषा ॥

षषा खुटक निवार के समाभाव चित लाय। आश्रव संम्बर बन्ध ही खिरे कर्म दुःख दाय। खिरे कर्म दुःखदाय जाय वहु, समाभाव चित्त लावे। होय अभ्यास तास सज्जन को, अंतर ज्ञान जगावे। सदा मग्न हूं अपने पद में, रीझ आप सुख पावे। सूरत ज्ञानवन्त गुरु भाषे, सो आत्म को ध्यावे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी० ॥ शशा ॥

शशा सोई शुद्ध है। सुगुरु सीख सुनलेत। सदा रहे संतोष में सो साधु जग हेत। सो साधु जग हेत ताहिमें सो संतोष विचारे। जो वाले हैं ते संसारी तिन को नाहि निहारे। संकलप विकलप मन के जेते, इन दुश्मन को टारे। सूरत वह साधु है निश्चय, शिवपुर वेग सिधारे। अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी०॥

। हहा ।

हहा होय कहा रहो। हो परमें दुःख पाय। होय आप वश ही रहे। होय परम सुख दाय। होय परम सुख दाय पाय पद, अनुपम अविनाशि। केवल ज्ञान

दरस हो केवल. सिद्धपुरी सुखराशि । आठों कर्म विषे है जिनके. आठों गुण परगासी । सूरत सिद्ध महां सुख पावे. काल अनंते जासी । अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सार न जानी० ॥ । लला

लला लेके परम पद लखों गये निर्वाण । लोक शिखर ऊपर चढ़े लियो सिद्ध शिवथान । लियो सिद्ध शिव थान आन लख, सोई सिद्ध कहाये । दर्शन ज्ञान चरितये तीनों. शिवपुरदें पहुंचाये । जो जी भावे सोई दरसे. आप अटल ठहराये । सूरत ऐसे सिद्ध कहे गुरु. जे पुराण में गाये । अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की सार न जानी० ॥ । क्षक्षा ।

क्षक्षा लक्ष्मी सो वरे । लक्षण गुण के भेव । लहै सिद्ध गुण अष्ट जो. बढ़े सुलक्षण टेव । बढे सुलक्षण टेव भेव लख. सिद्ध रूप को ध्यावे। अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधन सीस निवावे। जिनमत धर्म देव गुरु चारों. इन की दृढ़ता लावे । सूरत यह परतीत धरे मन. सोसम्यक् फलपावे । अरे सुन मूर्ख प्राणी. धर्म की बात न जानी० ॥ ॥ दोहा ॥

सो सम्यक् पद को लहे. करे गुरु वचन प्रतीत । देव धर्म गुरु ज्ञान को. परख गहे निज रीत । बाराखड़ी हितसों कही. गुनियन की नहीं रीस । दोहे सब चालीस हैं. छन्द कहे पैंतीस ॥

इति श्रीसूरत की बारहखड़ी संपूर्ण ।

७५ सोलह कारणभावना ॥

॥ चौपई ॥

आठ दोष मद आठ मलीन, छै अनायतन शठता तीन । ये पच्चीस मल बर्जित होय, दर्शन शुद्धि कहावे सोय ॥ १ ॥ रत्नत्रय धारी मुनिराय, दर्शन ज्ञान चरित्त समुदाय । इन की विनय विषय परवीन, दुतिय भावना सोअनलीन ॥ २ ॥ शीलभार धारे सनचेत, सह स्त्र अठारह अंग उमेल । अतिचार नहीं लागे जहां, तृतीय भावना कहिये तहां ॥ ३ ॥ आगम कथित अर्थ अवधार यथाशक्ति निज बुद्धि अनुसार । करै निरन्तर ज्ञान अभ्यास, चतुर्थ भावना कहिये तास ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

धर्म धर्म के फल विषे. वरतै प्रीति विशेष ।

यही भावना पंचमी, लिखी जिनागम देख ५

॥ चौपाई ॥

औषधि अभय ज्ञान आहार, महादान यह चार प्रकार। शक्ति समान सदा निर्वहै, छठी भावना धारक वहै ॥ ६ ॥ अनशन आदि भुक्ति दातार, उत्तम तप बारह परकार। बल अनुसार करे जो कोय। सो सातमी भावना होय ॥ ७ ॥ यति वर्ग को कारण पाय विघ्न होत जो करे सहाय। साधुसमाधि कहावै सोय, यही भावना अष्टम होय ॥ ८ ॥ दशविधि साधु जिनागम कहे, पथ पीड़ित रोगादिक गहे। तिनकी जो सेवा सत्कार, यही भावना नौमी सार ॥ ९ ॥ परमपूज्य आत्म अरहन्त, अतुल अनन्त चतुष्टय वन्त, तिन की स्तुति नित पूजा भाव, दशम भावना भव जल नाव १० जिनवर कथित अर्थ अवधार, रचना करे अनेक प्रकार आचारज की भक्ति विधान, एकादशम भावना जान ॥ ११ ॥ विद्या दायक विद्या लीन। गुण गरिष्ठ पाठक परवीन। तिनके चरण सदा चित रहे, बहुश्रुति भक्ति बारमी यहै ॥ १२ ॥ भगवत् भाषत अर्थ अनूप, गणधर

ग्रंथित ग्रंथ स्वरूप । तहां भक्ति बरतै अमलान, प्रवच न भक्ति तेरमी जान ॥ १३ ॥ षट् आवश्यक क्रिया विधान, तिनकी कबहूं करै न हान । सावधान बरतै थिर चित, सो चौदहमी परम पवित ॥ १४ ॥ कर जप तप पूजा व्रत भाव, प्रगट करै जिन धर्म प्रभाव । सोई मार्ग पर भावना, यह पंचदशमो भावना ॥ १५ ॥ चार प्रकार संघ सौं प्रीत । राखै गाय वच्छ की रीत । यही सोलहमी सब सुख दाय । प्रवचन वात्सल्य अभिधाय ॥१६॥

॥ दोहा ॥

सोलह कारण भावना, परम पुण्यको खेत ।
भिन्न भिन्न अरु सोलहों, तिर्थंकर पद देत।
बंध प्रकृति जिनमत विषे, कही एकसौ वीस ।
सौ सतरह ११७ मिथ्यात्वमें, बांधत है निशदीस ।
तीर्थंकर आहारदुक, तीन प्रकृति ये जान ।
इनको बंध मिथ्यात्व में, कहो नहीं भगवान् ।
तातैं तीर्थंकर प्रकृति, तीनों समकितमाहिं।
सोलह कारण सों बंधे, सब को निश्चय नाहिं ।

॥ सोरठा ॥

पूज्यपाद मुनिराय, श्री सर्वार्थ सिद्ध में । कह्यो कथनइसन्याय, देख लीजिये सुबुद्धजन ।

७६ णमोकार मंत्रमाहात्म॥

श्री गुरु शिक्षा देत हैं सुन प्राणीरे। सुमर मंत्र नवकार सीख सुन प्राणीरे॥ लोकोत्तम मंगल महा सुन प्राणीरे। असरन जन आधार सीख सुन प्राणीरे ॥१॥ प्राकृतरूप अनादि है सुन प्राणीरे। मित अक्षर पैंतीस सीख सुन प्राणीरे। पापजाय सब जापते सुन प्राणीरे। भाषो गणधर ईश सीख सुन प्राणीरे ॥ २ ॥ मन पवित्रकर मंत्र को सुन प्राणीरे । सुमरों शंका छोर सुन प्राणीरे ॥ वांछतवर पावे सही सुन प्राणीरे । शीलवंत नरनारि सीख सुन प्राणीरे ॥ ३ ॥ विषधर बाघन भय करें सुन प्राणीरे । विनसें विघन अनेक सीख सुन प्राणीरे ॥ व्याधि विषम व्यंतर भजें सुन प्राणीरे। विपत न व्यापे एक सीख सुन प्राणीरे ॥ ४ ॥ कपिको शिखर संमेद ये सुन प्राणीरे। मंत्र दियो मुनि राज सीख सुन प्राणीरे॥ होय अमर नर शिव बसो

सुन प्राणीरे । धर चौथी परयाय सीख सुन प्राणीरे ५ कहो पद्मरुचि सेठ ने सुन प्राणीरे । सुनो बैले के जीव सीख सुन प्राणीरे ॥ नरसुर के सुख भुञ्ज के सुन प्राणी रे । भयो राव सुग्रीव सीख सुन प्राणीर ॥ ६ ॥ दीनो मंत्र सुलोचना सुन प्राणीरे । विंधश्री को जोय सीख सुन प्राणीरे ॥ गंगादेवी अवतरी सुन प्राणीरे । सत्य वती थी सोय सीख सुन प्राणीरे ॥ ७ ॥ चारुदत्त ये व निक ने सुन प्राणीरे । पायो कूप मंझार सीख सुन प्राणीरे ॥ परवत ऊपर छागने सुन प्राणीर । भयो सुगम सुरसार सीख सुन प्राणीर ॥ ८ ॥ नाग नागनी जलत हैं सुन प्राणीर । देखो पार्श्व जिनेन्द्र सीख सुन प्राणीरे ॥ मंत्र देत तब ही भये सुन प्राणीरे । पद्मावती धरणेन्द्र सीख सुन प्राणीरे ॥ ९ ॥ चेले में हथनी फंसी सुन प्राणीरे। खगकीनो उपकार सीख सुन प्राणीर भव लेके सीता भई सुन प्राणीरे। परम सती संसार सीख सुन प्राणीरे ॥१०॥ जल मांगे सूली चढ़ो सुन प्राणीरे चोर कण्ठ गत प्राण सीख सुन प्राणीरे । लहो सुरग सुख थान । सीख सुन प्राणीरे ॥ ११ ॥ चंपापुर में ग्वा-

लिया सुन प्राणीरे। पीबे मन्त्र महान सीख सुन प्राणीरे॥ सेठ सुदर्शन अवतरो सुन प्राणीरे। पहले भव निरवाण सीखसुन प्राणीरे॥ १२ ॥ मंत्र महातम की कथा सुन प्राणीरे। नाम सूचना यह सीख सुन प्राणीरे॥ श्री पुण्याश्रव ग्रन्थ में सुन प्राणीरे। व्योरो सो सुन लेय सीख सुन प्राणीरे॥ १३ ॥ सात व्यसन सेवत हतो सुन प्राणीरे। अधम अंजना चोर सीख सुन प्राणीरे॥ सरधा करते मंत्र की सुन प्राणीरे। सीभी विद्या जोर सीख सुन प्राणीरे॥ १४॥ जीवक सेठ सम्बोधियो सुन प्राणीरे। पापाचारी स्वान सीख सुन प्राणीरे॥ मंत्र प्रतापे पाइयो सुन प्राणीरे। सुन्दर स्वर्ग विमान सीख सुन प्राणीरे॥ १५॥ आगे सीझे सीझ हैं सुन प्राणीरे। अब सीझें निरधार सीख सुन प्राणीरे॥ तिनके नाम वखानते सुन प्राणीरे। कोई न पावे पार सीख सुन प्राणीरे॥ १६॥ बैठत चलते सोवते सुन प्राणीरे। आदि अन्त लो धीर सीख सुन प्राणीरे॥ इस अपराजित मंत्र को सुन प्राणीरे। मति विसरो हो बीर सीख सुन प्राणीरे॥१७॥ सकल लोक

सब काल में सुन प्राणीरे। परमागम में सार सीख सुन प्राणीरे॥ भूधर कबहुं न भूलिये सुन प्राणीरे। मंत्र राज मन धार सीख सुन प्राणीरे॥ १८॥ इति।

[७७] शील महात्म ॥

जिनराज देव कीजिये मुझ दीन पर करुना। भवि वृन्द को अब दीजिये इस शील का शरना ॥ टेक ॥ शील की धारा में जो स्नान करे है। मल कर्म को सो धोय के शिवनार वरे है॥ अलराज सो वेताल व्याल काल डरे है। उपवर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरे है ॥ १ ॥ तप दान ध्यान जाप जपन जोग आचारा। इस शील से सब धर्म के मुंह का है उजारा॥ शिवपंथ ग्रंथ मंथ के निर्ग्रंथ निकारा। विन शील कौन कर सके संसार से पारा॥ २॥ इस शीलसे निर्वान नगरकी है अवादी। त्रेसठ शलाका कौन ये ही शील सवादी॥ सब पूज्य के पदवी में है परधान ये गादी॥ अठरा,सहस्र भेद भने वेद अवादी॥ ३॥ इस शीलसे सीता को हुआ आग से पानी। दुरद्वार खुला चलनि में भर कूप सौं

पानी। नृप ताप टरा शील से रानी दिया पानी। गंगा में ग्राहसों बची इस शील से रानी ॥ ४ ॥ इस शील ही से सांप सुमन माल हुआ है। दुख अंजना का शील से उद्धार हुआ है॥ यह सिन्धु में श्रीपालको आधार हुआ है। वम्राका परम शील ही से यार हुआ है ॥ ५॥ द्रौपदि का हुआ शील से अम्बर का अमारा। जाधातु दीप कृष्णने तब कष्ट निवारा ॥ सब चन्दना सती की व्यथा शीलने टारा। इस शील से ही शक्ति विशल्याने निकारा ॥ ६ ॥ वह कोट शिला शील से लक्ष्मण ने उठाई। इस शील से ही नाग नथा कृष्ण कन्हाई ॥ इस शील ने श्रीपाल जी की कोढ़ मिटाई। अरु रैन मंजूषा को लिया शील बचाई ॥ ७ ॥ इस शील से रनपाल कुंअर की कटी बेरी। इस शील से विष सेठ के नन्दन की निवेरी॥ शूली से सिंह पीठ हुआ सिंह ही सेरी। इस शील से करमाल सुमनमाल गलेरी ॥ ८ ॥ सामन्त भद्रजी ने अहो शील सम्हारा। शिव पिंडते जिन चन्द का प्रति बिम्ब निकारा॥ मुनि मानतुंग जी ने यही शील सुधारा। तब आनके

चक्रेश्वरी सब आत सम्हारा ॥ ९ ॥ अकलंक देवजी ने इसी शील से भाई। तारा का हरा मान विजय बौद्ध से पाई ॥ गुरु कुन्द कुन्दजीने इसी शीलसे जाई। गिर नार पे पाषाण की देवी को बुलाई ॥ १० ॥ इत्यादि इसी शील की महिमा है घनेरी। विस्तार के कहने में बड़ी होयगी देरी। पल एक में सब कष्ट को यह नष्ट करेरी। इस ही से मिले रिद्धि सिद्धि वृद्धि सवेरी ॥११॥ बिन शील खता खाते हैं सब कांछके ढीले। इस शील बिना तंत्र, मंत्र, जंत्र, ही कीले॥ सब देव करें सेव इसी शील के हीले। इस शील ही से चाहे तो निर्वानपदीले ॥ १२ ॥ सम्यक्त्व सहित शील को पाले हैं जो अन्दर सो शील धर्म होय है कल्याण का मन्दिर॥ इससे हुये भवपार हैं कुल कौल और वन्दर। इस शील की महिमा न सकै भाष पुरन्दर ॥ १३ ॥ जिस शील के कहने में थका सहस वदन है। जिस शील से भय पाय भगा क्रूर मदन है ॥ सो शील ही भवि वृन्द को कल्याण प्रदन है। दृश पैंड ही इस पैंड से निर्वान सदन है ॥ १४ ॥

इति शील माहात्म ॥

७८ छहढाला ॥

॥ सोरठा छन्द ॥

तीन भुवन में सार, वीतराग विज्ञानता।
शिव सरूप शिवकार, नमों त्रियोग सम्हारके ॥१॥

॥ चौपाई छन्द १५ मात्रा ॥

जो त्रिभुवन में जीव अनन्त । सुख चाहैं दुःख से भयवन्त ॥ यासे दुःखहारी सुखकार । कहैं शीख गुरु करुणाधार ॥ २ ॥ ताहि सुनो भवि मन थिरआन । जो चाहौ अपना कल्यान । मोह महामद पियो अनादि। भूल आप को भ्रमते वादि ॥ ३ ॥ तास भ्रमण की है बहु कथा । पै कुछ कहूं कही मुनि यथा ॥ काल अनन्त निगोद मझार । बीतो एकेंद्री तन धार ॥ ४ ॥ एक स्वास में अठदश वार । जन्मो मरो भरो दुःखभार ॥ निकस भूमि जल पावक भयो । पवन प्रत्येक वनस्पतिथयो ॥ ५ ॥ दुर्लभ लहिये चिन्ता मणी। त्यों पर्याय लई त्रस तनी ॥ लट पपीलिअलि आदि शरीर । धर धर मरो सहीबहुपीर ॥ ६ ॥ कबहूं पंचेन्द्रिय पशु भयो।-

मन विन निपट अज्ञानी थयो ॥ सिंहादिक सैनी ह्वै क्रूर । निवल पशू हतखाये भूर ॥ ७ ॥ कबहूं आप भयो वलहीन । सवलन कर खायो अतिदीन ॥ छेदन भेदन भूख पियास । भार वहन हिमतापन त्रास ॥ ८ ॥ वध वन्धन आदिक दुःख घने । कोटि जीभ से जांय न भने ॥ अति संक्लेश भाव से मरो । घोर श्वभ्रसागर में परो ॥ ९ ॥ तहां भूमि परसत दुःख इसो । विच्छू सहस्र डसें ना तिसो ॥ तहां राधि श्रोणित वाहिनी । कृमि कुल कलित देहदाहनी ॥ १० ॥ सेंम्हल तरु युत दल असिपत्र । असिज्यों देह विदारें तत्र ॥ मेरु समान लोह गलजाय । ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ ११ ॥ तिल तिल करें देह के खंड । असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचण्ड ॥ सिंधु नीर से प्यास न जाय । तोपन एक न बूंद लहाय ॥१२॥ तीन लोक का नाज जुखाय । मिटे न भूख कणा न लहाय ॥ ये दुःख बहु सागर लों सहे । कर्म योग से नरगति लहे ॥ १३ ॥ जननी उदर वसो नवमास । अङ्ग सकुचते पायो त्रास ॥ निकसत ये दुःख पाये घोर । तिनका कहत न आवे छोर ॥ १४ ॥ वालकपन में ज्ञान

न लह्यो । तरुण समय तरुणी रत रह्यो ॥ अर्द्ध मृतक सम बूढ़ापनो । कैसे रूप लखे आपनो ॥ १५ ॥ कभी अकाम निर्जरा करे । भवनत्रक में सुर तन धरे ॥ वि-षय चाह दावानल दह्यो । मरत विलाप करत दुःख सह्यो ॥ १६ ॥ जो विमान वासी हू थाय । सम्यग्दर्शन विन दुःख पाय ॥ तहं ते चय थावर तन धरे । यों परिवर्तन पूरो करे ॥ १७ ॥

॥ द्वितीय ढाल पद्धड़ी छन्द १६ मात्रा ॥

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञान चर्ण । वश भ्रमत भरत दुःख जन्म मर्ण ॥ यातें इन को तजिये सुजान । सुनि तिन संक्षेप कहूं बखान ॥ १ ॥ जीवादि प्रयोजन भूत तत्व । श्रद्धे तिन माहि विपर्ययत्व ॥ चेतन को है उपयोग रूप । बिन मूर्ति चिन्मूर्ति अनूप ॥ २ ॥ पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल । इन से न्यारी है जीव चाल ॥ ताको न जान विपरीति मान । कर करे देह में निज पिछा-न ॥ ३ ॥ मैं सुखी दुःखी मैं रंक राव । मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥ मेरे सुत त्रिय मैं सबल दीन । वेरूप सुभग मूर्ख प्रवीण ॥ ४ ॥ तन उपजत अपनी उपज

जान । तन नशत आपको नाशमान ॥ रागादिक ये दुःख प्रगट देन । तिनही को सेवत गिनत चैन ॥ ५ ॥ शुभ अशुभ बन्धके फल मझार । रति अरति करी नि-जपद विसार ॥ आत्महित हेतु विराग ज्ञान । ते लखे आपको कष्ट दान ॥ ६ ॥ रोको न चाह निज शक्ति खोय । शिवरूप निराकुलता न जोय ॥ याही प्रतीति युत कुछक ज्ञान । सो दुःख दाई अज्ञान जान ॥ ७ ॥ इन युत विषयों कीजो प्रवृत्ति । ताको जानो मिथ्या चरित्र ॥ यों मिथ्यात्वादि निसर्ग येह । अबजो ग्रहीत सुनिये सुतेह ॥ ८ ॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव । पोषैं चिर दर्शन मोह एव ॥ अन्तर रागादिक धरैं जेह । बा-हर धन अंबर से सनेह ॥ ९ ॥ धारैं कुलिंग लहि म-हत भाव । ते कुगुरु जन्म जल उपलनाव ॥ जो राग-द्वेष मलकर मलीन । वनिता गदादियुत चिन्ह चीन्ह ॥ १० ॥ ते हैं कुदेव तिनकी जो सेव । शठ करत न तिन भव भ्रमण छेव ॥ रागादि भाव हिन्सा समेत । दर्वितत्रसथावर मरण खेत ॥ ११ ॥ जो क्रियां तिन्हें जानो कुधर्म । तिन श्रद्धहि जीव लहे अशर्म ॥ याको

ग्रहीत्व मिथ्यात्व जान। अब सुन ग्रहीत जो है अ-ज्ञान ॥ १२ ॥ एकान्त वाददूषित समस्त। विषयादिक पोषक अप्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतका अभ्यास। सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥ आतम अनातमके ज्ञान हीन। जो जो करनी तन करन छीन ॥ १४ ॥ ते सब मिथ्या चारित्र त्याग। अब आतम के हित पन्थ लाग॥ जगजाल भ्रमण को देय त्याग। अब दौलत निज आ-तमसुपाग ॥ १५ ॥

तृतीय ढाल नरेन्द्रछन्द २८ मात्रा

आतम का हित है सुख सो सुख अकुलता विन क-हिये। अकुलिता शिव माहिं न यासे शिव मग लागो चहिये ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण शिव मग सो दुविध विचारो। जो सत्यारथरूप सो निश्चय कारण सो व्यव-हारो १ परद्रव्योंसे भिन्न आप में रुचि सम्यक्त्व भला है। आप रूपको जानपनो सो सम्यग्ज्ञान कला है॥ आपरूप में लीन रहे थिर सम्यक् चारित्र सोई। अब व्यवहार मोक्षमग सुनिये हेतु नियत को होई॥ २॥ जीव अजीव तत्व अरु आस्रव बन्धरु संवर जानो। नि-र्जर मोक्ष कहे जिन तिन को ज्यों का त्यों श्रद्धाणो॥

है सोई समकित व्यवहारी अब इन रूप बखानो। तिन को सुनि सामान्य विशेषः दृढ़ः प्रतीति उर आनो॥३॥ बहिरात्म अन्तर आत्म परमात्म जीव त्रिधा है। देह जीव का एक गिने बहिरात्म तत्त्व मुधा है॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविधि के अन्तर आत्मज्ञानी॥ द्विविध संग बिन शुध उपयोगी मुनि उत्तम निज ध्यानी॥४॥ मध्यम अन्तर आत्म हैं जो देशव्रती आगारी। जघन्य अव्रत सम्यग्दृष्टी तीनों शिव मगचारी॥ सकल निकल परमात्म दोविधि तिन में घाति निवारी। श्रीअर्हन्त सकल परमात्म लोकालोक निहारी॥५॥ ज्ञान शरीरी त्रिविधि कर्म फल वर्जित सिद्ध महन्ता। सोहैं निकल अमल परमात्म भोगें शर्म अनन्ता॥ बहिरात्मता हेय जान तज अन्तर्आत्म हूजे। परमात्मको ध्याय निरन्तर जो नित आनन्द पूजे॥६॥ चेतनता बिनसो अजीव है पंच भेद ताके हैं॥पुद्गल पंचवरण रसगन्ध दो फरस वसुः जाके हैं॥ जिय पुद्गल को चलन सहाई धर्म द्रव्य अनरूपी। तिष्ठत होइ अधर्म सहाई जिन बिन मूर्ति निरूपी॥७॥ सकल द्रव्य को वास जास में सो आ-

काण पिछानो । नियत वर्त्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमाणो ॥ यों अजीव अब आस्रव सुनिये मन वच काय त्रियोगा ॥ मिथ्या अव्रत अरु कषाय परमाद सहित उपयोगा ॥ ८ ॥ ये ही आत्म के दुःख कारण या से इन को तजिये ॥ जीव प्रदेश बंधें विधि से सो वन्ध कभी ना सजिये ॥ शम दम से जो कर्म न आवें सो संवर आदरिये । तपबल विधि सो करत निर्जरा ताहि सदा आचरिये ॥९॥ सकल कर्म से रहित अवस्था सो शिव थिर सुखकारी । इस विधि जो श्रद्धा तत्वों की सो समकितव्यवहारी ॥ देव जिनेन्द्र गुरु परिग्रह विन धर्म दयायुत सारो । बहुमान समिकित को कारण अष्ट अङ्ग युत धारो ॥ १० ॥ वसु मदटार त्रिटार मूढ़ता षट अनायतन त्यागो । शंकादिक वसु दोष बिना संवेगादिक चित पागो ॥ अष्ट अंग अरु दोष पचीसी अब संक्षेपे कहिये । बिन जाने से दोष गुणों को कैसे तजिये गहिये ॥ ११ ॥ जिन वच में शंका न धार वृषभव सुख वांछा भाने । मुनि तन देख मलिन न घिणावे तत्वकुतत्व पिछाने ॥ निज गुण अरुपर औगुण ढांके वा

निज धर्म बढ़ावे। कामादिक कर वृषते डिगते निज पर को सुदृढ़ावे ॥ १२ ॥ धर्मी से गौ वच्छ प्रीति सम-कर जिन धर्म दिपावे। इन गुण से विपरीति दोष वसु तिनको सतत खिपावे ॥ पिता भूप वा मातुल नृप जो होय न तो मद ठाने। मदन रूप को मदन ज्ञानको धनबल को मद भाने ॥ १३ ॥ तप को मद न मदन प्रभुता को करे न सो निज जाने। मत धारो ये दोष वसुः विधि सम किल कोमलठाने ॥ कुगुरु कुदेव कुवृष सेवक की नहीं प्रशंस उचरे है। जिन मुनि जिन श्रुति विन कुगुरादिक तिन्हें न नवन करे है ॥ १४ ॥ दोष रहित गुण सहित सुधी जो सम्यग्दर्श सजे हैं। चारित्र मोहवश लेश न संयम पै सुरनाथ जजे हैं ॥ गेही परि-ग्रह में न रचें ज्यों जल में भिन्न कमल है। नगर नारि को प्यार यथा कादों में हेम अमल है ॥ १५ ॥ प्रथम नर्क विन षट् भू ज्योतिष वान भवन सबनारी। थावर बिकलत्रय पशु में नहिं उपजत समकित धारी ॥ तीन लोक तिहुंकाल माहिं नहिं दर्शन सो सुखकारी। सकल धर्म को मूल यही इस बिन करणी दुःखकारी ॥ १६ ॥

मोक्ष महल की प्रथम सिढ़ी है याबिन ज्ञान चरित्रा। सम्यकता न लहै सो दर्शन धारो भव्य पवित्रा॥ दौल समझ सुन चेत सयाने काल वृथा मत खोवे। यह नर भव फिर मिलन कठिन है जो सम्यक्त्व न होवे ॥१७॥

चतुर्थढाल (दोहा)

सम्यक श्रद्धा धार पुन, सेवो सम्यग्ज्ञान।
स्वपरअर्थ बहु धर्म युत, जो प्रगटावनभान ॥१॥

॥ रोलाछन्द २४ मात्रा ॥

सम्यक् साथे ज्ञान होय पै भिन्न राधो। लक्षण श्रद्धा जान दुहू में भेद अबाधो॥ सम्यक कारण जान ज्ञान कार्य है सोई। युग्पत होते भी प्रकाश दीपक से होई ॥ २ ॥ तासु भेद प्रत्यक्ष परोक्ष दोय तिन माहीं। मति श्रुति दोय परोक्ष अक्ष मन से उपजाहीं॥ अवधि ज्ञानमन पर्यय दो हैं देश प्रत्यक्षा। द्रव्य क्षेत्र परिमाण लिये जाने जियस्वक्षा॥ २ ॥ सकल द्रव्यके गुण अनन्त पर्याय अनन्ता। जाने एकै काल प्रगट केवल भगवन्ता॥ ज्ञान समान न आन जगति में सुख का कारण। यह परमामृत जन्म जरा मृत्यु रोग निवारण ॥ ३ ॥ कोटि

जन्मतय तपे ज्ञान विन कर्म न झरते। ज्ञानी के दण में त्रिगुप्ति से सहजहि टरते॥ मुनि व्रतधार अनन्तवार ग्रीवक उपजायो। पैनिज आत्म ज्ञान बिना सुख लेश न पायो ॥ ४ ॥ ताते जिनवर कथित तत्व अभ्यास करीजे। संशय विभ्रम मोह त्याग आपा लख लीजे॥ यह मानुष पर्याय सुकुल सुनवो जिन वाणी। यह विधि गेयन मिले सुमणि ज्यों उदधि समानी ॥ ५ ॥ धन समाज गजवाजि राजतो काज न आवे। ज्ञान आप को रूप भये फिर अचल रहावे। तास ज्ञान को कारण स्वपर विवेक बखानो। कोटि उपाय बनाय भव्य ताको उर आनो ॥ ६ ॥ जो पूर्व शिव गये जात अब आगे जैहैं। सो सब महिमा ज्ञान तनी मुनिनाथ कहैं हैं॥ विषय चाह दवदाह जगत जन अरण्य दझावे। तास उपाय न आनज्ञान घन घान बुझावे ॥ ७॥ पुण्य पाप फल मांहि हर्षि बिलखो मत भाई। यह पुद्गल पर्याय उपजि विन से फिर थाई॥ लाख बात की बात यही निश्चल उर लावो। छांड़ि सकल जगधन्ध फन्द नित आतमध्यावो ॥ ८ ॥ सम्यक ज्ञानी होय

बहर दृढ़ चारित्र लीजे । एक देश अरु सर्वदेश तसु भेद कहीजे ॥ त्रस हिन्साको त्याग वृथा थावरन सं-हारे । परबधकार कठोर निंद्यनहिं बयन उचारे ॥९॥ जल मृतिका विन और नहीं कुछ गहै अदत्ता । निज वनिता बिन और नारि से रहै विरक्ता ॥ अपनी शक्ति बिचार परिग्रह थोड़ा राखे । दश दिश गमन प्रमाण ठानत सुसीमन नाखे ॥ १० ॥ ताहू में फिर ग्राम गली गृहबाग बाजारा॥ गमना गमन प्रमाण ठान अन्य सकल निवारा । काहू की धनहानि किसी जय हारन चिंते ॥ देय न सो उपदेश होय अघबणिज की चीते ॥ ११ ॥ कर प्रमाद जलभूमि व्रथा थावर नवि-राधे । असि धनुहल हिंसोपकरण नहीं देय शलाधे ॥ राग द्वेष कतार कथा कबहूं न सुनीजे । और हू अनर्थ दंड हेतु अघ तिनहिं न कीजे ॥ १२ ॥ घर उर सम-ता भाव सदा सामायिक करिये । परब चतुष्टय मांहि पाप तज प्रोषध धरिये ॥ भोग और उपभोग नेमकर ममत्व निवारे । मुनि को भोजन देय फेर निज करे अहारे ॥ १३ ॥

बारह व्रत के अतीचार पन पन न लगावे। मरण समय संन्यास धार तसु दोष नशावे॥ यों श्रावक व्रत-पाल स्वर्ग सोलम उपजावे। तहं सेचय नर जन्म पाय मुनि हो शिव पावे ॥ १४ ॥

पंचम ढाल (मनहरण छन्द)

मुनि सकलव्रती बड़भागी। भव भोगनसे वैरागी। वैराग्य उपावन माई। चिंते अनुप्रेक्षा भाई ॥ १॥ तिन चिंतत शम सुख जागे। जिमि ज्वलन पवन के लागे॥ यौवन धन गोधन नारी। हैं जग जन आज्ञाकारी २॥ इन्द्रिय सुभोग छण थाई। सुर धनु चपला चपलाई॥ सुर असुर खगादिक जेते। मृग ज्यों हरि कालदलेते ॥ ३॥ मणि मन्त्र यन्त्र बहु होई। मरते न बचावे कोई॥ चहुंगति दुःख जीव भरे हैं। परिवर्तन पंच करे हैं॥ ४॥ सब विधि संसार असारा। तामें सुख नाहिं लगारा। शुभ अशुभ कर्म फल जेते। भोगे जिय एकही तेते ॥५॥ सुत दारा होय न सीरी। स्वार्थ के हैं सब मीरी॥ जल पय ज्यों जियतन मेला। पै भिन्न २ नहीं भेला ॥६॥ जो प्रगट जुदे धनधामा। क्यों ही इकमिल

शुतरामा ॥ पल रुधिर राधमलथैली। कीकर वसादि से मैली ॥ ७ ॥ नवद्वार बहैं घृणाकारी । इस देह करी किम यारी ॥ जो योगनकी चलताई । तातें होइ आस्रवभाई ॥ ८ ॥ आस्रव दुखकार घनेरे । बुधिवन्तहि तिनहि निवेरे ॥ जिन पुण्य पाप नहीं कीना। आतम अनुभव चित दीना ॥ ९ ॥ तिनही विधि आवंत रोके। संवर लहि सुख अवलोके ॥ निज काल पाय विधि झरनो । तातें निज कार्य न सरनो ॥ १० ॥ तपकर जो कर्म नशावे । सोई शिव सुखवर पावे ॥ किनहू न करो न धरेको । षट द्रव्य मई न धरेको ॥ ११ ॥ सो लोकमाहिं बिन समता । दुःख सहै जीव नित भ्रमता ॥ अन्तम ग्रीवक लोंकी हद । पायो अनन्त विरियापद ॥ १२ ॥ पर सम्यग्ज्ञान न लाधो । दुर्लभ निज में मुनि साधो ये भाव मोहसे न्यारे । दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ॥ १३ ॥ सो धर्म जवे जियधारे। तबही सुख अचल निहारे ॥ सो धर्मसुनिन कर धारिये। तिनकी करतूति उचरिये ॥ १४ ॥ ताको सुनिये भविप्राणी । अपनी अनुभूति पिछानी ॥ जबही यों आत्मजाने । तबही निज शिव सुखधाने ॥ १५ ॥ षष्टमढाल (हरिगीता छन्द)

षटकाय जीवन हनन से भव विधि द्रव्य हिंसाटरी। रागादि भाव निवारते हिंसा जु भाव न अवतरी ॥ जिनके न लेश मृषा न जल तृणहू विना दीयो गहैं। अठ दश सहस्र विधि शीलधर चित ब्रह्म में नितरत रहैं ॥ १ ॥ अन्तर्चतुर्दश भेद बाहर संग दशधातें टलें। प्रमाद तज चउकर महीलख समित ईर्यासे चलें ॥ जग सुहित कर सब अहितहर श्रुत सुखद सब संशय हरै। भ्रमरोग हर जिनके वचन मुखचन्द्र से अमृत झरै ॥२॥ छालीस दोष विनाश कुल श्रावक तने घर अशन को। लें तप बढ़ावन हेत नहिं तन पोषते तज रसन को। शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखके गहैं लखके धरैं। निर्जंतु थान विलोक तन मल मुत्र श्लेष्मा परिहरैं ॥ ३ ॥ सम्यक् प्रकार निरोध मन वच काय आतम ध्यावते। तिन सुथिर मुद्रा देख मृगगण उपलखाज खुजावते ॥ रस रूप गंध तथा परस अरु शब्द अशुभ सुहावने। तिन में न राग विरोध पंचेन्द्रिय जयनपद पावने ॥ ४ ॥ समता सम्हारें स्तुति उचारैं वन्दना जिन देव को। नित करैं श्रुति रति करैं प्रतिक्रम तजें तन अह मेवको। जिनके न न्हौन न दन्त धोवन लेश अम्बर

आवरण। भूमाहिं पिछली रैनि में कुछ शयन एकासन करन ॥ ५ ॥ इक बार लेत आहार दिनमें खड़े लघु निज पान में। कच लुञ्च करत न डरत परिषह से लगे निजध्यान में ॥ अरि मित्र महल मसान कञ्चन काठ निन्दन थुतिकरन। अर्घावतारण असि प्रहारण में सदा समता धरन ॥ ६ ॥ तप तपें द्वादश धरें वृष दश रत्न त्रय सेवें सदा। मुनि साथ में वा एक विचरें चहैं ना भव सुख कदा ॥ यो है सकल संयम चरित सुन यह स्वरूपा चरण अब। जिस होते प्रगटे आपनी निधि मिटे परकी प्रवृत्ति सब ॥ ७ ॥ जिन परम पैनी सुबुधि छैनी डार अन्तर भेदिया। वरणादि अरु रागादि से निज भावको न्यारा किया। निजमाहिं निज के हेत निजकर आपको आपे गह्यो। गुण गुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मझार कुछ भेद न रह्यो ॥ ८ ॥ जहां ध्यान ध्याता ध्येय को न विकल्प वच भेद न जहां। चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता चेतना किरिया तहां ॥ तीनों अभिन्न अ-खिन्न शुध उपयोग की निश्चलदशा। प्रगटी जहां दृग ज्ञान व्रत ये तीन धा एकै लशा ॥ ९ ॥ प्रमाण नयनि-

ज्ञेय को न उद्योत अनुभव में दिपै। दृगज्ञान सुख सुख बल यमसदा नहिं अन्यभाव जु सो विषै। मैं साध्य साधक मैं अबाधक कर्म अरु तसुफलनतें। चित पिंड अंड अखंड सुगुण करंड च्युत पुन कलनतें ॥ १० ॥ यों चिन्त्य निज में थिर भये तिन अकथ जो आनन्द लह्यो। सोई इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमेंद्र को नाहीं कह्यो ॥ तब ही शुक्ल ध्यानाग्नि कर चउघाति विधि काननदह्यो। सब लख्यो केवल ज्ञानकार भविलोक को शिवमग कह्यो ॥ ११ ॥ पुनः घाति शेष अघाति विधि छणमाहिं अष्टम भूवसे। वसुकर्म विनशे सुगुण वसु सम्यक्त्व आदिक सब लसे ॥ संसार पार अपार पारावार तर तीरे गये। अविकार अकल अरूप शुध चितरूप अविनाशी भये ॥ १२ ॥ निज मांहि लोक अलोक गुण पर्याय प्रतिबिंबित थये। रहि हैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परणये ॥ धन्य धन्य हैं वे जीव नर भव पाय यह कार्य किया। तिनही अनादी भ्रमण पंच प्रकार तज वर सुख लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यो बड़भाग रत्न त्रय धरै। अरु धरेंगे सो शिवलहे तिन सुयश जल जग मलहरे ॥ इमजान आलस हान साहस ठान तह

शिख आदरो। जबलों न रोग जरागहै तबलों भक्ति निज हित करो ॥ १४ ॥ यह राग आग दहै सदा यासे समामृत पीजिये। चिरभजे विषय कषाय अब ये त्याग निजपद लीजिये ॥ क्यारचो पर पद में न तेरो पद यहै क्यों दुःख सहै। अब दौल होव सुखी स्वपद रच दावमत चूकोयहै ॥ १५ ॥ ॥ दोहा ॥

इक नव वसुइक वर्ष की, तीज शुक्ल वैशाख। कहो तत्व उपदेश यह, लख बुधजन की शाख ॥ १ ॥ लघुधी तथा प्रमादसे, अर्थ शब्द की भूल ॥ सुधी सुधार पढ़ो सदा, ज्यों पावो भव कूल ॥ २ ॥ श्रीमत्पंडित दौलत-राम ने वैशाख शुक्ल तीज सं० १८९१ में रचा।

इति छहढाला समाप्तम् ॥

७९ अथ राजुल पचीसी ॥

प्रथम ही बन्दों यादव राय। पुन शारदा मनावहू बल जीव वे ॥ बन्दों जी अपने गुरु के पांय। राज मती गुण गावहूं बल जीव वे ॥ गाऊं मंगल राजुल पचीसी नेम जब व्याहन चढ़े। देख पशुअन दया उप-जी छोड़ सब वन को कढ़े ॥ गिरि नार गिरि परजाय

के प्रभु जन दिक्षा आदरी । करजोड़ के राजुल तबे यह
बाप से विनती करी ॥ १ ॥ बावे जी मुझे गिर नारि
पठाव । मैं मुख देखों नाथ का बल जीववे ॥ बावेजी मुझे
उमाहा थाव । अपने पियके साथ का बल जीववे ॥
हूवा उमाहा साथ का संसार सकल असार है । प्रिय
पुत्र माई बहिन भाई मोह का जंजार है ॥ यह जान
सकल अनित्य बावे यथा पानी हाथ का । क्षण एक में
खिर जायगा हूवा उमाहा साथ का ॥ २ ॥ बावे जी
मेरे शरण न कोई का से आली भाषिये बलि जीव वे ॥
बावे जी जबि मरण दिन होय । ता दिन कोई न राखि
है बलि जीव वे ॥ कोई न राखे मरण काले आय जब
यम घेर है । इन्द्र चन्द्र धनेन्द्र चक्री सबे बैठेही रहै ॥
यों जान सकल अशरण बावे क्यों न आपा ध्याइये ।
या जगत में कोई शरण नाहीं बेग मुझे पठाइये ॥३॥
बावे जी यह संसार असार । ताते रहिये मोन में बल
जीव वे ॥ चहुं गति दुःख अपार । लख चौरासी योनि
में बल जीव वे ॥ लख चौरासी योनि बावे मैं बहुत
दुःख पाइया । राग द्वेष वियोग भारी जरा मरण सता
इया ॥ संसार दुःख भंडार देखा क्यों न मन समझाइये ।

तू वेग मुझे पठाव बावे मिलों अपने साइयें॥ ४ ॥ बावे जी मेरे संग न कोइ। फिरत अकेली मैं डरों बल जीववे। बावे जी अब मुझे दुर्गति होय। दुःख अकेली मैं भरों बल जीववे। मैं भरूं दुःख अकेली भव बन एक सम जग जानिये। देव नर थावर विहंगम एक एक प्रमाणिये॥ नहीं भरों दुःख अकेली अब मैं देख जगत डराइये। बावे पठाव उतावली मैं मिलों अपने सांइये ॥ ५ ॥ बावे जी पुद्गल मेरा नाहिं इस मुझे अन्तरअति घना बल जीववे। बावेजी देखा इस घट माहिं। मैं चेतन यह जड़ बना बल जीववे ॥ यह बना जड़ चेतन्य मैं अब कहा या से प्रीति है। जीव पुद्गल एक माने यह कहां की रीति है। मैं रहों यासे भिन्न जड़ लख ज्यों जल बीच कमोदनी। तू वेग मुझे पठाव बावे आन अब ऐसी बनी ॥ ६ ॥ बावे जी हाड़ पिंजर यह देह कृमिकुल की यह कोथरी बल जीववे। बावेजी ता से कैसा नेह। अशुचि अपावन घोथरी बल जीववे॥ अशुचि अपावन अति घिनावन कहा यासे नेह है। क्या देख या में रमे निशं दिन यह बड़ा सन्देह है ॥

यह मूत्र पीव पुरीष पूरित कहा या में वास है । तू वेग मुझे पठाव वावे पिय मिलन की आस है ॥ ७ ॥ बावे जी आस्रव तबही होई । जब आपा नहीं जानिये वल जीववे ॥ वावे जी वस्तु बिरानी कोइ । सो अपनी कर मानिये वल जीववे ॥ वस्तुहि बिरानी लखे अपनी क्या बहुत तृष्णा भई । क्यों राग द्वेष वियोग भारी बुद्धि यह तेरी गई । कोई जानके जो होइ रागी ताहि क्या समझाइये । आस्रव ते सब छोड़ बावे वेग मुझे पठाइये ॥ ८ ॥ बावे जी सम्वर मनहि विचार । वस्तु आपनी मैं लखी वल जीववे ॥ वावे जी अपने चितहि सम्हार । वस्तु बिरानी मैं तजी वल जीव वे ॥ मैं तजी वस्तु बिरानी बावे राग द्वेष विडारियो । पंच इन्द्रिय मनहिं जीतों आठ मदहि निवारियो ॥ मैं आप पर को समझ देखा मुझे क्या समझाइये । सम्वर सम्हार विचार बावे वेग मुझे पठाइये ॥९॥ बावे जी निर्जरा तब ही होइ । जब इन इन्द्रिन दंडिये वल जीववे ॥ वावे जी अपने तन मन जोइ । पंच महाव्रत मंडिये वल जीववे ॥ पंचमहाव्रत मंडि बावे पंच इन्द्रिन वश करो । सब सप्ततत्व विचार बावे नव पदार्थ हिये धरो ॥ जब लहे

दर्शन ज्ञान चारित्र और से क्या काज है। बावे पठावं उतावली अब जहां पिय जिन राज है ॥१०॥ बावेजी तीनों लोक अभंग । पुरुषाकार सुजानिये बल जीव वे ॥ बावे जी चौदह राजू उतंग ऊंचा करके मानिये बल जीव वे ॥ ऊंचा करके मान बावे पवन बलकर घेर है । तीन से तेतालिस राजू घनाकार सुफेर है ॥ यह आदि अन्त सुमध्य बावे जैसे का तैसा रहै । तू वेग मुझे पठाव बावे जोड़ कर राजुल कहे ॥ ११ ॥ बावे जी दुर्लभ मानुष जोइ । दुर्लभ श्रावक धर्म है बल जीव वे ॥ बावे जी दुर्लभ नर भव होइ । दुर्लभ समकित धर्म है बल जीव वे ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र बड़े दुर्लभ पाइये । सन्यास सेती मरण पावे और मन नहीं आनिये । तू बेग मुझहि पठाव बावे कहा मेरा मानिये ॥ १२ ॥ बावे जी कीजे धर्म विचार । धर्म जगत में सार है बल जीव वे ॥ बावे जी धर्म उतारे पार । धर्म दया चित रखना बलजीव वे ॥ चित राख बावे धर्म दश विधि और मन नहीं ल्याइये । इक धर्म के सुप्रसाद बावे मुक्ति कन्त कहाइये ॥ यह जान बावे धर्म कीजे द्वादश भावना भाइये । मेरे पिया के संग बावे मुझे शिवपुर जाइये ॥ १३ ॥ बेटीरी तू क्यों होय

उदास। अब मैं विप्र पठाय स्यौं बल जीव वे॥ बेटी री बैठ हमारे पास। अब उत्तम वर लायस्यौं बलजीव वे॥ अब उत्तम वर ढूंढ़ लाऊं कला पूर्ण निर्मला। रूप सुन्दर गुणहि आगर जाति कुल का अति भला। तू देख तो क्या होइ बेटी और मन नहीं आनिये। रति कन्त सा वर ढूंढ़ लाऊं तो पिता मुझे मानिये॥ १४॥ बेटीरी ढूंढो देश विदेश ढूंढो पट्टन गांव में बल जीव वे॥ बेटीरी ढूंढों सकल नरेश देश दिशान्तर ठांव में बल जीव वे॥ द्वीप दिशान्तर ढूंढ़ों बेटी राज कुंवर वर ल्यायस्यौं। विद्या निधान समान सुरपति तिसे तुझे परनायस्यौं॥ मैं करूं मंगलाचार बेटी फेर तेरा अब नया। संतोष मन में राख बेटी वह गया तो क्या भया॥ १५॥ बाबे जी क्यों मुझे गालियें देहि। मेरे तो पिय एक है बल जीव वे॥ बावे जी मनका तजो सन्देह। और तो नर तुम टेक है बल जीव वे॥ और नर तुम टेक बावे यह नीके कर जानियों। ज्यों सती ब्रह्मी सुन्दरी अब त्यों पिता मुझे मानियों तुम मुझे क्या समझावो बावे और मन का आखता। उग्रसेन क्या तू भया दिवाना गालियां मुझे भाखता॥ १६॥

बावे जी मेरा तो पिय सोइ । तिस की मैं भी कहाइया बल जीव वे ॥ बावे जी जो युग कलियुग होइ । तऊ न दूजो साइयां बल जीव वे ॥ दूजा न मेरे साइयां अब क्या अकल तेरी गई । इस में बुरा क्या हुआ मेरा गिरि चढ़े तो भली भई ॥ है नेह मेरा नेम जी से कहो अब कैसे रहों । तू गालियां मत देहि बावे बात मैं सांची कहों ॥ १७ ॥ बेटीरी मैं क्या राखों तोहि । ते इतना मुझे भाषियो बल जीव वे ॥ बेटीरी अब सुधि नाहीं मोहि । लाज सुकुल की राखियो बल जीव वे ॥ लाज सुकुल की राख बेटी कहा सोई कीजियो । स्याही न लागे सेत को यदुबंश को यश दीजियो ॥ तप कर उन्हाले शिखर वर्षा तरु तले दृढ़ धारियो । हेम ऋतु में नीर तीरे कर्म अपने जारियो ॥ १८ ॥ सुन राजुल अब जाय । आज्ञा मांगे माय से बल जीववे ॥ मैयारी तू मुझे वेग पठाय अब मैं पिय संग जाय स्यों बल जीव वे ॥ मैया पठाव उतावली मोहि जहां मेरा पीव है । और कुछ न सुहाय मैया यह बशीमो जीव है ॥ नेह मेरा नेम जीसे कहो कैसे तोड़िहों । चारित्र धर

दृढ़ पाल संवन बहुत दिनथो जोड़िहों ॥ १९ ॥ बेटीरी संयन कैसा होय । तू क्या जाने बावरी बलजीव वें ॥ बेटीरी संयम खेल न कोइ । जाको तुम को बावरी वल जीववे ॥ तुझे चाव है चारित्र का आशान कर मत जानियो । संयम खांड़े की धार बेटी कहा मेरा मानियो ॥ तू बैठ बेटी आपने घर यही तेरा योग है। शील संयम तहां तेरा जहां परिजन लोग है ॥ २० ॥ मैयारी यह घर मेरा नाहिं कहा घर मेरा संग है वल जीववें॥ मैयारी इन सब लोगों माहिं कोई न मेरा अंग है वल जीववे। कोई न मेरा अंग मैया मेरा परियन औरहै। क्षमा माता पिता धैर्य सत्य पिय शिर मौर है ॥ भाई विवेक सुबहिन करुणा सुमति संग सहेलियां । कुटुम्ब एता संग मेरे क्यों तू कहति अकेलियां ॥ २१ ॥ मैया-री तू मेरा सुंच कराव अब बैनी नहीं सोहती वल जीववे। मैयारी वे श्रृंगार बनाव जासे पियमन मोह ही वल जीववे॥ श्रृंगार षोड़श भावकारण द्वादशतप आभूषणा। अष्ट विधि को देहुं आहुति होहुं जो निर्दूषणा ॥ मैलंब भांवरि जाय पिय संग गहूं दिक्षा पीय की । अब और कुछ न सुहाय मैया वात

सुन मो जीय की ॥ २२ ॥ बेटीरी हम करें सुख की आस । तू लागी दुःख देन को बलजीववे ॥ बेटीरी वर सेईं दश साश । अब चली संयम लेनको वलजीववे ॥ तू चली संयम लेन बेटी कहो अब हम क्या कहैं । तैं छणक मोह न किया हम से यह कुशर कैसे सहैं ॥ तू चली पति के संग बेटी और अब क्या भाषिये । स्याही न लागे सेत कुज को लाज कुल की राखिये ॥ २३ ॥ मैया हो हम को आज्ञा देहु । अब हम संयम लीजिये बल जीववे ॥ भावज हो हमसे तजो सनेह । हम पर मोह न कीजिये बल जीववे ॥ मत करो मोह फूफी पड़ो सिन बहिन दादी सब जमा । चाची भतीजी भानजी मो सबन से उत्तम छमा ॥ कर जोड़ के रजमति कहे सब सुनत चकित हो रहैं ॥ पूजिये तेरो आश बेटी और अब हम क्या कहैं ॥ २४ ॥ पहुंची हो राजुल गढ़ गिरि नारि । अपने पियके सामहो बल जीववे ॥ ली नीहो दिक्षा सुमति विचार । पहुंचत पहिले जाम ही बलजीववे ॥ पहुंचते राजुल लई दिक्षा तप किया तहां अति घना । जारि कर्म निवार दुर्गति भव सुधारो अपना ॥ सोलमें स्वर्ग विमान चढ़कर रानी राजमतीगई

स्त्री लिंग छेद अभेद करके देव ललितांग भई ॥ २५ ॥
भविजन हो जो यह पढ़े त्रिवार। और जो स्वर धर गा
वहीं बल जीववे। भवि जनहो जगमें है यह सार हृ।
दश भावना भावही बल जीववे॥ यह भावना राजुल
पचीसी जो कोई सुने भाव सो। इन्द्र चन्द्रधनेन्द्र चक्री
अंत शिव पुर जायसो। यह लालचन्द्र विनोदी गावें
सुनत सब जग गृहि भरें॥ राजुल पचीसी नेम जिन
सब संग को मंगल करें॥ २६ ॥

इति श्री राजुल पचीसी सम्पूर्ण ॥

८०. जलगालनविधि ॥

चौपाई—प्रथम वंदि जिनदेव अर्हंत। परम सुभग
शीतल शुन भंत॥ शारद गुरु वंदों परमान। जल गा-
लन विधि कहों बखान॥ १ ॥ कामरि मसक न लीजे
मोल। भरिये नहीं चामके डोल॥ जिहिं २ कुवां भरै
सब होर। एक लेज सों परै लभेड़॥ २॥ उभयतनीच
हिये मरजाद। भिन्न कुवां मिट जाय विषाद॥ नीर
तीर जहिं होय मसान। सो तजि घाट भरै जल आन
॥ ३ ॥ पानी भरन आय जो घाट। ले छन्ना म्हेले भरि

माट ॥ गाढी गजी बड़े बिस्तार । पुनि दूनी करिगाले धार ॥ ४ ॥ लीजे दूढ़ अंगुल छत्तीस । पणहा मित अं गुल चौबीस ॥ चारिउ कोन पकरि पहबाहि । सो छन्ना बिलछड़ जल माहि ॥ ५ ॥ छन्ना मध्य न कर संचरे । चारो कोन गहि घट पर धरे ॥ चुकटी धरि दावे नहि ताहि । ज्ञान बिना समझावे काहि ॥ ६ ॥ छनहि सि पट रहे जल जंत । धरि दावें मरि जाय तुरंत । बिन बिलछो छन्ना जो रहै । जल सूके जल जंत सुदहै ॥७॥ साव धान सबही विधि होय । विन प्रमाद संयम लहै सोय ॥ क्रोध लोभ माया विन मनी । अंतः करण दया रुचि घनी ॥ ८ ॥ छाने जल की दीठेधार । ते सब जीवन नीर मझार ॥ ऐसी करि भरि ल्यावे नीर । पुनि गाले घनौची तीर ॥९॥ गालि २ जल वर्तत जाइ सो छन्ना लेजलहि बुझाइ ॥ छानो नीर रहे घरी दोइ सो जल पुन अन छानो होय ॥ १० ॥ जल छाने तसु दया निमित्त । एकेन्द्री जल रहै सचित्त ॥ ऐसे जल श्रावक व्योपार । चौथी प्रतिमा लघु आचार ॥ ११ ॥

दोहा—सो ध्यानी सो मुनियतीसो श्रावक सो साध । सो आचारज है बड़ो है जामें नहिं बाद ॥ १२ ॥ सो

दाता बहु दान को लो तपशील महंत। गुलाल ब्रह्म गुण आगरो जो जल गालि पिवंत ॥ १३ ॥ चौपाई ॥
पंचम प्रतिमा श्रावक धरे । तब जल छानि शुप्राशुक करे ॥ हार कवावल तिक्त रसतोइ । तामें मिश्रित जल शुक होय॥१४॥ इतनो करै रहै दिनलान । द्वै का रहै असंजम पान॥ राखें रहै न डारी जाइ । तत्छिण सन्मूर्छन उपजाइ ॥ १५ ॥ पहर २ पर प्राशुक करे । तब वह जल संयम प्रति धरे ॥ जो गालो जल प्राशुक रहै । अष्ट प्रहर तालो फिर वहै ॥ १६ ॥ दिन ने काल उलंघि जब जाइ तब सन्मूर्छन उपजै आइ ॥ तातें कहिये बारम्बार । बिन बिलछो गालो जलधार ॥ १७ ॥ सो बिलछन बाछन में धरो । जतन जुगति पनघट विस्तरे ॥ कूप मध्य बिलछन संचरे । द्वय गुडोल जतन कर धरे ॥१८॥
जो बिलछन दीजे छुटकाइ । लगै चपेट बिराध कराइ ॥
जो बिलछन भूमें गिर परे । जापर गिरै सो बहु दुख भरे ॥ १९ ॥ नर्क निगोद पशू गति माहि । वे दुख मोपे कहे न जाइ । असुर कुमार जुदंडत आय । दुख अलात परस्पर बाध ॥ २० ॥ छेदन भेदन मुदगर मार । शीत वश दुख विषम अपार ॥ ऐसी करि दुख भुगते आउ ।

पूरी करि आवे तिह ठाउ ॥ २१ ॥ कै यो जन्म सूक-
री होइ । गादह गाडर जंबुक जोइ ॥ जो विलछन
डारे पनिहारि । सोमरि होइ श्वान की नारि ॥ २२ ॥
ता विलछन में जीव बसंत । होइ घात जेते सत जंत
पुद्गल तुच्छ दृष्टि नहिं परैं । जल आकृत जल में संच-
रें ॥ २३ ॥ एक बूंद को लेखो करे । केवल वचन साखि
हों भरे ॥ बेजो जीव होइ भरि कोक । त्यों भरि उ-
वटें तीनों लोक ॥ २४ ॥ एक बूंद के जीव अपार । बर-
नें और कहा विस्तार ॥ अनछानों जल आवे जहां ।
दोष अभिष को लागे तहां ॥ २५ ॥ अनगाल्यो जल मं-
जन करे । सो तो अंग अशुद्ध अति धरे ॥ तुच्छ जंतु
जल मांहि निहार । मानों बान्हायो पशु मार ॥२६॥
अनगाल्यो जल बरते कोइ । जन्म पाय जलही में
जोइ ॥ परतीति नहीं जन्म की तास । अनादि काल
जल ही में वास ॥ २७ ॥ जो जो जल अनगाल्यो होइ ।
तासों शुद्ध कहो मति कोइ ॥ जो जल परस परस विस्तरे ।
सो जल जीव राशि करि भरे ॥ २८ ॥ ॥ दोहा ॥

पिशुन पाय जुग २ करे नदी जाल अरु पान । अन
गाल्यो बूंद को पीवे यह वह एक समान ॥ २९ ॥ प-

तरी फाटो फिर फिरो रातो पीरो श्याम । हरित ब-
रण नहिं लीजिये दुहरे छना काम ॥३०॥ पहरो अंबर
फारि के जो छना धरि देइ । धर्म गमावे आपनो पाप
बांधि सिर लेइ ॥ ३१ ॥ चौपाई ।

तातें गालि करे जल शुद्ध । पक्की होइ अरु वाढ़े बुद्ध
पूरी क्रिया यहै अविवेक । नतर कहूं है एकानेक ॥३२॥
को शूद्र को उत्तम लोग । को धर्मी को पाप सरोग ॥
काके छूजे लीजे सीध । को उपशम उत्तम अरु नीच
॥ ३३ ॥ जोन क्रिया पानी की बने । तो कुल उत्तम
कैसे गने ॥ जो जल धर्म सकल विधि चले । तो कुल
पखदुहू निरमले ॥३४॥ गालहि जल सुंदरि परवीन। द-
याधर्म जिनके मन लीन ॥ जिनके चित्तन उपजे रीस।
सर्व अंग लक्षण बत्तीस ॥ ३५॥ शीलवंत गुणवंत गंभीर।
सलिल चित्त जानेंपर पीर ॥ सम्यक दर्शन मन वच
गात । पूजहि जिन छांड मिथ्यात ॥ ३६ ॥ टोना टम-
ना जाने नारि । सो का गाले मूढ़ गमारि ॥ पूजन चले
कुदेवे धाइ । ताके मन को धर्म नसाइ ॥ ३७ ॥ अति
क्रोधी अति खेहरी चोर । दान पुण्य को खरी कठोर॥
सो गाले जल क्यों सत भाइ । उठै रिसाइ न धर्म क-

राइ ॥ ३८॥ जल गाले न सराई करे । लरि बूढ़न सांई पै चले । गाले वे जल राजकुमारि । कै सुलज्ज साहुनि की नारि ॥३९॥ कोमल कीन्ह होइ वापुरी । माने वात गुरुनि की खरी ॥ ऐसी बिधि वरतौं नर कोइ । सो उत्तम नर श्रावक होइ ॥ ४० ॥ दोहा ।

जो जल गाले जुगति सों इस विधि कहै पुरान ।
गुलाल ब्रह्म ते नर सुखी लोक मध्य परवान ॥ ४१ ॥

इति जलगालन विधि समाप्तम् ।

८१ धारें भाषा ॥

॥ दोहा ॥

श्री जिनवर चौवीसवर कुनयध्वांत हर भान ।
अमित वीर्य द्रुगवोध सुख युत तिष्ठो इह थान ॥१॥

(परि पुष्पांजलिं क्षिपेत्) इति स्थापनम् ।

त्रिभंगी छन्द ।

गिरीश शीस पाण्डु पे सचीश ईश थापियो । महोत्सवो अनंद कंद को सवै तहां कियो ॥ हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्त देखि हेतु आपना । यहां करें जिनेन्द्र चन्द्रकी सु विम्ब थापना ॥ २ ॥

इति बिम्ब स्थापना। सुन्दरी छन्द।

कनक मणि मय कुंभ सुहावने। हरि सुक्षीर भरे अति पावने॥ हम सुवासित नीर यहां भरें। जगत पावन पांव तरें धरें॥ ३॥ इति कलश स्थापना।

गीतिका छन्द।

शुद्धोपयोग समान भ्रम हर परम सौरभ पावनो। आकृष्ट भृंग समूह गंग समुद्भवो अवि पावनो॥ मणि कनक कुंभ निशुंभ किल्विष विमल शीतल भरि धरों। श्रम स्वेद मल निरवार जिनत्रय धार दे पायन परों॥ ४॥ इति जल धारा।

अति मधुर जिन ध्वनि सम सु प्रीणित प्राणिवर्ग स्वभाव सों। बुध चित्त समहर पित्त नित्त सुमिष्ट इष्ट उछाव सों। तत्काल इक्षु समुत्थ प्राशुक रत्न कुंभ विषैं भरों। यम त्रास ताप निवार जिन त्रय धार दे पायन परों॥ ५॥ इति इक्षु रस धारा। निष्टप्त क्षिप्त सुवर्ण मद दमनीय ज्यों विधि जैनकी। आयुप्रदा बल बुद्धि दा रक्षा सुयों जिय सैन की॥ तत्काल मंथित क्षीर उत्थित प्राज्य मणि झारी भरों। दीजे अतुल बल मोहि जिन त्रय धारदे पायन परों॥ ६॥ इति घृत धारा॥

शरदाभ्र शुभ्र सु हाटक द्युति सुरभि पावन सोहनो ।
क्लौ व्यक्त हर वल धरन पूरन पय सकल मन मोहनो ॥
कद उष्ण गोथन तें समाहृत घट जटित मणि में भरों ।
दुर्बल दशा मो मेट जिन त्रय धार दे पायन परों ॥७॥

इति दुग्ध धारा ।

वर विशद जैना चार्य ज्यों मधुराम्ल कर्क शिता धरैं ।
शुचि कर रसिक मंथन विर्मथित नेह दोनों अनुसरे ॥
गो दधि सुमणि भृंगार पूरन ल्याय करि आगें धरों ।
दुखदोष कोष निवार जिन त्रय धार दे पायन परों॥८॥

इति दधि धारा ॥

दोहा—सर्वौषधी मिलायके भरि कंचन भृंगार ।
यजों चरण त्रय धार दे तारि तारि भवतार ॥९॥

इति सर्वौषधी धारा ॥

इति धारैं भाषा समाप्तम् ॥

॥ ॐ नमः सिद्धं ॥

८२ अरिहन्तपरमेष्ठीमंगल ॥

वन्दों श्रीअरिहन्त सिद्ध आचार्यजी । उपाध्याय नमि

साधु भावधर आर्यजी । पंच परमपद श्रेष्ठ जगति में ये कहे । इन ही के सुप्रसाद भव्यजन सुखलहे ॥ लहेलेले लेंयगे सुखमुक्ति रमनीके सही । अहमेंद्र इन्द्र नरेंद्रसुख की तास उपमा है नहीं ॥ यासे तिन्हों के एक सौ ति रतालगुण नितध्याइये । उरनेम धरके पंचपद के पंच मंगल गाइये ॥ १ ॥ सम चतुर संस्थान सुगन्धित तनल से । एक सहस्र गणि आठ सुलक्षण शुभवसे ॥ मलमूत्र नहीं होंय पसेव न होइये । क्षीरवर्णवर रुधिर अतुल वल जोइये ॥ जोइये हितमित वचन सुन्दर रूपका ना पारजी । लखवज्र ऋषभ नाराच्य संहनन जन्म दश गुण धारजी ॥ सुरभिक्ष योजन एक शतलों चार दिश जानिये । छाया विवर्जित चार आनन गगण गमन वखानिये ॥ २ ॥ नहीं बढ़ नख केश सकल विद्याधनी प्राणी बाधा रहित सहिज अतिशय बनी ॥ नहीं होय उपसर्गाहार कवला नहीं । नेत्र नहीं टमकार ज्ञानगुण दश सही ॥ सही सबही जीव केरे भावमैत्री तहां वसें। सकलार्थ मागधी होय भाषा सुनत सब संशय नशें ॥ सब लोकमें आनन्द वर्ते भूमि दर्पण समछजे । आकाश निर्मल धान्य सब ही एकठे ही नीपजे ॥ ३ ॥ छः ऋतु

के फलफूल फलें इकबार ही। भूतण कंटक आदि रहित सुख कारही ॥ मन्द सुगन्धि चलै पवन सकल जनमन हरैं। गंधोदक की वृष्टि गगण से सुर करैं॥ करैं जय जयकार मुख से शब्द सुर आकाश में। सुरहेम कमल विहार करते धरत पदतल जासमें। अष्टमंगल द्रव्य राजत धर्मचक्र चले तहां। ये देव कृत गुण जान चौदह जोड़ सबचौ तिस यहां ॥ ४ ॥ सोहै वृक्ष अशोक शोक हरलेत है । दिव्यध्वनि सुनजीव मिथ्या तज देत है ॥ सुरकृत पुष्प सुवृष्टि चमर चौसठ दुरैं। भामंडल सुरगंगण नाद दुंदभी करैं॥ करैं अपने हेतको ये छत्रत्रय शिर सोहना । मणि जड़ित सिंहासन कनकमय लोकत्रय मन मोहना॥ ये प्रातिहार्य मिलाय आठो जोड़ गुण च्यालीस जी । येही अनावत प्रगट तुमको तीन जगके ईशजी ॥ दर्शन ज्ञान अनंत विषें षट द्रव्यसे। गुण पर्याय अनंत लखें दृष्टि सर्वके ॥ राजतसुक्ख अनन्तानन्त केवलधनी। अनन्त चतुष्टय जोड़ सकल छालिस गणी॥ गणिये छुछालिस गुण विराजत देव अरिहंत सो लखो। गुण और कवलों कहों कैसे बुद्धि थोरी मैं रखी॥ इन्द्रगणधर आदि जिन गुणगणत पार न पाइयो। गणिदोष अष्टादश

जिनेश्वर मूल से जु नसाइयो ॥ ६ ॥ क्षुधातृषा मदमोह जरा चिन्ता टरी। आरति विस्मयरोग शोक निद्राहरी स्वेदखेद भयरोग हनो पुनःद्वैषजी। जन्ममरणका दुःख नहीं लवलेशजी॥ लवलेश इनका नाहिं यासे मोहि तारण तरणजी। भव दुःख निवारण सुखकारण मोह अशरण शरणजी॥ यासे सदाही प्रातउठ छालीस गुण नित ध्याइये। उदनेम धरपद पंच में अरिहंत मंगल गाइये॥ ७॥ इति श्री अरिहंत परमेष्टीमंगल सम्पूर्ण॥

८३ श्रीसिद्धपरमेष्टीमंगल

तिहूं जग शिरतन वात वलयमें जानियो। प्राग्भार नभक्षेत्र तहां वर आनियो॥ मनुजक्षेत्र सम क्षेत्र महा अद्भुतसही। हाटक मणिमय मुक्तिशिला तासमकही॥ कही तिहूं जग शीर्ष ऊपर छत्र के आकारजी। मध्यभाग योजन आठमोटी अंतअनुक्रम छारजी॥ तापर विराजत सिद्धशिवथल कायविन चिनरूपजी। लखपूर्वतन से ऊन किंचित् आत्मरूप अनूपजी॥ १॥ एक सिद्ध के माहिं अनंते सिद्ध हैं। राजत गुण समुदाय लिये निज ऋद्धि हैं॥ किंचित्कायोत्सर्ग और पद्मासनं। सकल सिद्धसम शीर्ष विराजत भासनं॥ भासना आकार का

जे लखो इक दृष्टान्तजी। सांचों करो इक मोम को फिर गारा लेप धरन्त जी ॥ सुकबायता को अग्नि देकर मोंम काढ़न ठानिये। पोलारवा में रहे जैसी सिद्ध आकृति जानिये ॥ २ ॥ पौने सोलह सौ धनुमहा गिनायजी। वात वलय तनकी सुलखो मोटाइ जी। पन्द्रह सौ का भागदेय ताको सही। सवापांच सौ धनुष होंय संशय नहीं ॥ संशय नहीं अवगाहना उत्कृष्ट सिद्धन की लखो। तनबात की मोटाई पुनः भाग नवलख का रखो ॥ अवगाहनाहि जघन्यगिनले हाथ साढ़े तीनजी पुनः मध्य भेद अनेक हैं अवगाहना के चीत जी ॥ ३ ॥ मोहनी नामाकर्म महाबलवन्त जी। कीन्हीं घातिल बुद्धि सकल जगजन्तु जी ॥ ताहिमूल से नाशि शुद्ध सम्पति लही। प्रगटोगुण सम्यक्त्वप्रथम अद्भुत सही ॥ सही गुण यह जगति के दुःख नाशने कों मूल है। या बिना सब ही अकार्थ बासना बिन फूल हैं ॥ बिन नींव मंदिर मूल बिन तरु नीर बिनसागर यथा। सम्यक्त्व गुण बिन सकल करणी सफल नाहीं सर्वथा ॥ ४ ॥ ज्ञानावरणी कर्म दयो सब टार जी। हस्त रेख समलोक अलोक निहार जी ॥ दूजो गुण लब ज्ञान शुद्ध

सुप्रगट लहो। यासम और न कोइ जगति में गुण कहो ॥ कहो तीजो कर्म नामी दर्शनावरणी लखो। दीखे नहीं जाके उदय जिमि वस्त्र पर ढाकन रखो ॥ इस कर्मको विध्वंस करके लहो केवल दर्शना। गुण होय दर्शन मिटे तब ही वस्तु देखन तर्सना ॥ ५ ॥ अन्तराय बलवान महा दुःख देत है। जग जीवों की शक्ति सभी हरलेत है ॥ याको हति निज वीर्य अनंत लहायजी। सो चौथा गुण वीर्य लखो मनल्याय जी ॥ मन ल्याय तिहुं जगमाहिं जानो नाम कर्म महान हैं। इस कर्म बश जगजीव चहुंगति भटकते हैरान हैं ॥ याको हनो तब ही अमूर्ति भयो आत्मराम है। सो मस्त गुण तब होत जग में बहुर नाहीं काम है ॥ ६ ॥ आयु कर्म से जीव चहूंगति में बसे। बंदीखाने माहिं यथा कैदी फंसे ॥ याहि हरत गुण प्रगट होत अवगाहना। एक सिद्ध में सिद्ध अनंत समावना ॥ समावना जगजीव सब ही गोत्र विधिके वशपरें। पद ऊंच नीच लहें सुबहु बिधि दुःख दावानल जरें ॥ इस गोत्र कर्म विनाशने से भाव सम प्रगटें सदा। सो गुण अगुरु लघु होय तबहीं ऊंच नीच न रहे कदा ॥ ७ ॥ वेदना कर्म बसाय जग-

ति के जीव, जी । भोगें दुःख अपार अचिंत्य सदीव जी अव्याबाध गुण होइ हरे जब याहि जी । सुख दुःख दोनों रहित नहीं कछु चाहजी ॥ चाह तिहुं जगकाल तिहुंके सुख इकट्ठे कीजिये । तिनसे अनन्तः सुख है इक समय माहिं लहीजिये ॥ यासे तिन्हों के आठ गुणको प्रात उठनित ध्याइये । उर नेम धरके पंचपद में सिद्ध मंगल गाइये ॥८॥ इति श्री सिद्धपरमेष्ठीमंगल सम्पूर्णम् ।

८४ श्री आचार्यपरमेष्ठी मंगल ॥

दर्शन मोह विनाश आप दर्शन लहो । सोही दर्शनाचार भिन्न परसे कहो ॥ स्वपर भेद लख ज्ञान थकी निज लीन जी । सोही ज्ञानाचार लखोसु प्रवीण जी॥ प्रवीण निजपद मांहि थिर हो यही चारित्र गुणसही। इच्छा आभ्यन्तर रोक अनसन बाह्यगुण तप जानही ॥ जब कष्ट बहु विधि आवता नहिं टरें यह गुण वीर्य जी । आचरें पंचाचार यह गुण लहैं बहुधर धीर्य जी॥१॥ वर्ष अयन ऋतुमास पक्ष आदिक तनी । करें सदा उपवास लहैं गुण अनसनी । पूर्ण ग्रास बत्तीस अन्न जल के गुणी । लेव तामें ऊन ऊनोदर सो सुनी ॥ सुनीचर्या निमित्त बन में ब्रत अटपटे धर चलें । ब्रत परि-

संख्या कहो यह गुण और जन से ना पलैं ॥ कोई रस को तजैं कबहूं सर्व रस तजदेत हैं । गुण जान रस परित्याग सुन्दर महा अद्भुत भजत हैं ॥ २ ॥ गिरि कंदर एकांत रहत सु मसानमें । धरैं ध्यान अनागार लीन निज ज्ञान में ॥ विव्यक्त शय्यासन सो कहत गुण याहिजी । साहस ऐसा धार ममत्व सो नाहिं जी ॥ नाहिं तन को तनक सो भी ममत्व तिनके उर बसे । पावस समय तरुके तले धरैं ध्यान पातिक सब नसे ॥ हेमंत सरिता ग्रीष्म गिरि शिर महा उग्र जो तप करैं । गुण लखो काय क्लेश येही सकल दुख को परिहरैं ॥ ३ ॥ प्रातः धरैंव्रत जेह सम्हालैं सांझजी । कोई लागो दोष लखैं ता मांझ जी ॥ गुरु से कह सब दोष दंड को आचरैं । प्रायश्चित्त गुण येह महा सुख को करैं ॥ करैं मन वच काय सेती देव गुरु श्रुतका विनय । अरु पूजनीक पदार्थ तिन को विनय गुण तपको गिनय ॥ रोगादि युत या वृद्ध मुनि वर देख वैयावृत्य धरैं । उन्माद मद तज लखैं वैयावृत्य गुण तब विस्तरैं ॥ ४ ॥ पंचभेद स्वाध्याय आप नित ही करैं । बोध बंधके हेतु परन को उच्चरैं ॥ सोही गुण स्वाध्याय सकल में सारजी । नाशा

दृष्टि लगाय खड़े अनागार जी ॥ अनागार दोनोंकर लुमायें लीन निज आतम विषैं। गुण यही कायोत्सर्ग कहिये ममत्व तन से ना दिखैं ॥ ध्यान धर्मरु शुक्ल ध्यावैं आर्ति रौद्र निवार जी । यह ध्यान गुण शिव करनहारा कर्म रिपुक्षयकार जी ॥ ५ ॥ क्रोध महा रिपु जीति क्षमा गुण आदरें। मार्दव गुण जब होय अष्ट मद को हरें ॥ कूट कपट विषनाश होय आर्यव गुणी। झूठ बचन परित्याग सत्यगुण लें मुनी ॥ मुनी धोवैं लोभ मल को शौच्य गुण तबहीं धरैं। मनका विकाररु पांच इन्द्री जीति संयम गुण करें। अन सनादिक ठान के तप शील गुण कर निर्मलो। त्याग अंतर्बाह्य परिग्रह त्याग गुण लीनो भलो ॥ ६ ॥ निज परभिन्न लखाव यही आकिंचना। ब्रह्मचर्य त्रियत्याग सकल विधि से भना ॥ शत्रुमित्र समभाव धरैं समता मना। देव गुरू श्रुति बंदे यह गुण बन्दना ॥ बन्दना स्तुति देव श्रुति गुरु करें स्तवन गुण धार के। प्रतिक्रमण गुणकर निवारें लगे दोष विचार के ॥ पढ़ैं निज श्रुत पर पढ़ावैं यही गुण स्वाध्यायजी। कायोत्सर्ग धराय निजपद ध्यान शुद्ध लगाय जी ॥ ७ ॥ मन बन्दर को रोक गुप्ति

मन को लहैं। वचन गुप्ति गुण काज नहीं विकथा कहैं॥ काय गुप्ति तब होय धरैं तन छीण जी। निज आत्म लवलीन करैं पर हीनजी ॥ पर हीन करके आप अपनी सम्पदा परखैं अछय। आचार्य सोई श्रेष्ठ जग में तास उपमा को रखय ॥ यासे तिन्होंके मात उठ छत्तीस गुण नित ध्याइये। उर नेमधर पद पंच में आचार्य मंगल गाइये ॥ ८ ॥

इति श्री आचार्यपरमेष्ठीमंगल सम्पूर्णम् ॥

८५ श्री उपाध्यायपरमेष्ठी मंगल ॥

आचारांग पद सहस्र अठारह जानियो। सूत्र कांग छत्तीस सहस्र पद मानियो॥ स्थानांग पद जान सहस्र ब्यालिस सदा। सम वायांग इकलाख सहस्र चौसठ पदा॥ पदागिन दो लाख ऊपर धर अट्ठाइस सहस्र जी। व्याख्या प्रज्ञप्ति तामें प्रश्न कीहै रहस्य जी ॥ पद पांच लाख हजार छप्पन जान ज्ञात्र कथांगके। पद लाख ग्यारह सहस्र सत्तर उपास का ध्यानांग के ॥ १॥ अंतःकृता दशांग लाख तेवीसजी। सहस्र अट्ठाइस जोड़ सकल पद दीसजी॥ पद गिन बाजने लाख सहस्र चवाल जी। अनुत्तर उत्पाद दशांग सम्हाल जी। सम्हाल

लाख तिरानवे पद जोड़ सोले हजार जी। लखलेव प्रश्न व्याकरण माहीं धर्म कथन विचार जी॥ एक कोड़ि ऊपर धर चौरासी लाख सब गण लीजिये। येही सूत्र विपाक के पद का कथन लख लीजिये॥ २॥ येही ग्यारह अंग एकादश गुण कहे। इन सबके पद जोड़ सकल कितने लहे॥ कोड़ि चारि गिनिलेहु लाख पंद्रह रखो। दो सहस्र मिलवाय सकल संख्या लखो॥ लखो अब उत्पाद पूर्व एक कोड़ि जोपद तनी। पद लाख छानवे गिनो ताके पूर्व जो अग्रायनी। पद लाख सत्तर लखो ताके पूर्व वीर्यानुवाद जी। लखि अस्ति नास्ति प्रवाद केपद साठलख मर्याद जी॥ ३॥ पूर्वज्ञान प्रवाद पंचमा जान जी: एक कोड़ि पद माहिं एक पद हानि जी॥ षष्टम सत्य प्रवाद पूर्व पहिचानियो। एक कोड़ि पद पैसु अधिक षट मानियो। मानियो आत्म प्रवाद पूर्व कोड़ि पद छब्बीस जी। पद पूर्व कर्म प्रवाद इकसौ असीलाख कही सजी॥ गिनलो चौरासी लाख पदका पूर्व प्रत्याख्यानजी। विद्यानुवादजु कोड़ि इकपर लाख दश पदठान जी॥ ४॥ पूर्व लख कल्याण वाद कहलायजी। पद गिन कोड़ि छब्बीस सकल दरशाय जी॥ प्राणवाद लख पूर्व कोड़ि तेरह पदा। क्रिया विशाल

पद् जान कोड़ि नव सर्वदा ॥ सर्वदा गिन त्रैलोक त्रिं-दुःसार पूर्व खासजी । पद् कोड़ि द्वादश पर धरावे लाख गिनो पचासजी ॥ पद् पूर्व चौदह के इकट्ठे जोड़ गिन मन ल्याय जी । साढ़े पंचानवे कोड़ि ऊपर पांच पद् धरवाय जी ॥ ५ ॥ एकादश लख अंग पूर्व चौदह गने । पद् दोनों के जोड़ सकल इतने भने ॥ कोड़ि निन्या-नवे और लाख पैंसठ धरो । सहस्र दोइ पद् पांच जोड़ निश्चय करो ॥ करो गिनती एकपद् में किते अक्षर हैं सही । धर अर्व सोलह कोड़ि चौंतिस अरु तिरासी लाख ही ॥ हज्जार सात रु आठ शतपै गिन अठासी फिर रखो । एक पद्के कहे सोलख सकल पद् इस सम रखो ॥ ६ ॥ अंग पूर्वको सकल भयो है ज्ञानजी । येही गुण पच्चीस मुख्य पहिचान जी ॥ सोही तिहूं जग श्रेष्ठ लखो उपझायजी । पर परणति से भिन्न आत्मलव ल्या य जी ॥ लवल्याय निज गुण सम्पदा में मग्न निशिदिन ही रहैं । भवसिंधु तारण तरण नवका और उपमा को कहैं ॥ याते तिन्हों के प्रात उठ पच्चीस गुण नित ध्या इये । उर नेम धर पद् पंचमें उपाध्याय मंगल गाइये ७

इति श्री उपाध्यायपरमेष्ठीमंगल सम्पूर्णम् ॥

८६ श्रीसाधुपरमेष्ठीमंगल ॥

मनवच तन षट काय तनी करुणा धरें। यही अहिंसा व्रत सु प्रथम गुण आचरें॥ करें झूठ परित्याग वचन मन कायजी। कृत कारित अनुमोद भंग सब गायजी॥ सब गाय अनृत त्याग गुण यह सर्व साधुन के लखो। इसही सुविधि से त्याग चोरी व्रतास्तेय सुनो रखो॥ चेतन अचेतन नारि तजना भेद संहस्र अठारसे सोही है व्रत ब्रह्मचर्य साधू धरत हर्ष अपार से॥ १॥ बाह्याभ्यन्तर त्याग परग्रह का करें। सोही परग्रह त्याग महाव्रत आदरें॥ चलत पंथ लख शुद्ध हाथ गनिचारजी ईर्या समिति सुव्रतहिं दयाचित धारजी॥ चितधार करुणा वचन बोलत स्वपर हित मर्यादसे। यह व्रतसु भाषा समिति साधू धरत उर अहलादसे॥ गिनले छयालिस दोष वर्जित लेत शुद्ध आहारजी। सो जान ऐषणा समिति सुन्दर व्रत महा सुखकार जी॥ २॥ वस्तु उठावत बार भूमि दृगसे लखें। तैसे भूमि निहार वस्तु विधि से रखे॥ आदान निक्षेपना समिति याको कहें। धारें श्रीमुनिराज महा सुखको लहें॥ लहें नाहीं

जीव बाधा भूमि ऐसी देख के। प्रति स्थापन समिति यह मल मूत्र खेपैं पेखके ॥ तज स्नान विलेपनादिक नाहिं तन संस्कार जी। तन छीलकर स्पर्शनेन्द्री शोषण अविकारजी ॥३॥ आम्ल मिष्ट कटुकादि स्वाद रसना तनो। तजैं मुनी रसनेंद्रिय रोधन तप भनो ॥ सुगंध अरु दुर्गंध विषय नाशा तजैं। घ्राणेंद्रीय निरोध नाम तप तब भजैं ॥ भजैं इन्द्रिय रोध चक्षुः दृष्टि नाशापर धरैं। युतराग दृग से निरखवो रूपादि सबही परिहरैं नहीं सुनें वचन विकार कर्णा काल से बहिरे भये। यह कारण इन्द्रिय रोध तपधर सुनें जिन वच रुचिलये ॥४॥ तृण कंचन अरि मित्र सुमहल मसान जी। सुख दुःख जीवन मरण लखैं जु समानजी ॥ समतावश्यक नाम यही गुण जान जी। धारैं सो मुनिराज महा सुख खान जी ॥ सुखदान लख गुण वन्दना है देव श्रुत गुरु की चहैं। इन आदि वंदन योग्य पद की वंदनाकर गुण लहैं ॥ स्तुति देव श्रुत गुरु आदि देकर पूजनीक जु पदतनी। मन वचन तन से करैं मुनिवर थुति आवश्यक सोभनी ॥ ५ ॥ आवश्चित्त ले दोष लगे दूरी करैं। प्रतिक्रमण गुण येह सर्व साधू धरैं ॥ पंच भेद स्वाध्याय करैं

नित ही तहां। सोही गुण स्वाध्याय लहैं निज सम्पदा॥ निज सम्पदा के अर्थ मुनिवर करैं कायोत्सर्गजी। धर दृष्टि नाशा भुज लुवायें ममत्व हन तन वर्गजी॥ तृण कंटकादिक शुद्ध भूपर अल्प निद्रा लेंय जी। लख रैंन पिछली नाम तप यह भूमि शयन कहेयजी॥ ६॥ वर उज्ज्वल तन मलिन तजैं स्नान जी। स्नान त्याग व्रत येह कहो पहिचान जी॥ मात गर्भ से जन्म समान स्वरूप जी। सोही गुण तन वस्त्र त्याग सो अनूप जी॥ अनूप मुष्टी पंच सेती लुंच कचका करत हैं। क्षौर कारण धार उरकच लुंचव्रत मुनि धरत हैं॥ गुण एकबार आहार लघुलें दोष बिन बिन राग जी। सो एकदा लघु भुक्त तप है धरैं मुनि बड़ भाग जी॥ ७॥ खड़े लेंय आहार पात्र करका करैं। चरैंगाय सम वृत्य खड़ा गुण सो धरैं॥ आनन मल संयुक्त सूग आने नहीं। करो दंतवन त्याग सुव्रत जानो सही॥ जानो सही गुण गिन अट्ठाइस सबही साधू लहो। यह श्रेष्ट तीनो भुवन माहीं तरण तारण पदक हो॥ या से तिन्हों के प्रातःउठकर गुण अट्ठाइस ध्याइये। उरनेम धरकै पंच पद में साधु मंगल गाइये॥ ८॥ इति

८७ ऋषिपंचमीव्रतकथा भाषा ॥

दोहा—वन्दों श्री जिनराज को, चरण-कमल गुणहीर।
भव समुद्र तारण तरण, हरण सकल भव पीर ॥ १ ॥
बन्दोंजिन वाणी सुभग, जाते दुरित नशाय । कथा
पंचमी की कहूं, गुरु के लागों पांय ॥ २ ॥ चौपाई ॥
राज गृह नगरी शुभ बसै। श्रेणिक महाराज अतिलसै॥
एक दिवस वन्दों जिनराज । श्रेणिक - ३ किया सुख
काज ॥ ३ ॥ व्रत पंचमी कह्यो जिन देव । किन पायो
फलकर व्रत सेव ॥ तब गणधर बोले सुनसंत । हस्तनाग-
पुर बसे महंत ॥ ४ ॥ धन पति नगर सेठ तहं बसै ।
कमल श्री वनिता गृह लसै ॥ पुत्र सुभविकादत्त तिस
गेह । भयो पुनीत मदन समदेह ॥ ५ ॥ धनपति और
विवाही त्रिया । नामरूप श्रीपति अति प्रिया ॥ तब
कमल श्री अति दुख सहै । पुत्र सहित न्यारे गृहरहै ६
धनपति रूप श्री आनन्द । बन्धुदत्त सुत उपजो चंद ॥
ज्यों २ बढ़े सयाने भये । त्यों २ सकल कला गुण लये ७
एक दिवश मिल दोनों भ्रात । धन विढ़वन की कहि-
यो बात ॥ तात मात आनंदित भयो । रत्नदीप का
आयसुदयो ॥ ८ ॥ संग लये योद्धा बहु धीर । लये पाट

अम्बर वर चीर ॥ वणिज योग्य लीने सब साज । रत्न भूषणवर गजवाज ॥ ९ ॥ भविकदत्त माता से बात । कही बनिजको पठवाताल ॥ बन्धुदत्त पुनि संग सुचले और भीलोग संग हैं भले ॥ १० ॥ सुनमाता तब धव-की हियो । तुम विछुड़े सुत कैसे जियो ॥ तुम गृह स-इन कुल आधार | तुम बिन सब सूनों संसार ॥ ११ ॥ अरु तुम संग सौतिका पूत । सो व्यसनी सुनियत है धूर्त ॥ जो हठ पुत्र वणिज को जाव । तो धूर्तको मत पतिआउ ॥ १२ ॥ नदी नखी जो शृंगी जीव । अरु दुर्जन कर शस्त्रसदीव ॥ अरु वेश्या के घर में वास । तिनका सुत मत करो विश्वास ॥ १३ ॥ यह माता की सुनिकर बात । रोम २ आनन्दोगात ॥ चलत शकुन स-वनीके भये । चलत २ सागर तट गये ॥ १४ ॥ तहां भरे प्रोहन जो अपार । वस्तु गिणत बाढ़े बिस्तार ॥ गये तिलक पट्टन के तीर । जामें कोई जाय न धीर ॥ १५ ॥ भविकदत्त चित कीनों चाव । गयो नगरमें कर उच्छाव शून्य नगर ना कोई वसे । वस्तु बजार हजारों लसै ॥ १६ ॥ निर्भय भयो गयो सो तहां । चैत्यालय जिनवर को जहां ॥ वंदे चंद्र प्रभू जिन राज । सुफल जन्म ति-

न मानों आज ॥ १७ ॥ बन्धुदत्त ने कीनों द्रोह । यान चलाये छोड़ो मोह ॥ कुछ यक दिन में पहुंचे तहां । रत्न द्वीप पट्टन है जहां ॥ १८॥ भविक दत्त फिर आयो थान । शून्य देख मन भयो मलान ॥ माता वचन सु-मर मन धीर । फिर आयो जिनवर के तीर ॥ १९ ॥ इतनी बात यहां ही रही । अब यह कथा मात पर गई ॥ पुत्र मोह की व्यापी पीर । कमल श्रीमति धरे न धीर ॥ २० ॥ छण २ दीर्घले निश्वास । भूली सुधि बुधि भूख न प्यास ॥ संग सखी जो स्यानी लई । अ-वधि ज्ञान मुनिवर ढिंग गई ॥ २१ ॥ वन्दि मुनीश्वर पूछे सोई । जासे पुत्र मिलन अब होई ॥ जासे सुख परमानंद लहो । बिछुरापुत्र मिलैसो कहो ॥ २२ ॥ सुने वचन तब सुनिवर कहैं । ज्यासों रोग शोक सब दहैं॥ जासे स्वर्ग मुक्ति फल होइ । व्रत पंचमी करो भविलोइ ॥ २३ ॥ जोड़े कमल श्री कर दोइ । कहो मुनींद्र कौन विधि होइ ॥ सुनि धुनि मुनि बोले अभिराम । मास अषाढ़ शुक्ल का धाम ॥ २४ ॥ जबहि शुक्ल पंचमि दिन होइ । तब ही व्रत कीजे भवि लोइ ॥ व्रत के दिन छोड़ो आरंभ । जिन वर भजो तजो सब दंभ

॥ २५ ॥ वर्ष पंच अरुमासहि पंच। ये सब व्रत पैंसठ सुन पंच ॥ अब यह व्रत पूरे हों लोइ। यथा शक्ति उद्यापन होइ ॥ २६ ॥ लीनो व्रत कमलश्री भाय। सब दुख ताके गये पलाय ॥ कथा सुभविक दत्त कोठहीं। नगर भ्रमो सो गयो नहिं कहीं ॥ २७ ॥ पहुंचो राजा के दरबार। दिन आथयो भयो अंधिकार ॥ तहां न कोई मानव रहै। कासों बात चित्त की कहै ॥ २८ ॥ नृप की सुता रूप गुण खान। बोली तासों कर सन्मान ॥ अहो धीर तुम आये यहां। कोन जाति पुर निवसो कहां ॥ २९ ॥ कौन भांति तुम आगम भयो। यह सन्देह भयो मोनयो ॥ तासे, भविक दत्त वृत्तांत। अपनो कहो भयो तब शांत ॥ ३० ॥ सुन पुनि राजकुंवरि यों कहै। एक महाराक्षस यहं रहै ॥ ताने पुर कीन्हों विध्वंश। नर नारिन का रहा न वंश ॥ ३१ ॥ वह पुत्री कर राखो मोहि। ना जानों अब कैसी होहि॥ तुम्हें देख वह करि है क्रोध। सदा लेत मानुष का शोध ॥ ३२ ॥ अब मैं एक जो तुम से कहों। मैं द्वारे मंदिर के रहों। तुम भीतर रहि देउ किवार। तोवासे कुछ होइ उबार ॥ ३३ ॥ कुंवर राखि दृढ़ दये किवा-

र। आप रही मंदिर के द्वार ॥ तवै निशाचर आयो तहां। पुत्री मंदिर बाहर जहां ॥ ३४ ॥ सो हठकर मंदिर में गयो। देख कुंवर प्रमुदित मन भयो ॥ अब मेरे सीझे सब काज। तुम दर्शन पायो मैं आज ॥ ३५ ॥ तुमतो मेरे मित्र निदान। कन्या राखी तुम्हरे जान ॥ अब मोको तुम अति सुख देउ। कन्या राज पाट सब लेऊ ॥ ३६ ॥ तब हि असुर ने कियो विवाह । कन्या दे कीन्हों उत्साह ॥ भविक दत्त अरु राजकुमारी। सुख से रहत सुखहल मझारी ॥ ३७ ॥ सम खने मंदिर के रहैं। तात मात की सब सुधि कहैं। यह तो लखि सुइन को भई। कथा जो बंधुदत्त की ठई ॥ ३८॥ वस्तु बेंच अरु लीनी नई। नफा न एक दाम की भई ॥ सो भर यान देश को चले। बीच बीच तस्कर बहु मिले ॥ ३९ ॥ तिन मिल लूट लयो सब संग । कठिन कष्टसे छोड़े नंग ॥ आये फेर तिलक पुर थान। भविक दत्त अवलोके जान ॥ ४० ॥ दम्पति लखि आनंदित भये। तब सब मिल आगे होलये॥ बन्धु दत्त पांवों पड़गयो। तुम बिन माल महा दुख लयो ॥ ४१ ॥ चोरों लूट लये हम सबे। कठिन कष्ट से छोड़े अबै ॥ भविक दत्त हंस

बोली वीर । कछु शंकामत करो शरीर ॥ ४२ ॥ मेरे बहु लछमी भंडार । रत्न जहाज भरो इक सार ॥ ऐसे कह सब गृह में गये । वस्त्राभूषण सब को दये ॥४३॥ षटरस व्यंजन भोजन करे । तासे सबहि कष्ट परिहरे ॥ कर सन्मान यानभर दये । सर्व लोग प्रमुदित मन भये ॥ ४४ ॥ बन्धु दत्त विनवै कर सेव । अब तुम चलो देश को देव ॥ धर्म धुरंधर कुल आधार । तुम सम नहीं पुरुष संसार ॥ ४५ ॥ तात मात के दर्शन करो । यासे सकल कष्ट परिहरो ॥ अरु भावज से विनती करी । सुन धुनि सो बोली गुण भरी ॥ ४६ ॥ अब प्रिय जिय कीजे सत भाव । देखैं कमल श्री के पांव ॥ अरु सब मिल जु कही हठ बात । भविक दत्त तब मानी भ्रात ॥ ४७ ॥ वनिता सहित चढ़ो सो जहाज । त्रिय बोली भूली प्रिय साज ॥ देव अनर्घ दिया संदूक । वस्त्राभरण भरे गई चूक ॥ ४८ ॥ सुनी धनी वाणी निज त्रिया । ऋद्धि सिद्धि बिन कम्पो हिया ॥ भविक दत्त आतुर हो धाय । नगर मध्य सो पहुंचो जाय ॥ ४९ ॥ बन्धुदत्त चित चिंतो क्रूर । भ्रातहि छांड़ गयो पुनि दूर ॥ वणिकों सहित मंत्र तिन कियो । द्रव्यहि दान मन वांछित

दियो ॥ ५० ॥ पहुंचे जाय समुद के तीर । निज न-
गरी आये घर धीर ॥ मिले सबहि जन गण अरुतात
मात मिलो प्रमुदित मन गात ॥५१॥ देख अपूर्व वस्तु सं-
योग । भये सर्व विस्मय युत लोग ॥ अरु सुन्दरि घर
भीतर लई । रूप श्री आनंदित भई ॥ ५२ ॥ ताहि देख
सब पुर नर नारी । कोई नहीं तास उनहारी ॥ माता
बन्धु दत्त से कहै । यह सुन्दरि दुःखित क्यों रहै ॥५३॥
कौन नगरी किस की यह धिया । किन उपकार सुतुम
पर किया ॥ सुन ध्वनि बन्धुदत्त मुखइसो । रत्न द्वीप
सागर में वसो ॥ ५४ ॥ पृथ्वी पाल नृपति की सुता ।
राजा दई हमें गुण युता ॥ मात तात गृह की सुधि
करै । अखिल देख धीर नहिं धरै ॥ ५५ ॥ हम तुम वि-
नना कियो विवाह । सुन ध्वनि सो आनंदो साह ॥
ऐसे ही सब साथिन कही । तब सब के मन आई
सही ॥ ५६ ॥ सुन सब के मन भयो उछाह । कीजे बं-
धुदत्त का व्याह ॥ शोध घड़ी पंडित ने कही । व्याह
करो तिन दूजे सही ॥ ५७ ॥ कामिन गावें मंगल चार
विविध भांति दीनी ज्योंनार ॥ कुंवर रही मंदिर सत
खनै । निंदि कर्म मुख जिनवर भनै । ५८ ॥ कर सा-

हम दृढ़ दये किवार । त्यागे तिलक ताम्बूलाहार ॥ ऐसे यहां कथांतर होइ । भविक दत्त सुधि कहै न कोइ ॥ ५९ ॥ भविक दत्त नगरी में गयो । सब सामग्रीले आश्चयो ॥ देख शून्य थल लई पछार । मुख जंपे धिक् २ संसार ॥ ६० ॥ तब वहदेव भयो प्रत्यक्ष । भविक दत्त हम तुम्हरी पक्ष ॥ अब तुम हम को आज्ञा देव । पुजवों मन वांछित करसेव ॥ ६१ ॥ भविक दत्त यह कही निदान । पहुंचो जाय मात के थान ॥ देव सुभग बहु-तीनो शाज । रत्न पटाम्बर गज अरु बाज ॥ ६२ ॥ चढ़ि विमानमें पहुंचो तहां । कमल श्री पौढ़ी थी जहां देख विभूति पुत्र की सोइ । सत्य किधों यह स्वप्न होइ ॥ ६३ ॥ भविक दत्त बोलो वर वीर । मिलो माय मोको धरधीर ॥ सुने वचन तब संशय गयो । गह भर अंक पुत्र भेटयो ॥ ६४ ॥ बंधु दत्त जो कीनो पाप । कहा सर्व माता से आप ॥ माता बोली कर उत्साह । तासे बंधु दत्त करे व्याह ॥ ६५ ॥ सो तिन चित्त परि-व्रत धरै । तासे मूढ़ व्याह विधि करै ॥ सो तो बहू तु-म्हारी आइ । ताको देहु पारनो जाइ ॥ ६६ ॥ वस्त्राभ-रन बहू के जिते । माता को पहिराये तिते ॥ अरु

निज कर की मुंदरी दई। बैठ सुखासन सों तहं गई ॥ ६७ ॥ कमल श्री आवत ही देख। रूप श्री मन भई विशेष ॥ मिलीं परस्पर जिय सुख भयो। कर सन्मान बैठ का दयो ॥ ६८ ॥ कमल श्रीमंदिर पर गई। वचन सुनाय सो ठाढ़ी भई ॥ तव तिन जानी अपनी दास। पड़ी पांव दूढ़ लई उसास ॥ ६९ ॥ अरु सुत को आगमन सुनाइ। दे भोजन गृह पहुंची जाय ॥ भविक दत्त राजा पर गयो। मिल राजा आनंदित भयो ॥ ७० ॥ तबै राय सुन दो वृत्तंत। क्रोधन सको सम्हारि महंत किंकर पठये पहुंचे जाय। बंधुदत्त को लाये धाइ ॥७१॥ आये लोग संग के सबै। पूंछा तिन्हें सौंह दे तबै ॥ तिन राजासे सांची कही। सब धन भविकदत्तको सही ॥७२॥ राजा सुनत कोप अति कियो। बन्धुदत्त कोदण्ड जु दियो ॥ अवनिसुता पुनि दीनी राइ। कर विवाह मन्दिर पहुंचाइ ॥७३॥ भविकदत्त माता गुण भरी। पुत्र लयो मैंने शुभ घरी। मैं व्रत कियो पंचमीं तनो। जाते भयो अतुल धनधनो ॥ ७४ ॥ तिन भी धुनि सुनके व्रत लियो। भाव सहित विधिपूर्वक कियो ॥ उद्यापन विधिपूरण करी। जाते भूरि लच्छि विस्तरी ॥७५॥ दोयर

सुत तिनके भये । नित २ करत महोत्सव नये ॥ भवि-
कदत्त दीक्षा व्रत लयो । दशवें स्वर्गजायसुर भयो ॥१६॥
भुगते भोग परम सुखनयो । दयावन्त फिर मुक्तहिगयो॥
श्रेणिक सुनत सबहि व्रत करो । तिन सब घोर दुःख
परिहरो ॥१७॥ और जो करे भावसे कोय । ताको स्वर्ग
मुक्ति सुख होय ॥ सत्रह सौ सत्तावनजान । मिती पौष
सुदि दशमी मान ॥१८॥ हली कन्तपुरमें रचिकथा । श्री
सुरेन्द्र भूषण मुनि यथा ॥ श्रावक पढ़ो सुनो धरध्यान ।
जासे होय परम कल्याण ॥१९॥

इति श्रीऋषिपञ्चमी व्रतकथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

८८—सुगन्ध दशमी व्रत कथा ॥

चौपाई ॥

वर्द्धमान वंदो जिनराय । गुरु गौतम वंदों सुखदाय॥
सुगन्ध दशमी व्रत की कथा । वर्द्धमान सुप्रकाशी यथा
॥१॥ मगधदेश राजगृह नाम । श्रेणिक राज करे अभि-
राम ॥ नाम चेलना गृह पटरानि । चन्द्ररोहिणी रूप
समान ॥२॥ नृप बैठो सिंहासन परे । बनमाली फल
लायो हरे ॥ कर प्रणाम वच नृपसे कहो । चित्तप्रमोद
से ठाड़ो रहो ॥३॥ वर्द्धमान आये जिन स्वामि । जिन जीतो

उद्यम अरिकाम॥ इतनी सुनत नृपति उठ चलो। पुरजन युतदलबल से भलो ॥ ४ ॥ समो शरण बन्दे भगवान। पूजा भक्ति धार बहुमान ॥ नरकोठा बैठो नृप जाय। हाथ जोड़ पूछे शिरनाय ॥ ५ ॥ सुगन्ध दशमी व्रतफल भाषि। ता नर की कहिये अब साखि ॥ गणधर कहैं सुनौं मगधेश। जम्बूद्वीप विजयार्द्ध देश ॥६॥ शिवमन्दिर पुर उत्तर श्रेणी। विद्याधर प्रीतंकर जैनी ॥ कमलावती नारि अतिरूप। सुर कन्या से अधिक अनूप ॥ सागर दत्त वसे तहां साह। जाके जिन व्रतमें उत्साह ॥ धनदत्त वनिता गृहकही। मनोरमा ता पुत्री सही ॥ ८ ॥ सुगु-प्ताचार्य गृह आइयो। देख मुनीन्द्र दुःख पाइयो ॥ क-न्यामुनिकी निन्दा करी। कुछ मनमें नहिं शंका धरी ॥९॥ नग्न गात दुर्गन्ध शरीर। प्रगट पने देही नहिंचीर॥ मुख ताम्बूल हतो मुनि अंग। मानो सुखको कीनो भंग ॥१०॥ भोजन अन्तराय जब भयो। मुनि उठजाय ध्यान वन दयो ॥ समताभाव धरै उरमांहिं। किञ्चित खेदचित्त में नाहिं ॥११॥ बीत अवधिसमय कछु गयो। मनोरमा का काल सुभयो ॥ भई गधी पुनि कुकरी ग्राम। अपर ग्राम भई सूकरी नाम ॥ १२ ॥ मगध सुदेश तिलकपुर

जान। विजयसेन तहं का नृप मान॥ चित्र रेखा ता रानी कही। ता पुत्री दुर्गन्धा भई॥ १३॥ एक समय गुरुवन्दन गयो। पूजा कर विनती को ठयो॥ मोपुत्री दुर्गंध शरीर। कहो भवान्तर गुण गंभीर॥१४॥ राजा बचन मुनीश्वर सुने। मुनि वृतान्त राय से भने॥ सब वृतान्त हाजिलो जान। मुनि राजा से कहो बखान॥१५॥ सुन दुर्गंधा जोड़े हाथ। मो पर कृपा करो मुनि नाथ॥ ऐसा व्रत उपदेशो मोहि। यासे तनु निरोग अबहोहि॥ १६॥ दयावन्त बोले मुनिराय। सुन पुत्री व्रत चित्त लगाय॥ समता भाव चित्त में धरो। तुम सुगंध दश-मीव्रत करो॥ १७॥ यह व्रत कीजे मन वचकाय। यासे रोग शोक सब जाय॥ दुर्गंधा विनवे निकुलाय। कहि-ये सविधि महा मुनिराय॥ १८॥ ऐसे वचन सुने मुनि जवे। तब बोले पुत्री सुन अवे॥ भादों शुक्ल पक्ष जब होय। दशमी दिन आराधो सोय॥ १९॥ चारों रसकी धारा देव। मन में राखो श्री जिनदेव॥ शीतलनाथ की पूजा करो। मिथ्या मोहदूर परिहरो॥ २०॥ व्रत के दिन छोड़ो आरंभ। यासे मिटे कर्म का दंभ॥ या के करत पाप क्षय जाय। सो दश वर्ष करो मन लाय

॥ २१ ॥ जब यह व्रत संपूरण होय । उद्यापन कीजे चित जोय ॥ दश श्री फल अमृत फल जान। नीबू अरस दा फल आन ॥ २२ ॥ दश दीजे पुस्तक लिखवाय । यह विधि सब मुनि दई बताय ॥ विधि सुन दुर्गंधा व्रत लयो । सब दुर्गंधतलक्षण गयो ॥ २३ ॥ व्रत कर आयु जो पूरण करी । दशवें स्वर्ग भई अप्सरी ॥ जिन चैत्यालय बंदन करे । सम्यक भाव सदा उर धरे ॥ २४ ॥ भरत क्षेत्र तहं मगध सुदेश । भूति तिलकपुर वसे नरेश ॥ राजा महीपाल तहां जान । मदन सुन्दरी त्रिय रखा-न ॥ २५ ॥ दशवें दिव से देवी आन । ताके पुत्री भई निदान ॥ मदना बलीनाम धरतास । अति सुरूपतनु सकल सुवास ॥ २६ ॥ बहुल बात को करे बखान । सु-र कन्या नाता उन्मान ॥ को सांवी पर मदन नरेंद्र । रानी सती करे आनंद ॥ २७ ॥ पुरुषोत्तम सुत सुन्दर जान । विद्यावंत सुगुण की खान ॥ जो सुगंध मदना-वलि जाय । सो पुरुषोत्तम को पर नाय ॥ २८ ॥ राजा मदन सुंदरी बाल । सुख से जात न जानो काल ॥ एक दिवस मुनिवर वंदियो । धर्म श्रवण मुनि वर पर कियो ॥ २९ ॥ हाथ जोड़ पूछे तब राय । महा मुनींद्र कहो

समझाय ॥ मोगृहरानी मदनावली । ता शरीर और-मतामली ॥ ३० ॥ कौन पुण्य से सुभग सुरूप । सुर व-निता से अधिक अनूप ॥ राजा वचन मुनीश्वर सुने । सब वृतांत राय से भने ॥ ३१ ॥ जैसे दुर्गंधाव्रत लहो । तैसी विधि नरपति से कह्यो ॥ सुने भवांतर जोड़ि हाथ दिक्षाव्रत दीजे मुनिनाथ ॥ ३२ ॥ राजा ने जब दिक्षा लई । रानी तबै अर्जिका भई ॥ तप कर अंत स्वर्गको गई । सोलम स्वर्गप्रतेंद्र सो भई ॥ ३३ ॥ वाइस सागर काल जो गयो । अंत काल ता दिवसे चयो ॥ भरत सुक्षेत्र मगध तहंदेश । वसुधा अमर केतुपुर वेस ॥ ३४ ॥ ता नृप ग्रेह जन्म उन लह्यो । जो प्रतेंद्र अच्युत दिव कह्यो ॥ कनिक केतु कंचन द्युति देह । वनिता भोग करे शुभ ग्रेह ॥ ३५ ॥ अमर केतु मुनि आगम भयो । कनिक केतु तहं वन्दन गयो ॥ सुनो सुधर्म श्रवण सं-योग । तजे परिग्रह अरु भव भोग ॥ ३६ ॥ घाति घा-तिया केवल लयो । पुन अघातिहनि शिव पुर गयो ॥ व्रत सुगंध दशमी विख्यात । ताफल भयो सुरभियुत गात ॥ ३७ ॥ यह व्रत पुरुष नारि जो करे । सो दुःख संकट भूलि न परे ॥ शहर गहेली उत्तम वास । जैन धर्म

को जहां प्रकाश ॥ ३८ ॥ सब श्रावक व्रत संयम धरैं। पूजा दान से पातक हरैं ॥ उपदेशी विश्व भूषण सही। हेमराज पंडित ने कही ॥ ३९ ॥ मन वच पढ़े सुने जो कोय। ताको अजर अमर पद होय ॥ याते भविजन पढ़ो त्रिकाल। जो छूटें विधि के भ्रम जाल ॥ ४० ॥

इति श्रीसुगंधदशमीव्रतकथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

८९ अनंत चौदश व्रत कथा ॥

दोहा—अनंत नाथ वन्दों सदा, मन में कर बहु भाव।
सुर असुर सेवत जिन्हैं, होय मुक्ति परचाव ॥१॥

॥ चौपाई ॥

जंबू द्वीप द्वीपोंमें सार। लख योजन ताका विस्तार॥ मध्य सुदर्शन मेरु बखान। भरत क्षेत्र ता दक्षिण मान ॥ २ ॥ मगध देश देशों शिरमणी। राजगृह नगरी अतिबनी ॥ श्रेणिक महाराज गुणवंत। रानी चेलना गृह शोभंत ॥ ३ ॥ धर्म हंस गुण तेज अपार। राजा राय महागुण सार ॥ एक दिवस विपुलाचल वीर। आये जिन वर गुण गंभीर ॥ ४ ॥ चार ज्ञान के धारक कहे गौतम गणधर सों संग रहे ॥ छह ऋतु के फल देखे न-

यन । वन माली ले चालो ऐन ॥ ५ ॥ हर्ष सहित वनं माली भयो । पुष्प सहित राजा परगयो ॥ नमंस्कार कर जोड़ हाथ । मोपर कृपा करो नर नाथ ॥ ६ ॥ वि-पुलाचल उद्यान कहंत । महा मुनीश्वर तहां बसंत ॥ सुन राजा अति हर्षित भयो । बहुत दान माली को दयो ॥ ७ ॥ सप्त ध्वनि बाजे वाजंत । प्रजा सहित रा-जा चालंत ॥ देप्रदक्षिणा बैठो राव । जिनवर देखकरो चित चाव ॥ ८ ॥ द्वै विधि धर्म कहो समझाय । यासे पाप सर्व जर जाय ॥ खग तहं आयो एक तुरंत । सुं-दर रूप महा गुणवंत ॥९॥ नमस्कार जिनवर को करो। जय जय कार शब्द उच्चरो ॥ ताहि देख आश्चर्यितभ-यो । राजा श्रेणिक पूछत भयो ॥ १० ॥ सेना सहित महा गुण खानि । को यह आयो सुंदर वाणि ॥ याको बात कहो समझाय । ज्ञानवंत मुनिवर तुम आय ॥११॥ गौतम बोले बुद्धि अपार । विजया नगर कहो अति-सार ॥ मनो कुंभ राजा राजंत । श्रीमंती रानी को कंत ॥ १२ ॥ ताका पुत्र अरिंजय नाम । पुण्यवंत सुन्दर गुणधाम ॥ पूर्व तप कीनो बन जोय । ताका फल भुगते शुभ सोय ॥ १३ ॥ ताकी कथा कहूं विस्तार । जंबू द्वीप

द्वीपों में सार ॥ भरत क्षेत्र तामें सुख कार । कोशलदेश विराजे सार ॥ १४ ॥ परम सुखद नगरी तहंजान। विप्र सोम शर्म्मा गुण खान ॥ सोमिल्या भामिन ता कही । दुख दरिद्र की पूरित मही ॥ १५ ॥ पूर्व पाप किये अ-तिघने । ताको दुःख भुगत ही बने ॥ सुन राजा याका वृत्तांत । नगर २ सो भ्रमें दुःखान्त ॥ १६ ॥ देश विदेश फिरे सुख आश । सोहु न पावे सुक्खनिवास ॥ भ्रमत २ सो आयो तहां । समो शरण जिनवर को जहां ॥ १७॥

॥ दोहा ॥

अनंतनाथ जिन राज का, समो शरण तिहिंवार ॥
सुर नर अति हर्षित भये, देख महा द्युति सार ॥१८॥

॥ चौपाई ॥

विप्र देख अति हर्षित भयो । समो शरण वन्दन को गयो ॥ वन्दि जिनेश्वर पूछे सोय । कहा पाप मैं कीनो होइ ॥ १९ ॥ दरिद्र पीड़ा दहे शरीर । सो तो व्याधि हरो गंभीर ॥ गण धर कहें सुनो द्विज राय । अनन्त व्रत कीजे सुख दाय ॥ २० ॥ तबे विप्र बोलोकर भाय । किस विधि होइ सो देहु बताय ॥ किस प्रकार

या व्रत को करों। कहा विधान चित्त में धरों ॥ २१ ॥ भादों मास शुक्ल की खान। चौदश शुक्ल कही सुख दान ॥ कर स्नान शुद्ध हो जाय। तब पूजे जिनवर सुखदाय ॥२२॥ गुरु वन्दना करे चितलाय। या विधि से व्रत लेय बनाय ॥ त्रिकाल पूजे श्री जिन देव। रात्रि जागरण कर सुख लेव ॥२३॥ गीतरुनृत्य महोत्सवजान। धारा जिनवर करो बखान ॥ वर्ष चतुर्दश विधिसेधरे। ता पीछे उद्यापन करे ॥ २४ ॥ करे प्रतिष्ठा चौदह सार। या से पाप होइ जर छार ॥ झारी धारी अधिक अनूप। चरण कलश देवे शुभ रूप ॥ २५ ॥ दीवट झालर संकल माल। और चंदोवे उत्तम जाल ॥ छत्र सिंहासन विधि से करे। ताते सर्व पाप परिहरे ॥ २६ ॥ चार प्रकार दान दीजिये। याते अतुल सुक्ख लीजिये ॥ अन्तावस्था ले संन्यास। ताते मिले स्वर्ग का बास ॥ २७ ॥ उद्यापन की शक्ति न होय। कीजे व्रत दूनो भविलोइ ॥ विप्र किया व्रत विधि से आय। सर्व दुःख तसु गयो विलाय ॥ २८ ॥ अंतकाल धरके संन्यास। ताते पायो स्वर्ग निवास ॥ चौथे स्वर्ग देव सो जान। महा ऋद्धिता के सो बखान ॥ २९ ॥ विजयार्द्धगिरि उत्तम ठौर। कांचीपुर पत्तन शि

रसौर ॥ राजा तहं अपराजित धीर । विजया तास प्रिया गम्भीर ॥ ३० ॥ ताका पुत्र अरिंजय नाम । तिन ग्रह आय करो सो प्रणाम ॥ कंचन मयसिंहासन आन तापर भूप बैठौ सुख खान ॥ ३१ ॥ व्योम पटल बिनशत लख संत । उपजो चित वैराग महंत ॥ राज पुत्र को दयो बुलाय । आप लई दीक्षा शुभ भाय ॥ ३२ ॥ सही परीषह दृढ चित धार ॥ ताते कर्म भये अति क्षार ॥ घाति घातिया केवल भयो । सिद्ध बुद्ध सो पद निर्मयो ॥ ३३ ॥ रानी ने व्रत कीनो सही । देव देह दिव अच्युत लही ॥ तहां सु सुख भुगते अधिकाय । तहां से आय भयो नरराय ॥ ३४ ॥ राज ऋद्धि पाई शुभ सार । फिर तप कर विधि कीने क्षार ॥ तहां से मुक्ति पुरी को गयो । ऐसा तिन व्रत का फल लयो ॥ ३५ ॥ ऐसा व्रत पाले जो कोइ । स्वर्ग मुक्ति पद पावे सोइ ॥ विनय सागर गुरु आज्ञा करी । हरि किल पाठ चित्त में धरी ॥ ३६ ॥ तब यह कथा करी मन लाय । यथा शास्त्र में वरणी भाय ॥ विधि पूर्वक पाले जो कोइ । ताको अजर अमर पद होइ ॥ ३७ ॥

इति श्री अनंत चौदश व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

१० रत्नत्रयव्रत कथा।

दोहा—अरहं नाथ को वन्दि के, वन्दों सरस्वति पांय॥
रत्न त्रय व्रत की कथा, कहूं सुनो मनलाय॥ १॥
चौपाई॥ जंबू द्वीप भरत शुभ क्षेत्र। मगध देश सुख सम्पति हेत॥ राज गृह तहां नगर बसाय। राजा श्रेणिकराज कराय॥ २॥ विपुला चल जिन वीर कुंवार केवल ज्ञान बिराजत सार॥ माली आय जनावो दयो तत्क्षण राजा वंदन गयो॥ ३॥ पूजा वंदन कर शुभ सार। लागो पूछन प्रश्न विचार॥ हे स्वामी रत्न त्रय-सार। व्रत कहिए जैसा व्यवहार॥ ४॥ दिव्य ध्वनि भगवान बताय। भादों सुदि द्वादशि शुभ भाय॥ कर स्नान स्वच्छ पटश्वेत। पहिनो जिन पूजन के हेत॥ ५॥ आठो द्रव्य लेय शुभ जाय। पूजो जिनवर मन वचकाय॥ जीर्णान्यूतन जिनके ग्रेह। बिंब धरावो तिन में तेह॥ ६॥ हेम रूप्य पीतल के यंत्र। तांवा यथा भोज के पत्र॥ यंत्र करो बहुमन थिर देउ। रत्नत्रय के गुण लिख लेउ॥ ७॥ निश्शंकादि दर्शन गुण सार। संशय रहित सो ज्ञान अपार॥ अहिंसादि महा व्रत

सार। चारित्र के ये गुण हैं धार ॥ ८ ॥ ये तीनों के गुण हैं आदि। इन्हैं आदि जेते गुण वादि ॥
शिव मार्ग के साधन हेत। ये गुण धारे व्रती सुचेत॥९॥
भादों मांघ चैत्र में आन। तीनो काल करो भविआन॥
या विधि तेरह वर्ष प्रमाण। भावना भावे गुणहि नि-धान ॥ १० ॥ लवंगादि अष्टोत्तर आन। जपो मंत्र मन कर श्रद्धान ॥ पुनि उद्यापन विधि जो एह। कलश चमर छत्र शुभ देह ॥ ११ ॥ संग चतुर्विधि को आहार। वस्त्राभरण देउ शुभसार ॥ बिंब प्रतिष्ठा आदि अपार। पूजो श्री जिन हो भव पार ॥ १२ ॥ ॥ दोहा ॥
इस विधि श्री सुख धर्म सुन, भलो चित्त धर भाय ॥
कौने फल पायो प्रभू, सो भाषा समझाय ॥ १३ ॥

॥ चौपाई ॥

जंबू द्वीप अलंकृत हेर। रह्यो ताहि लवणोदधि घेर ॥ मेरु से दक्षिण दिशि है सार। है सो विदेहधर्म अवतार ॥ १४ ॥ कच्छवती सुदेश तहांवसे। वीत शोक पुर तामें लसे ॥ दैश्रिव नाम तहां का राय। करे राज सुर पति समभाय ॥ १५ ॥ वन माली ने जनाद्यो दयो। विपुल बुद्धि प्रभुवन में ठयो ॥ इतनी सुन नृप वंदन

गयो । दान बहुत माली को दयो ॥ १६ ॥ हे स्वामी रत्नत्रय धर्म । मोसो कहौ मिटै सब भर्म ॥ तव स्वामी ने सब विधि कही । जो पहिले सो प्रकाशी सही ॥१७॥ पंचामृत अभिशेक सुठयो । पूजा प्रभु की कर सुखलयो॥ जा गिरना दिठयो बहु भाय । इस विधि व्रत कर विस्निव राय ॥ १८ ॥ भाव सहित राजा व्रत करो । धर्म प्रतीत चित्त अनुसरो ॥ षोड़श भावना भावत भरो । अंत समाधि मरण तिन करो ॥ १९ ॥ गोत्र तीर्थंकर वांधो सार । जो त्रिभुवन में पूज्य अपार ॥ सर्वार्थ सिद्धि पहुंचो जाय । भयो तहां अहमेंद्र सुभाय ॥ २० ॥ हस्त मात्र तनु ऊंचो भयो । तेंतिस सागर आयु सोलयो ॥ दिव्य रूप सुख को भंडार । सत्य निरूपण अवधि बिचार ॥ २१ ॥ सो धमेन्द्र विचारी घरी । यच्छेश्वर को आज्ञा करी ॥ वेग देश निर्माप्यो जाय । थापो सुधरा पुर अधिकाय ॥२२॥ कुंभपुर राजा तहांव से । देवी प्रजावती तिस लसे ॥ श्री आदिक तहां देवी आय । गर्भ से सोधना कीनी जाय ॥ २३ ॥ रत्न वृष्टि नृप अंगन भई । पन्द्रह मासलों वरसत गई ॥ सर्वार्थ सिद्धि से सुर आय । प्रजावती सुकुच्छ उपजाय ॥ २४ ॥

मलिल नाथ सो नाम को पाय । द्वैज चंद्रसम बढ़त सुभाय ॥ अब विवाह मंगल विधि भई । तब प्रभु चित विरागता लई ॥ २५ ॥ दिक्षा धर वन में प्रभु गये । घाति कर्म हनि निर्मल ठये ॥ केवल ले निर्वाण को जाय । पूजा करी सुरेशो आय ॥ २६ ॥ यह विधान श्रेणिक ने सुनो । व्रत लीने चित अपने गुणो ॥ भक्ति विनय कर उत्तम भाय । पहुंचे अपने गृह को आय ॥ २७ ॥ या विधि जो नर नारी करे । सो भवसागर निश्चय तरे ॥ नलिन कीर्ति मुनि संस्कृत कही । ब्रह्म-ज्ञान भाषा निर्नही ॥ २८ ॥

॥ इति श्री रत्नत्रयव्रतकथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

९१ दशलक्षणव्रतकथा ।

॥ दोहा ॥

प्रथम वन्दि जिनराज के. शारद गण धर पांय ।
दश लक्षण व्रत की कथा, कहूं अगम सुख दाय ॥ १ ॥

॥ चौपाई ॥

विपुलाचल श्री वीर कुंवार । आये भवभंजन भरतार ॥ सुन भूपति तहां वंदन गयो । सकल लोक मिलि आनन्द भयो ॥ २ ॥ श्री जिन पूजे मनधर भाव । स्तुतिकरी ओड़कर

भाव॥ धर्म कथा तहां सुनी विचार। दान शील तप भेद अपार ॥३॥ भव दुःख घायक दायक शर्म। भाषो प्रभु दश लक्षण धर्म॥ ताको सुन श्रेणिक रुचिधरी। गुरु गौतम से विनती करी ॥४॥ दश लक्षण व्रत कथा विशाल। मुझ से भाषो दीन दयाल॥ बोले गुरु सुन श्रेणिक चंद्र। दिव्यध्वनि कहो वीर जिनेन्द्र ॥५॥ खंड धातु की पूर्व भाग। मेरु थकी दक्षिण अनुराग॥ सीतोदाउ पकंठी सही। नगरी विशालाक्ष शुभ कही ॥६॥ नाम प्रीतं कर भूपति वसे। प्रीयकरी रानी तसु लसे॥ मृगांकरेखा सुता सुजान। मति शेखरनामा सो प्रधान॥७॥ शशि प्रभा ताकी वरनारि। सुता काम सेना निरधार॥ राज सेठ गुण सागर जान। शील सुभद्रा नारि वखान॥८॥ सुता मदन रेखा तसु खरी। रूप कला लक्षण गुणभरी॥ लक्षण भद्र नामा कुतवाल। शशि रेखा नारी गुण माल॥९॥ कन्या तास धरे रोहनी। ये चारों वरणी गुरु तनी॥ शास्त्र पढ़ें गुरु पास विचार। स्नेह परस्पर बढ़ा अपार॥१०॥ मास बसंत भयो निरधार। कन्या चारो वनहि मंझार॥ गईं मुनीश्वर देखे तहां। तिन को बंदन कीनो वहां

॥ ११ ॥ चारों कन्या मुनि से कही । त्रिया लिंग ज्यों छूटे सही ॥ ऐसा व्रत उपदेशो अवैं । यासे नर तनु पावे सवै ॥ १२ ॥ बोले मुनि दश लक्षण सार । चारों करो होहु भवपार ॥ कन्या बोलीं किम् कीजिये । किस दिन से व्रत को लीजिये ॥ १३ ॥ तब गुरु बोले वचन रसाल । भादों मास कहो गुण माल ॥ धवल पंचमी दिन से सार । पंचामृत अभिषेक उतार ॥ १४ ॥ पूजार्चन कीजे गुण माल । जिन चौबीस तनी शुभसाल ॥ उत्तम क्षमा आदि अति सार । दशमो ब्रह्मचर्य गुणधार ॥ १५ ॥ पुष्पांजलि इस बिधि दीजिये ॥ तीनों काल भक्ति कीजिये ॥ इस बिधि दश वासर आचरो । नियमित व्रत शुभ कार्य करो ॥ १६ ॥ उत्तम दश अनशन कर योग । मध्यम व्रत कांजी का भोग ॥ भूमि शयन कीजे दश राति । ब्रह्मचर्य पालो सुख पांति ॥ १७ ॥ इस बिधि दश वर्ष जब जांय । तब तक व्रत कीजे धर भाय ॥ फिर व्रत उद्यापन कीजिये । दान सुपात्री को दीजिये ॥ १८ ॥ औषधि अभय शास्त्र आहार । पंचामृत अभिषेक हिसार ॥ माड़लो रचि पूजा कीजिये ।

छत्र चमर आदिक दीजिये ॥ १९ ॥ उद्यापन की शक्ति न होय । तो दूनों व्रत कीजे लोय ॥ पुण्य तनो संचय भंडार । पर भव पावे मोक्ष सो द्वार ॥ २० ॥ तब चारों कन्यों व्रत लायो । मुनिवर भक्ति भावलखि दियो । यथा शक्ति व्रत पूरण करो । उद्यापन विधिसे आचरो ॥२१॥ अंतकाल वे कन्या चार । सुमरण करो पंच नवकार ॥ चारों मरण समाधि सुकियो । दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥ २२ ॥ षोड़स सागर आयु प्रमाण । धर्म ध्यान सेवें तहां जान ॥ सिद्ध क्षेत्र में करें विहार । क्षायक स-म्यक उदय अपार ॥ २३ ॥ सुभग अवन्ती देश विशाल उज्जयनी नगरी गुण माल ॥ स्थूल भद्र नामा नरपती । रानी चारुसो अति गुणवती ॥ २४ ॥ देव गर्भ में आये चार । ता रानी के उदर मझार ॥ प्रथम सुपुत्र देव प्रभु भयो । दूजो सुत गुण चन्द्रभाषियो ॥ २५ ॥ पद्म प्रभा तीनों बलवीर । पद्म स्वारथी चौथो धीर ॥ जन्म महोत्सव तिन को करो । अशुभ दोषगृह दोनों हरो ॥ २६ ॥ निकल प्रभा राजा की सुता । ते चारों परनी गुण युता । प्रथम सुता सो ब्रह्मी नाम । दुतिय कुमा री सो गुण धाम ॥ २७ ॥ रूपवती तीजी सुकुमाल ।

मृगाल चौथी सो गुणमाल ॥ करो व्याह घर को आइयो । सकल लोक घर आनन्द लियो ॥ २८ ॥ स्थूल भद्रराजा इकदिना । भोग विरक्त भयो भवतना ॥ राजपुत्र को दीनो सार । वन में जाय योग शुभ धार ॥ २९ ॥ तप कर उपजो केवल ज्ञान । वसु विधि हनि पायो निर्वाण ॥ अब वे पुत्र राजको करें । पुण्य का फल पावें ते धरें ॥ ३० ॥ चारों बांधव चतुर सुजान । अहिनिशि धर्म तनो फल मान ॥ एक समय विरक्त सो भये । आतम कार्य्य चिन्तवत ठये ॥३१॥ चारों बांधव दिक्षा लई । वन में जाय तपस्या ठई ॥ निज मन में चिद्रूपाराधि । शुक्ल ध्यान को पायो साधि ॥ ३२ ॥ सर्व विमल केवल ऊपनो । सुख अनन्त तब ही सो ठनो ॥ करो महोत्सव देव कुमार । जय २ शब्द भयो तिहिवार ॥ ३३ ॥ शेष कर्म निर्बल तिन करे । पहुंचे मुक्ति पुरी में खरे ॥ अगम अगोचर भव जल पार । दश लक्षण व्रत के फल सार ॥ ३४ ॥ वीर जिनेश्वर कही सुजान । शीतल जिन के बाड़े मान ॥ गौतम गण धर भाषी सार । सुनश्रेणिक आये दरबार

॥ ३५ ॥ जो यह व्रत नर नारी करे । ताके गृह सम्पति अनुसरे ॥ भट्टारक श्री भूषण वीर । तिन के चेला गुण गंभीर ॥ ३६ ॥ ब्रह्मज्ञान सागर सुविचार । कही कथा दश लक्षण सार ॥ मन बचन व्रत पाले जोइ । मुक्ति वरांगणा भोगे सोइ ॥ ३७ ॥

॥ इति श्रीदशलक्षणव्रतकथाभाषासम्पूर्णम् ॥

९२ मुक्तावली व्रत कथा ॥

॥ दोहा ॥

ऋषभनाथ के पद नमों, भविसरोज रविजान ।
मुक्तावलिव्रत की कथा, कहूं सुनो धरध्यान ॥१॥

मगध देश देशों में प्रधान । तामें राज गृह शुभथान ॥ राज्य करे तहां श्रेणि कराय । धर्म वंत सब को सुख दाय ॥ २ ॥ ता गृह नारि चेलना सती । धर्म शील पूरण गुण वती ॥ इकदिन समो शरण महावीर । आयो बिपुला चल पर धीर ॥ ३ ॥ सुन नृप अत्यानंदित भयो । कुटुम सहित वंदन को गयो ॥ पूजा कर बैठो सुख पाय । हाथ जोड़कर अर्ज कराय ॥ ४ ॥ हे प्रभु मुक्तावलि व्रत कहो । यह कर कौने क्या फल लहो ॥ तब गौतम बोले हर्षाय । सुनो कथा मुक्तावलि राय

॥५॥ याही जंबू द्वीप मझार। भरत क्षेत्र दक्षिण दिशि सार ॥ अंगदेश सोहे रमनीक। नगर बसे चंपापुर ठीक ॥ ६ ॥ नगर मध्य एक ब्राह्मण बसे। नाम सोम शर्मा तसुलसे ॥ ता गृह एक सुता जो भई। यौवन मदकर पूरण ठई ॥ ७ ॥ एक दिन देखे श्रीगुरु जबै। नग्न गात सो निंदितबे ॥ अति खोटे दुर्वचन कहाय । बहुत ही ग्लानि चित्त में लाय ॥८॥ ताकर महा पाप बांधियो। अवधि व्यतीते मरण जु कियो ॥ नरक जाय नाना दुख सहे। छेदन भेदन जाय न कहे ॥ ९ ॥ नरक आयु पूरी कर सोइ। भव भ्रमि द्विज गृह पुत्री होइ ॥ निर्नासिका पड़ा लिस नाम। अति दुर्गंधा देह निकाम ॥ १० ॥ कोई ढिंग आवे नहिंतहां। क्रम कर बड़ी भई सो वहां ॥ अन्न पान कर दुःखित महा। जूठन भखे कष्ट अति लहा ॥ ११ ॥ एक दिवस देखे मुनिराय। कर प्रणाम विनवे शिरनाइ ॥ कौन पाप मैं कीनो देव। मैं पायो अति दुःख अभेव ॥ १२ ॥ तब मुनिवर पूर्व भव कहे। गुरु की निन्दा से दुःख लहे ॥ तब दुर्गंधा बोले हाथ। ऐसा व्रत दीजे मोहिं नाथ ॥ १३ ॥ यासे रोग शोक सब जाय। उत्तम भव पाऊं गुरुराय ॥

तब श्रीगुर बोले हर्षाय । मुक्तावली करो मन लाय ॥ १४ ॥ तासे सर्व पाप जर जाय । सुख सम्पत्ति मिले अधिकाय ॥ तब दुर्गंधा कहे विचार । कौन भांति कीजे व्रतसार ॥ १५ ॥ तब मुनिवर इम वचन कहाइ । सुनो भेद व्रत का थितलाइ ॥ भादों सुदि सप्तमि दिन होइ। तादिन व्रत कीजे भविलोइ ॥ १६ ॥ प्रात समय जिन मंदिर जाइ । पूजा कथा सुनो मनलाइ ॥ सब आरंभ तजो दिन मान । संयम शील सजो गुण खान ॥ १७ ॥ भोर भये जिन दर्शन करो। शुद्ध अशन कीजे तब खरो॥ दूजो व्रत पूर्व वत करो । अश्विन बदि छठि पाप निहरो ॥ १८ ॥ तीजो व्रत कीजे उरधार । अश्विन बदि-तेरसि सुखकार ॥ कर उपवास पालो गुण रसी । चौथो अश्विन सुदिग्यारसी ॥ १९ ॥ पंचमव्रत कीजे मनलाइ । कार्तिकबदिबारसि सुख दाय ॥ फिर छठवां उपवास सुजान । कात्तिक शुक्ल तीज गुण खान ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनवरने कहो। कार्तिक सुदिग्यारसि शुभ लहो॥ फेर करो अष्टम व्रत लोइ । मार्ग बदि ग्यारसि जब होइ ॥ २१ ॥ नवमोंव्रत मार्ग सुदितीज। ये व्रत धर्म-वृक्ष के बीज ॥ या विधि करो नव वर्ष प्रमान । मन

वच काय शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत पूर्ण होइ नि-
दान। उद्यापन कीजे गुणवान ॥ श्री जिनवर अभिषेक
कराइ। करो माड़नो जिनगृह जाइ ॥ २३ ॥ अष्ट प्र-
कारी पूजा करो। जन्म २ के पातक हरो ॥ यथाशक्ति
उपकरण बनाय। श्री जिन धाम चढ़ावो जाय ॥२४॥
उद्यापन की शक्ति न होय। तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥
सब विधि सुन दुर्गंधा बाल। मन वच तन व्रत लीनो
हाल ॥ २५ ॥ गुरु भाषित तिन विधि से कियो। पूर्व
भव अघ पानी दियो ॥ ताफल नारि लिंग छेदियो।
सौधर्म स्वर्ग देव सो भयो ॥ २६ ॥ तहां आयु पूरण
कर सोय। चलत भयो मथुरा को लोय ॥ श्रीधर राजा
राज करंत। ताके सुत उपजो गुणवंत ॥ २७ ॥ नाम
पद्म रथ मंडित भयो। एक दिवस वन क्रीड़ा गयो ॥
गुफा मध्य मुनिवर को देख। वन्दन कर सुन धर्म वि-
शेष ॥ २८ ॥ तहां पूछे मुनिवर से सोय। तुम से अ-
धिक प्रभा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले सुन बाल।
बास पूज्य जिन दीप्ति विशाल ॥ २९ ॥ चंपापुर राजैं
जिनराज। तेज पुंज प्रभु धर्म जहाज ॥ यह सुन धर्म
विषे चित दयो। समो शरण जिन वंदन गयो ॥३०॥

नमस्कार कर दीक्षा लई। तपकर गणधर पद्वी भई॥ अष्ट कर्म इस बिधि से जार। पहुंचो शिव पुर सिद्धि मझार ॥ ३१ ॥ लखो भव्यव्रत का सो प्रभाव। राजभोगि भयो शिव पुर राव ॥ जो नर नारि करे व्रत सार। सुर सुख लहि पावे भव पार ॥ ३२ ॥

॥ इति श्रीमुक्तावलीव्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

६३ पुष्पांजलि व्रतकथा।

। दोहा।

बीर देव को प्रणमि कर, अर्चा करों त्रिकाल।
पुष्पांजलि व्रत की कथा, सुनो भव्य अघटाल ॥ १ ॥

। चौपाई।

पर्बत बिपुलाचल पर आय। समो शरण जिन वर का पाय ॥ तहं सुन राजा श्रेणि कराय। वन्दन चले प्रिया युत भाय॥ २ ॥ वन्दन कर पूछे नृप तबे। हे प्रभु पुष्पांजलि व्रत अबे ॥ मोसे कहो करों चितलाय। कोने करो कहा भई आय ॥ ३ ॥ बोले गौतम बचन रसाल। जंबू द्वीप मध्य सो विशाल। सीता नदी दक्षिण दिशि सार। मंगलाबती सुदेश अपार ॥ ४ ॥

दोहा—रत्न संचयपुर तहां, वज्रसेन नृप आय।
जयवती वनितालसे, पुत्र विहानीथाय ॥ ५ ॥

॥ चौपाई ॥

पुत्र चाह जिन मंदिर गई। ज्ञानोदधि मुनि बंदित भई ॥ हे मुनि नाथ कहो समझाय। मेरे पुत्र होइ के नाय ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

मुनि बोले हे बालकी, पुत्र होइ शुभ सार। भूमिक खंड सुसाधि है, मुक्ति तनो भरतार ॥ ७ ॥ सुन के मुनि के बचन तब, उपजो हर्ष अपार। क्रम से पूरे मासनव, पुत्र भयो शुभ सार ॥ ८ ॥ यौवन वयस सोपाय के, क्रीड़ा मंडपसार। तहां व्योम से आइयो, खग नृप रतिसवार ॥ ९ ॥ रत्न शेखर को देखकर, बहुत प्रीति उरमाहि। मेघवाहनने पांच सो, विद्या दीनी ताहि ॥१०॥

॥चौपाई॥ दोनो मित्र परस्पर प्रीति। गये मेरु बन्दन तज भीति॥ सिद्धि कूट चैत्यालय वंदि। आये पंचचित्त आनन्दि ॥ ११ ॥ ताकी सखी जनाई सार। वेग स्वयम्वर करो तयार। भूरि भूपि आये तत्काल। माल रत्न शेखर गलडाल ॥ १२ ॥ धूमकेत विद्याधर देख। क्रोध कियो मन माहिं विशेष ॥ कन्या काज दुहता धरी।

विद्याबल बहुमाया करी ॥ १३ ॥ रत्न शेखर से युद्ध सो करो। बहुत परस्पर विद्याधरी ॥ जीतो रत्न शेखर तिसबार। पाणि ग्रहण कियो व्यवहार ॥ १४ ॥ मदन मजूषा रानी संग। आयो अपने गेह असंग ॥ वज्रसेन को कर नमस्कार। माततात मन सुक्ख अपार॥ १५ ॥ एक दिना मन्दिर गिर योग। पहुंचे मित्र सहित सब लोग ॥ चारण मुनि बंदे तिहि वार। सुनो धर्म चित भयो उदार॥ ॥१६॥ हे मुनि पूर्व जन्म सम्बन्ध। तीनों के तुम कहो निब न्ध ॥ तब मुनि कहें सुनो चितधार। एक मृणालनगर सुखकार ॥ १७ ॥ नृप मंत्री एक तहां श्रुति कीर्ति। बन्धु मती वनिता अति प्रीति ॥ एक दिना वन क्रीड़ा गयो। नारी संगरमत सो भयो ॥ १८ ॥ पापी सर्प सो भक्षण करी। मंत्री मृतक लखी निजनरी ॥ भयो विरक्त जिना लय आय। दिक्षालीनी मन हर्षाय ॥१९॥ यथा शक्ति तप कुछ दिन करो। पाछे भ्रष्ट भयो तपटरो ॥ गृह आरंभ करन चित ठनो। तब पुत्री सुख ऐसे भनों ॥ २० ॥ तात जो मेरु चढ़ो किहि काज। फिर भव सिंधु पड़े तज लाज ॥ यों सुन प्रभावती बच सार मंत्री कोप कियो अधिकार ॥ २१ ॥ तब विद्या को

आज्ञा करी। पुत्री को ले वन में धरी ॥ विद्या जब वन में ले गई। प्रभावती मन चिंता भई ॥ २२ ॥ अरहंत भक्ति चित्त में धरी तब विद्या फिर आई खरी ॥ हे पुत्री तेरा चित जहां। वेग बोल पहुंचाऊं तहां ॥२३॥ पुत्री कही कैलाश के भाव। जिन दर्शन को अधिक ही चाव ॥ पूजा करके बैठी वहां। पद्मावति आई सो तहां ॥ २४ ॥ इतने मध्य देव आइयो। प्रभावती तब पूछन लयो ॥ हे देवी कहिये किस काज। आये देवी देव सो आज ॥ २५ ॥ पद्मावति बोलो बचसार। पुष्पांजलि व्रत है शुभवार ॥ भादों मास शुक्ल पंचमी। पंच दिवस आरंभ न अमी ॥२६॥ प्रोषध यथा शक्ति व्यवहार। पूजो जिन चौवीसी सार ॥ नाना विधि के पुष्प जो लाय। करो एक माला जो बनाय ॥२७॥ तीन काल वह माला देय। बहुत भक्ति से बिनय करेय ॥ जपो जाप शुभ मंत्र विचार। या विधि पंच वर्ष अवधार ॥२८॥ उद्यापन कीजे पुनि सार। चार प्रकार दान अधिकार ॥ उद्यापन की शक्ति न होइ। तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥२९॥ यह सुन प्रभावती व्रत लयो। पद्मावती कृपा कर दयो ॥

स्वर्ग मुक्ति फल का दातार। है यह पुष्पांजलि व्रतसार ॥ ३० ॥

॥ दोहा ॥

पद्मावति उपदेश से, लीनाव्रत शुभसार।
पृथ्वी परसो प्रकाशि के, कियो भक्ति चितधार ॥३१॥
तप विद्या श्रुत कीर्तिने, पाई अति जो प्रचंड।
प्रभावती व्रतखंड ने, आई सो बलवंड ॥ ३२ ॥

। चौपाई ।

बासर तीन व्यतीते जबे। पद्मावति पुनि आई तबे ॥ विद्या सब भागी तत्काल। करो संन्यास मरण तिस बाल ॥ ३३ ॥ कल्प सोलहवें मध्यलो जान। देव भयो सो पुण्य प्रवाण ॥ तहां देवने कियो विचार। मेरा तात भ्रष्ट आचार ॥ ३४॥ मैं सम्बोधों वाको अबे। उत्तम गति वह पावे तबे ॥ यही विचार देव आइयो। मरण संन्यास तात को कियो ॥ ३५ ॥ वाही स्वर्ग भयो सो देव। पुण्य प्रभाव लयो फल एव ॥ बंधुमती माता का जीव। उपजाता ही स्वर्ग अतीव ॥ ३६ ॥ दोहा ॥
प्रवावती का जीव तू, रत्नशेखर भयो आय।
माता का जो जीव है, मदन मजूषा थाय ॥ ३७ ॥

। चौपाई ।

श्रुतिकीर्ति को जीव जो तहां । मंत्री मेघ वाहन है यहां ॥ ये तीनों के सुन पर्याय । भई सो चिन्ता अंग न माय ॥ ३८ ॥ सुन व्रत फल अरु गुरु की वानि । भयो सुचित व्रत लीनो जानि ॥ अपने थान बहुरि आइयो । चक्रवर्ति पद भोग सुकियो ॥ ३९ ॥ समय पाय वैराग सो भयो । राज भार सब सुत को दयो ॥ त्रिगुप्ति मुनि के चरणों पास । दिक्षालीनी परम हुलास ॥ ४० ॥ रत्न शेखर दिक्षाली जबे । भये मेघ वाहन मुनि तबे ॥ भवि जीवों को अति सुखकार । केवल ज्ञान उपार्जों सार ॥ ४१ ॥ घाति कर्म निर्मूल सुकरे । पाछे मुक्ति पुरी अनुसरे ॥ या विधि व्रत पाले जो कोइ अजर अमर पद पावे सोइ ॥ ४२ ॥

इति श्री पुष्पांजलिव्रतकथा सम्पूर्णम् ।

९४ नंदीश्वर व्रत कथा ॥

दोहा—चरण नमों जिन राज के, जाते दुरित नशाय ।
शारद वंदो भाव से, सद्‌गुरु सदा सहाय ॥१॥

। चौपाई ।

जंबू द्वीप सुदर्शन मेरु । रहो ताहि लवणोदधि

घेर ॥ मेरु से दक्षिण भारत क्षेत्र । मगध देश सुख सम्पति हेतु ॥ २ ॥ राज गृह नगरी शुभ वसे । गढ़ मठ मंदिर सुन्दर लसे ॥ श्रेणिक राज करे सुप्रचंड । जिन लीनो अरियण परदंड ॥ ३ ॥ पटरानी चेलना सुजान । सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा मध्य बैठो सो राय। बन माली शिरनायो आय ॥ ४ ॥ दो कर जोड़ करे सो सेव । विपुलाचल आये जिन देव ॥ वर्द्धमान को आगम सुनो । जन्म सुफल चित अपने गुनो ॥ ५ ॥ राजा रानी पुरजन लोग । बंदन चले पूजने योग ॥ चलत २ सो पहुंचे तहां । समो शरण जिनवर का जहां ॥ ६ ॥ दे प्रदक्षिणा भीतर गये । वर्द्धमान के चरणों नये ॥ पुनि गण धर को कियो प्रणाम । हर्षित चित्त भयो अभिराम ॥ ७ ॥ दश विधि धर्म सुनो जिन पास। जाते गयो चित्त का त्रास ॥ दोकर जोड़ नृपति बीनयो । अति प्रमोद मेरे मन भयो ॥ ८ ॥ प्रभु दयाल अब कृपा करेव । व्रत नंदीश्वर कहो जिन देव ॥ अरु सब विधि कहिये समझाय । भाव सहित यों पूछो राय ॥ ९ ॥ अवधि ज्ञान धर मुनिवर कहैं । कौशलदेश स्वर्ग सम रहैं ॥ ताके मध्य अयोध्या पुरी । धनकण

सुखी छत्तीसो कुरी ॥ १० ॥ तिहिपुर राज करे हरिसेन त्याग तेग बल पूरण सेन ॥ वंश इक्ष्वाकु प्रगट चक्रवे । ताकी आनि खंड षट चवे ॥ ११ ॥ पाट वंध रानी नृप तीन । गंधारी जेठी गुण लीन ॥ प्रिय मित्रा रूप श्री नाम । साधे धर्म अर्थ अरुकाम ॥ १२ ॥ सुख से रहत बहुत दिन भये । ऋतु वसंत वन राजा गये ॥ जल क्रीड़ा वन क्रीड़ा करैं । हास्य विलास प्रीति अनुसरैं ॥ १३ ॥ ता वन मध्य कल्पद्रुम मूल । चंद्र कांति मणि शिलानुकूल ॥ मंडप लता अधिक विस्तार । चारण मुनि आये तिहिवार ॥१४॥ आरिंजय अमितंजय नाम । सोमदयालु धर्म के धाम ॥ राजा रानी पुरजन नारि । देखे मुनि तिन दृष्टि पसारि ॥ १५ ॥ सब नर नारि अनंदित भये । क्रीड़ा तज मुनि वन्दन गये ॥ त्रिया पुरुष चरणों अनुसरे । अष्ट द्रव्य सुनि पूजे खरे ॥ १६ ॥ धर्म ध्यान कहो मुनिराय । श्रद्धा सहित सुनो करभाय॥ राजा प्रश्न करी मुनि पास । सुनो धर्म भयोचित्त हुलास ॥ १७ ॥ दल बल सहित सम्पदा घनी । और भूमि षट खंड जीतनी ॥ महापुण्य जो यह फल होइ॥ गुरु विन ज्ञान न पावे कोइ ॥ १८॥ बार २ विनवे कर

सेव। पूर्व कहो भवान्तर देव॥ अवधि ज्ञान बल मुनिवर कहै। पर अहि क्षेत्र बनिक एक रहै॥ सुखित कुंवेर मित्रता नाम। साधे धर्म अर्थ अरु काम॥ जेष्ठ पुत्र श्री वर्म्म कुमार। मध्यम जय वर्मा गुण सार॥२०॥ लघु जय कीर्ति कीर्ति विख्यात। तीनों शुभ आनंदित गात॥ एक दिवस उपजो शुभ कर्म। वन में आये मुनिसों धर्म॥ २१॥ सेठ पुत्र मुनिवर वंदियो। श्री वर्म्मा जो अठाई लियो॥ नंदीश्वर व्रत विधि से पाल। भव २ पाप पुंज को जाल॥ २२॥ अंत समाधि मरण को पाय। इस पुर बज्र बाहु नृप आय। ताके विमला रानी जान। तुम हरि सेन पुत्र भये आन॥ २३॥ पूर्व व्रत पालो अभिराम। ताते लहो सुक्ख को धाम॥ जय वर्म्मा जय कीर्ति वीर। निकट भव्य गुण साहस धीर॥ २४॥ वन्दे गुरु जो धुरंधर देव। मन वच काय करी बहुसेव॥ तब मुनि पंच अनुव्रत दिये। दोनों भाव सहित व्रत लिये॥ २५॥ अरु नंदीश्वर व्रत तिन लियो। अंत समाधि मरण तिन कियो॥ हस्तनागपुर शुभ जहां बसे। तहां विमल वाहन नृपलसे॥ २६॥ ताके नारि श्रीधरा नाम। आरिंजय अमितंजय धाम॥

पुत्र युगल हम उपजे तहां । पूर्व पुण्य फल पायो अहां ॥ २७ ॥ गुरु समीप जिन दिक्षा लई । तप बल चारण पदवी भई ॥ यासे हम तुम पूर्व भ्रात । देखत प्रेम उपजो गात ॥ २८ पूर्व व्रत नंदीश्वर कियो । ताते राज चक्र पद लियो ॥ अब फिर व्रत नंदीश्वर करो । ताते स्वर्ग मुक्ति पद धरो ॥ २९ ॥ तब हरिसेन कहे कर जोर । व्रत नंदीश्वर कहो बहोर ॥ मुनिवर कहें द्वीप आठमो । तास नाम नंदीश्वर भनो ॥ ३० ॥ ताके चहुं-दिशि पर्वत परे । अंजन दधि मुख रति कर धरे ॥ तेरह तेरह दिशि दिशि जान । ये सब पर्वत बावन मान ॥ ३१ ॥ पर्वत पर्वत पर जिन ग्रेह । वह परिमाण सुनो कर नेह ॥ सौ योजन ताका आयाम । अरु पचास विस्तार सुतास ॥ ३२ ॥ उन्नति है योजन पच्चीस । सुर तहं आय नवावें शीश ॥ अष्टोत्तर सौ प्रतिमा जान । एक २ चैत्यालय मान ॥ ३३ ॥ गोपुर मणिमय के सुप्रकार । छत्र चमर ध्वज वंदन वार ॥ प्राति हार्य रिधि शोभा भली । तिन रवि कोटि सोम छविछली ॥ तास द्वीप में सुरपति आय । पूजा भक्ति करे बहु भाय ॥ देव अव्रती व्रत तहां करें । भाव भक्ति कर पातिक हरें

॥ ३५ ॥ तास द्वीप सम्बन्धी सार । व्रत नंदीश्वर को अधिकार ॥ यहां कहो जिनवर सुप्रकाशि । आदि अनादि पुण्य की राशि ॥ जो व्रत भव्य भाव से करें । भव २ जन्म जरामय हरें ॥ ताव्रत को सुनिये अधिकार । वर्ष २ में त्रय २ बार ॥ ३७ ॥ आषाढ़ कार्त्तिक अरु जो फाग । शाखा तीन करो अनुराग ॥ आठो दिन आठैं पर्यंत । भक्ति सहित कीजे व्रत संत ॥३८॥ सातें को एकासन करो । कर संयम जिनवर मन धरो ॥ आठैं के दिन कर उपवास । जासे छूटे कर्म का त्रास ॥३९॥ करो प्रथम जिनका अभिषेक। जाते पातिक जांय अनेक ॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो । मुख परमेष्टि पंच उच्चरो॥ तादिन व्रत नंदीश्वर नाम । ताका फल सुनियो अभिराम ॥ फल उपवास लक्ष दश जान । श्रीजिनवर ने करो बखान ॥ ४१ ॥ दूजें दिन जिन पूजा करो । पात्र दान दे पातिक हरो ॥ अष्टविभूति नाम दिन सोय । तादिन एकासन करलोइ ॥२४॥ फल उपवास सहस्र दश होइ । अब तीजो दिन सुनियेलोइ जिन पूजा कर पात्रहि दान । भोजन पानी भात प्रमाण ॥४३॥ नाम त्रिलोक सार दिन कहो । साठ लाख

प्रोषध फल लहो ॥ चतुर्थ दिन कर आमोदर्य । नाम नाम चतुर्मुख दिनसोहर्य ॥४४॥ तहां उपवास लक्ष फल होइ । पंचम दिन विधि करियो सोइ ॥ जिन पूजा एकासन करो । हय लक्षण जु नाम दिन धरो ॥ ४५ ॥ फल चौरासी लक्ष उपास । जासे जाय भ्रमण भव त्रास॥ षष्टम दिन जिन पूजा दान । भोजन भात आमिली पान ॥ ४६ ॥ तादिन नाम स्वर्ग सोपान । व्रत चालीस लक्ष फल जान ॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान । कीजे भविजनका सन्मान ॥४७॥ सब सम्पत्ति नाम दिन सोइ भोजन भात त्रिवेली होइ॥ फल उपवास लक्षको जान। अष्टम दिन व्रत चितमें आन ॥४८॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो । पात्र दान दे सुकृत गुनो ॥ इन्द्रध्वज व्रत दिन तस नाम । सुमरो जिनवर आठो जाम ॥ ४९ ॥ तीन करोड़ अतिलाख पचास । यह फल होइ हरे सब त्रास ॥ यह विधि आठ वर्षमें होइ। भाव सहित कीजे भवि लोइ ॥५०॥ उत्तम सात वर्ष विधि जान । मध्यम पांच तीन लघुमान ॥ उद्यापन विधिपूर्वक रचो । वेदी मध्य माडनो रचो ॥ ५१ ॥ जिन पूजारुमहा अभिषेक । चन्द्रोपम ध्वज कलश अनेक ॥ छत्रचमर सिंहासन करो

। बहुविधि जिन पूजो अघहरो ॥ ५२ ॥ चारो दान सु-
पात्रहि देउ । बहुत भक्ति कर विनय करेउ ॥ बहुवि-
धिजिन प्रभावना होइ । शक्ति समान करो भविलोइ
॥५३॥ उद्यापन की शक्ति न होइ । तो दूनो व्रत कीजो
लोइ ॥ जिन यह व्रत कीनो अभिराम । तिन पद लयो
सुक्ख का धाम ॥ ५४ ॥ यह व्रत पूर्व महा फल लियो ।
प्रथम ऋषभ जिनवरने कियो ॥ अनंत वीर्य्य अपराजित
पाल । चक्रवर्त्ति पदवी भई हाल ॥ ५५ ॥ श्रीपाल मैना
सुंदरी । व्रत कर कुष्ठ व्याधि सब हरी ॥ बहुलक्ष नर
नारी व्रत करो । तिन सब अजर अमर पद धरो ॥५६॥
सुनो विधानराय हरिसेन । अतिप्रमोद सुख जंपैबैन ॥
सब परिवार सहित व्रत लयो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर
दयो ॥५७॥ व्रतकर फिर उद्यापन करो । धर्मध्यान कर
शुभ पदधरो ॥ अन्त समाधि मरण को पाय । भयोदेव
हरिसेन सुराय ॥ ५८ ॥ पर्यायान्तर जैहै मुक्ति । श्रेणिक
सुनो सकल व्रत युक्ति ॥ गौतम कहो सकल अधिकार
सुनो मगधपति चित्त उदार ॥५९॥ जो नरनारी यहव्रत
करैं । निश्चय स्वर्गमुक्ति पद धरैं ॥ संकट रोग शोकसब
जाहिं । दुःख दरिद्रता दूर बिलाहिं ॥ ६० ॥ यह व्रत

नंदीश्वर की कथा। हेमराज सु प्रकाशी यथा ॥ शहर कूटावा उत्तम थान। श्रावक करैं धर्म शुभ ध्यान ॥६१॥ सुने सदा ये जैन पुराण। गुणी जनों का राखैं मान॥ तिहिठा सुना धर्मसम्बन्ध। कीनी कथा चौपई बंध॥६२॥ कहैं सुनैं देवैं उपदेश। लहैं भाव से पुण्य अशेष ॥ जाके नाम पाप मिटि जांय। ता जिनवर के वंदों पांय ॥६३॥

इति श्री नंदीश्वर व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

९५ चेतन चारित्र ॥

[लावनी]

कुमति सुमति दो त्रिय चेतन के तिन का कथन सुनो नर नार। जासु श्रवण से निज स्वरूप लखि भव थिति घटि छूटे संसार ॥ टेक ॥ मिथ्या नींद से अचेत होकर सोवे सेज चतुर्गतिया। वक्त तीव्र कीता चिन्मूरति काल लब्धि आई हतिया ॥ सुरुचि तिष्ट हिय सम्यक् दर्शन छोड़ गये अघ निज लतिया। सचेत होकर कुमति से क्यों न लगी मेरी छतिया ॥ शेर ॥ सुबुधि बोली कंथ से वेरिन कुमति बलवान रे। लखिं आप को के जिनभनो कर जेर डारो ज्ञानरे॥ वर बुद्धि वाला सीख धरि तब कुबुधि रिस होकर चली। तात

से पुत्री भने पिय हरी मोकों वेकली ॥ सुता बात सुन अनंग भेजा चलो बुलाया है दरबार ॥ जासु० ॥ १ ॥ कहा दूत से जाव न जावें लड़ने का धाना होगा । कही आय नृप से नहीं आवे लड़ने फौज जाना होगा ॥ राग द्वेष को हुक्म दिया सज सुभट यहां लाना होगा। सात व्यसन सरदार साथ हो चल के समर ठाना होगा ॥ शेर—करते गमन दल ले वहां से सन्मुख आगे किया । पहुंच पुर चित को लखो गढ़ निकट जा डेरा किया । चिदानंद लखि सेन को अब तुरत ही बुलाया ज्ञान को । आके कहा लड़ने की त्यारी कर हरो वेईमानको ॥ कहे बोध से बड़े शूरमा बुलावो आवें मम दरबार ॥ जासु० ॥ २ ॥ दान शील तप भाव धार सत चारित्र बल धर सजि आया । दर्शन उपशम संतोष समभाव सुभाव को बुलवाया ॥ विवेक चेतन सुध्यान गुन बल दल का पार नहीं पाया । सावधान हो प्रबोध लड़ने का डंका बजवाया ॥ ॥ शेर ॥

युद्ध दोनों मिल हुआ मोहन भजा होगाफला । सारा विवेक ने शात को पुर देश भागा काफला ॥ हार अबुल कहे जा प्रतिज्ञाना पकड़ला । और सेना साथ ले अत भंग करके जकड़ला ॥ पहुंचे लड़न को सम्

दल लेकर साजे सूरमा ले हथियार ॥ जासु० ॥ ३ ॥ दोनोंमें मिल पड़ी लड़ाई मची मार होड़ा होड़ी। मिथ्या सास्वादन में जीव को करे मोह छोड़ा छोड़ी॥ मोह बली जिसे करे जेर राखे सत्तर कोड़ा कोड़ी। तिसे जीत जा मिले अव्रतपुर जोड़ा जोड़ी ॥ शेर ॥ मिल एक दश प्रतिमासु पहुंचे देश व्रत पुर सार में। आगे न जाते शत्रु देवे रोक बैठे द्वार में ॥ ध्यान तेगा मार के सप्तम नगर चलता हुवा। तव मोहने सव शूर ले लड़ने को फिर चलता हुआ ॥ राग सैन चले कषाय निन्दा विषय त्याय प्रमत में डार ॥ जासु० ॥ ४ ॥ अप्रमत्त किम राज होय कहे हंस इन्से कैसे छूटे। अट्ठाइस गुण दो दश तप वे वाइस परीष सहै इन लूटे॥ सप्तम पुर आता रावल जव ध्यान तेज की लौ फूटे। प्रथम शुक्ल वल अष्टम थिरता नव में मोह नहीं टूटे॥ शेर—सव ग्राम जीते जाय के हता मोह यह कैसे टले। जा शूर ले घेरा गांव सब उपसंत तक मेरा चले ॥ पोंहचे वहां छिप शूरमा जिय निकस जातह राय के। सूक्ष्म सांपराय नगरी आप प्रघटे आय के ॥ लोभ मार वह भये निशंकित कौन लड़ेगा वारंवार ॥जासु०॥

॥ ५ ॥ पकड़ बांह मिथ्यात में डारा करा मोहने ऐसा वल । चिदानंद निजबुला लड़ने को जोरा अपना दल॥ तीन करण से सातो क्षय करि लीना अवृत पुर झट चल । देश व्रत पुर लिया अनूपम अप्रतिख्यान डारा दल मल ॥ शेर ॥ प्रतिख्यान को नाश कर षट् सप्त पहुंचे जाय के । दो करण से तीन मारे लीना वसुपुर जायके । अनुव्रत करण छत्तीस मारे लोभ को ततछिण हरा । तवही उपशम उलंघि के बारह में पोहचा जा-खरा ॥ प्रतिख्यान चारित्र प्रघट तहां द्वितीय शुक्ल असि कर गहिसार ॥ जाग्र० ॥ ६ ॥ सोलह शूरमा तहां विनाशे दोष अठारह गये कट फट । प्रघटे गुण छया-लीस जहां पर लोका लोक लखा ज्वट पट ॥ निरोध योग निर्वृत्य किया कर कृपाण गहि लीना झट पट । अयोगपुर का राज्य लिया जहां प्रकृति पचासी गई हट छट ॥ शेर ॥ पहुंचे जाकर मोक्ष पुर जहां गुण होते भये । अक्षय अनादि अनंत सुख में लीन जब होते भये॥ निज शरीर से हीन कछुक पुरुषाकार प्रदेश है । आपे आप निजग्र पर का नहीं लवलेश है॥ क्षमा धार शोधो ज्ञानी जन लघु धी रूपचंद कहै पुकार ॥ जाग्र०७॥

॥ इति ॥

९६ अद्याष्टक ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥ १ ॥ अद्य संसार गंभीर पारावारः सुदुस्तरः । सुतरोऽयं क्षणो नेव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नातोऽहं धर्म तीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ३ ॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्व मङ्गलम् । संसारार्णव-तीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ४ ॥ अद्य कर्माष्टक ज्वालं विधूतं सकषायकम् । दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ५ ॥ अद्य सौम्याग्रहाः सर्वे शुभाश्चैका दशस्थिताः । नष्टानि विघ्न जालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणां दुःखदायकः । सुखसङ्गं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ७ ॥ अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादन कारकम् । सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवाकरः । उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥ अद्याहं सुकृती भूतो निर्धूता शेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ १० ॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमा-

नतः । तस्य सर्वार्थसंसिद्धि र्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ११ ॥
इति अष्टाष्टकं समाप्तम् ॥

१७ महावीराष्टक ॥

[शिखरणी छन्द]

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावश्चिदचितः । समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसन्तोऽन्तरहिताः ॥ जगत्साक्षी मार्गप्रगटनपरो भानुरिव यो । महावीर स्वामी नयन पथगामी भवतु मे ॥१॥ अताम्रं यच्चक्षुः कमल युगलं स्पन्द रहितं, जनान्कोपापायं प्रगटयति वाभ्यन्तरमपि ॥ स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला । महावीर० ॥ २ ॥ नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं । लसत्पादाम्भोजद्वय मिह यदीयं तनुभृतां ॥ भवज्वाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि । महावीर० ॥ ३ ॥ यदर्चाभावेन प्रमुदित मना दर्दुर इव । क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥ लभन्ते सद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमु तदा । महावीर० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगति । महावीर० ॥ ५ ॥ यदी

या वागाङ्गा विविधनयकल्लोलविमला । सद्ज्ञाना-म्भोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥ इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता । महावीर० ॥ ६ ॥ अनि-र्वारोद्रेक स्त्रिभुवनजयी कामसुभटः । कुमारावस्था-यामपि निजबलाद्येन विजितः ॥ स्फुर न्नित्यानन्द प्रश-मपदराज्याय सजिनः । महावी० ॥ ७ ॥ महामो-हातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग् । निरापेक्षो बन्धु विदितमहिमा मङ्गलकरः ॥ शरण्यः साधूनां भव भय भृता मुत्तमगुणो । महावीर० ॥ ८ ॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् । यः पठेच्छृणुयाच्चापि सयाति परमांगतिम् ॥ ९ ॥

॥ इति महावीराष्टकं स्तोत्रं समाप्तम् ॥

९८ अकलंकस्तोत्र ।

शार्दूल विक्रीडित छन्दः ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकाल विषयं सालोकमालोकितम् साक्षाद्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि ॥ राग-द्वेष भयामयान्तकजरा लोलत्व लोभादयो, नालं यत्पद-लंघनाय स महादेवो मया वन्द्यते ॥ १ ॥ दग्धं येन पुर त्रयं शरभवा तीव्रार्चिषा वन्हिना, यो वा नृत्यति मत्त-

वत्पितृवने यस्यात्मजोवागुहः ॥ सोऽयं किं मम शङ्करो भयतृषारोषार्ति मोहक्षयं । कृत्वायः स तु सर्वविन्तनुभृतां क्षेमंकरः शङ्करः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्दैत्येन्द्रवक्षःस्थलम् । सारथ्येन धनञ्जयस्य समरेयोऽमारयत्कौरवान् । नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतम् । विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महा विष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥ उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः । पात्रीदण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थितिम् ॥ आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशाम् । क्षुत्तृष्णाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्माकृतार्थोऽस्तुनः ॥४॥ योजग्ध्वापिशितंसमत्स्यकवलं जीवंच शून्यंवदन् । कर्त्ता कर्मफलंन भुंक्त इतियो वक्ता स बुद्धः कथम् ॥ यज्ज्ञानं क्षणवर्त्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तंसदा । योजानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धोमम ॥ ५ ॥ स्रग्धरा छंद ॥

ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात् । नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च । आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं । संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्ष सूत्री सुरयुवतिरसावेश विभ्रान्तचेताः । शम्भुःखट्वाङ्गधारीगिरि-

पतितलयापांगलीलानुविद्धः। विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद्गोपनाथस्यमोहादर्हन्विध्वस्तरागोजित सकल भयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥७॥ शार्दूलविक्रीडित छन्दः ॥

एकोनृत्यति विप्रसार्य कुकुभां चक्रे सहस्रंभुजानेकः शेषभुजंगभोगशयने व्यादाय निद्रायते। दृष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता। मेते मुक्तिपथं वदन्तिविदुषा मित्थंतदन्यद्भुतम् ॥८॥ सृग्धराछन्दः ॥

यो विश्वं वेदवेद्यं जनन जलनिधेर्भङ्गिनः पारदृश्वा-पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम्। तंवन्दे साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोपद्विपंतं बुद्धं वा वर्द्धमानं शतदलनिलयं केशवंवा शिवंवा ॥९॥

शार्दूलविक्रीडित छंदः ॥

मायानास्ति जटा कपालमुकुटं चन्द्रोन मूर्द्धावली खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रंमुखं। कामो यस्य न कामिनी न च वृषोगीतं न नृत्यंपुनः सोऽस्मान्पातुनिरंजनोजिनपतिः सर्वत्रसूक्ष्मः शिवः। नो ब्रह्मांकित भूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं नो चन्द्रार्क-कराङ्कितं सुरपतेर्वज्राङ्कितं नैव च। षड्वक्त्राङ्कित बौद्धदेव हुतभुग्यक्षोरगैर्नाङ्कितं नग्नंपश्यत वादिनो जगदिदंजैनेन्द्रमुद्राङ्कितं ॥ ११ ॥ मौञ्जी दण्डकमण्डलुप्रभृतयो नो

लाञ्छनंब्रह्मणो । रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कोपीन खट्वाङ्गना । विष्णोश्चक्र गदादि शङ्खमतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं । नग्नंपश्यतवादिनो जगदिदंजैनेन्द्रमुद्राङ्कितम् १२

नाहङ्कारवशी कृतेन मनसा ना द्वेषिणा केवलं, नैरात्म्यं प्रतिपद्यनश्यति जनेकारुण्यबुद्ध्यामया । राज्ञः श्रीहिम शीतलस्य सदसिप्रायो विदग्धात्मनोबौद्धौघान्सकलान् विजित्यसघटः पादेनविस्फालितः ॥१३॥ स्रग्धराछन्दः॥

खट्वाङ्गंनैवहस्ते नच हृदिरचितालम्बते मुण्डमाला, भस्माङ्गं नैवशूलं नच गिरिदुहिता नैवहस्तेकपालं । चन्द्रार्द्धं नैव मूर्द्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः, तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं ऐश्वरं देवदेवं ॥१४॥

शार्दूलविक्रीडित छन्दः ॥

किं वाद्योभगवानमेय महिमा देवोऽकलङ्कः कलौ, काले योजनतासुधर्मे निहितो देवोऽकलङ्कोजिनः । यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरी जालेऽप्रमेयाकुला । निर्मग्ना तनुतेतरां भगवती ताराशिरः कम्पनम् ॥ सा तारा खलु देवता भगवती मन्यापिमन्यामहे, षण्मासावधि जाड्य सांख्यभगवद्भट्टाकलंकप्रभोः । वा कल्लोल परम्पराभिरमते-नूनं मनो मज्जनव्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः सन्ताडितेतस्ततः ॥ इति श्रीअकलङ्कस्तोत्र सम्पूर्णम् ॥

९९ भक्तामरस्तोत्रम् ॥

वसन्ततिलकावृत्तम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपा-
पतमोवितानम् । सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-
वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः
सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा, दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकना-
थैः । स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैस्तोष्ये किलाहमपि तं
प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २ ॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपा-
दपीठः स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् । बालं विहा-
य जलसंस्थितमिन्दुबिम्बमन्यः क इच्छति जनः सह-
सा ग्रहीतुम् ॥ ३ ॥ वक्तुं गुणान् गुणसमुद्रशशाङ्ककान्तान्
कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या । कल्पान्तकालपव-
नोद्धतनक्रचक्रं को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्
॥ ४ ॥ सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश । कर्तुं स्तवं
विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो
मृगेन्द्रं नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥
अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते
बलान्माम् । यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति त-
च्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ॥ ६ ॥ त्वत्संस्तवेन भव-

त्सन्ततिसंनिबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शा-
र्वरमन्धकारम् ॥ ७ ॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद
मारभ्यते तनुधियापि तवप्रभावात् । चेतो हरिष्यति-
सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः॥८॥
आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं त्वत्संकथापि जगतां
दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव पद्मा-
करेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥ ९ ॥ नात्यद्भुतं भुवन-
भूषण भूतनाथ भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः । तुल्या
भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह ना-
त्मसमं करोति ॥ १० ॥ दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः । पीत्वा पयः श-
शिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क
इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितास्त्रिभुवनैकललामभूत । तावन्त एव खलु ते-
ऽप्यणवः पृथिव्यां यत्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति॥१२॥
वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि निःशेषनिर्जितजगत्त्रि-
तयोपमानम् । बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य य-
द्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥ १३ ॥ सम्पूर्णमण्ड-
लशशाङ्क कलाकलाप शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घय-

न्ति । ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं कस्तान्निवारयति
संचरतो यथेष्टम् ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशा-
ङ्गनाभिर्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् । कल्पा-
न्तकालमरुता चलिताचलेन किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं
कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूरः कृत्स्नं
जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि । गम्यो न जातु मरुतां च-
लिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः
॥ १६ ॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीक-
रोषि सहसा युगपज्जगन्ति । नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहा-
प्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ॥ १७ ॥
नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं गम्यं न राहुवदनस्य
न वारिदानाम् । विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥ १८ ॥ किं शर्वरीषु
शशिनाह्नि विवस्वता वा युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमः
सुनाथ । निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके कार्यं कि-
यज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं यथा त्वयि वि-
भाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजोमहामणिषु याति यथा महत्त्वं नैवं तु काचशकले
किरणाकुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा

दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति। किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥ २१ ॥ स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता। सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥ २२ ॥ त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसमादित्यवर्णममलं तमसः परस्तात्त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः ॥२३॥ त्वामव्ययं विभुमचिन्त्य-मसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम्। योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः॥२४ बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्र-यशङ्करत्वात्। धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद्व्यक्तं त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति हराय नाथ तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय। तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय तुभ्यं नमो जिनभवोदधिशो-षणाय ॥ २६ ॥ को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेषैस्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश। दोषैरुपात्तविबुधाश्र-यजातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥ उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो

नितान्तम् । स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमो वितानं बिम्बं र-
वेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥ सिंहासने मणिमयूखशि-
खाविचित्रे विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् । बिम्बं
वियद्विलसदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र
रश्मेः ॥ २९ ॥ कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते
तव वपुः कलधौतकान्तम् । उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवा-
रिधारमुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥ छत्रत्रयं
तव विभाति शशाङ्ककान्तमुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकर
प्रतापम् । मुक्ताफलप्रकरजालविवृद्धशोभं प्रख्यापयत्त्रि-
जगतः परमेश्वरत्वम् ॥ ३१ ॥ गम्भीरताररवपूरितदिग्वि-
भागस्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः । सद्धर्मराजजयघो-
षणघोषकः सन् खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥
मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजात सन्तानकादिकुसुमोत्कर
वृष्टिरुद्धा । गन्धोदबिन्दुशुभमन्दमरुत्प्रपाता दिव्या
दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुम्भत्प्रभावल-
यभूरिविभाविभोस्ते लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ति
प्रोद्यद्दिवाकरनिरन्तरभूरिसंख्या दीप्त्या जयत्यपि नि-
शामपि सोमसौम्याम् ॥३४॥ स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्ग-
णेष्टः सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः । दिव्यध्वनिर्भवति
ते विशदार्थसर्वभाषास्वभावपरिणामगुणप्रयोज्यः ॥ ३५ ॥

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभि-
रामौ । पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः पद्मानि
तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥ इत्थं यथा तव वि-
भूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य। या-
दृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य
विकासिनोऽपि ॥३७॥ श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोल
मूलमत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम् । ऐरावताभमिभमु-
द्धतमापतन्तं दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥
भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभू-
मिभागः।बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि नाक्रामति क्र-
मयुगाचलसंश्रितं ते ॥३९॥ कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् । विश्वं जिघत्सु-
मिव सम्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम्
॥ ४० ॥ रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फ-
णिनमुत्फणमापतन्तम् । आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त-
शङ्क स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥ वल्ग-
त्तुरङ्गगजगर्जितभीमनादमाजौ बलं बलवतामपि भूपती-
नाम् । उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं त्वत्कीर्तनात्तम इ-
वाशुभिदामुपैति ॥ ४२ ॥ कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारि-
वाह वेगावतारतरणातुरयोधभीमे । युद्धे जयं विजित-
दुर्जयजेयपक्षा- स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ॥४३॥

अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठभयदोल्बणवाडवाग्नौ । रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयान पात्रास्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ॥ ४४ ॥ उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः । त्वत्पादपङ्कजरजोमृतदिग्धदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥ आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः । त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ॥ ४६ ॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् । तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धां भक्त्या मया रुचिर वर्णविचित्रपुष्पाम् । धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं भक्तामरस्तोत्रं समाप्तम् ।

१०० तत्त्वार्थ सूत्राणि ॥

॥ मङ्गलम् ॥

मोक्षमार्गस्य नेतारं, भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां, वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

शास्त्रप्रारम्भः॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥ तत्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ॥२॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्रवबन्ध संवरनिर्जरामोक्षास्तत्वम् ॥४॥ नामस्थापना द्रव्यभावतस्तन्न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थिति विधानतः ॥ ७ ॥ सत्संख्याक्षेत्र स्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वैश्च ॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमनः पर्य्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥ ९ ॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्येपरोक्षम् ॥ ११ ॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥ १४ ॥ अवग्रहेहावाय धारणाः ॥ १५ ॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥ अर्थस्य ॥ १७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥ १८ ॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥ १९ ॥ श्रुतं मतिपूर्वंद्व्यनेक द्वादशभदम् ॥२०॥ भव प्रत्ययोवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥ क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥ ऋजु विपुलमती मनःपर्य्ययः ॥ २३ ॥ विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥ २४ ॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनः पर्ययोः ॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥ २७ ॥ तदनन्तभागे मनः पर्य्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकादीनि भाज्यानि

युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥ मतिश्रुतावधयो विपर्ययश्च ॥ ३१ ॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगमसंग्रहव्यवहारऋजुसूत्रशब्दसमभिरूढैवंभूतानयाः ॥ ३३ ॥ ज्ञानदर्शनयोस्तत्त्वं नयानां चैव लक्षणम् । ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेस्मिन्निरूपितम् ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोध्यायः ॥ १ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रद्वितीयाध्यायः ।

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिकपारिणामिकौ च ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशति त्रिभेदा यथाक्रमम् ॥ २ ॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञानदर्शनदानलाभ भोगोऽपभोगवीर्य्याणि च ॥ ४ ॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रित्रिपंच भेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥ गतिकषायलिङ्ग मिथ्यादर्शनाज्ञानासंयमासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकषड्भेदाः ॥६॥ जीव भव्याभव्यत्वानि च ॥ ७ ॥ उपयोगोलक्षणम् ॥ ८ ॥ सद्विविधोष्टचतुर्भेदः ॥ ९ ॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥ समनस्कामनस्काः ॥ ११ ॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥१२॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥ १३ ॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १४ ॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५ ॥ द्विविधानि ॥ १६ ॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियं ॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगी भावेन्द्रियम् ॥ १८ ॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुः श्रोत्राणि

॥ १९ ॥ स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दास्तदर्थाः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥ वनस्पत्यन्तानामेकं ॥२२॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैक वृद्धानि ॥ २३ ॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २५ ॥ अणुश्रेणिगतिः ॥ २६ ॥ अविग्रहाजीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च सन्सारिणः प्राक्चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एकसमयाविग्रहाः ॥ २९ ॥ एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥ ३० ॥ सन्मूर्छनगर्भौपपादाज्जन्म ॥ ३१ ॥ सचित्तशीतसंवृत्ता सेतरामिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजांडजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥ देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥ शेषाणां सन्मूर्छनं ॥ ३५ ॥ औदारिक वैक्रियकाहारकतैजसकार्माणानि शरीराणि ॥ ३६ ॥ परम्परं सूक्ष्मं ॥ ३७ ॥ प्रदशतो संख्येयगुणं प्राक्तैजसात् ॥ ३८ ॥ अनन्त गुणेपरे ॥ ३९ ॥ अप्रतीघाते ॥ ४० ॥ अनादिसम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥ ४२ ॥ तदादीनि भाज्यानयुगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४३ निरुपमभोगमंत्यम् ॥ ४४ ॥ गर्भसन्मूर्छनजमाद्यम् ॥ ४५ ॥ औपपादिकं वक्रियकं ॥ ४६ ॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥ ४७ ॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभविशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसन्मूर्छनो नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येय वर्षायुषोनपवर्त्यायुषः ॥ ५३ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथ तत्वार्थसूत्र तृतीयाध्यायः ।

रत्नशर्करावालुकापंकधूमतमोमहातमः प्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥ १ ॥ तासु त्रिंशत्पंचविंशति पंच दश दश त्रिपंचोनैकनरकशतसहस्राणि पंच चैव यथाक्रमं ॥ २ ॥ प्रथमायाम्प्रतरास्त्रयोदशाधोधो द्विहीनाः ॥ ३ ॥ नारकानित्याशुभतरलेश्या परिणाम देहवेदनाविक्रियाः ॥ ४ ॥ परस्परो दीरितदुःखाः ॥ ५ ॥ संक्लिष्टासुरो दीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ॥ ६ ॥ तेष्वेकत्रिसप्तदश सप्तदशद्वाविंशतिः त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परास्थितिः ॥ ७ ॥ जंबूद्वीपलवणोदादयः शुभ नामानो द्वीपसमुद्राः ॥ ८ ॥ द्विर्द्विविष्कम्भाः ॥ ९ ॥ पूर्व्व पूर्व्व परिक्षेपिणोवलयाकृतयः ॥ १० ॥ तन्मध्येमेरुनाभिर्वृत्तोयोजनशतसहस्रविष्कम्भो जंबूद्वीपः ॥ ११ ॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १२ ॥ तद्विभाजिनः पूर्वापरायता ॥ १३ ॥ हिमवन् महाहिमवन् निषधनील रुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्व्वताः ॥ १४ ॥ हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजत हेममयाः ॥ १५ ॥ मणिविचित्रपार्श्वाउपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १६ ॥ पद्ममहापद्मतिगंछकेसरिमहा-

पुण्डरीक पुण्डरीकाः ह्रदास्तेषामुपरि ॥ १७ ॥ प्रथमो योजन सहस्रायामस्तदर्द्ध विष्कम्भोह्रदः ॥ १८ ॥ दश-योजनावगाहः ॥ १९ ॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करं ॥ २० ॥ तद्द्विगुणद्विगुणाह्रदाः पुष्कराणि च ॥ २१ ॥ तन्निवा-सिन्यो देव्यः श्रीह्रीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थि-तयः ससामानिकपरिषत्काः ॥ २२ ॥ गङ्गासिंधुरोहि-द्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता सीता सीतोदा नारी नर-कान्ता सुवर्ण रूप्यकूला रक्तारक्तोदा सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २३ ॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥ २४ ॥ शेषास्त्वपर-गाः ॥ २५ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृत्ता गंगासिन्ध्वाद-योनद्यः ॥ २- ॥ भरतः षट्विंशतिः पञ्चयोजनशतवि-स्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥ २७ ॥ तद्-द्विगुण द्विगुणविस्ताराः वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः ॥ २८ ॥ उत्तरा दक्षिण तुल्याः ॥ २९ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट् समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ ३० ॥ ता-भ्यामपरा भूमयोवस्थिताः ॥ ३१ ॥ एक द्विविपल्योपम-स्थितयो हैमवतकहरिवर्षकदेवकुरवकाः ॥ ३२ ॥ तथो-त्तराः ॥ ३३ ॥ विदेहेषु संख्येयकालाः ॥ ३४ ॥ भरतस्य विष्कम्भो जंबू द्वीपस्य नवति शतं भागः ॥ ३५ ॥ द्विर्धातु कीखण्डे ॥ ३६ ॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३७ ॥ प्राङ् मानुषोत्तरान्मनु-ष्याः ॥ ३८ ॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥ ३९ ॥ भरतैरावत विदेहाः कर्म्म

भूमयोऽन्यत्र देवकुरूत्तरकुरुभ्यः ॥४०॥ नृस्थितिः परावरे त्रिपल्योपमान्तरमुहूर्ते ॥४१॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥४२॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ तत्वार्थसूत्र चतुर्थाध्यायः ।

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्च द्वादश विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥ ३ ॥ इन्द्रसामानिक त्रयस्त्रिंशत् पारिषदात्मरक्षलोकपालानीक प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रयस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥ ५ ॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥ ६ ॥ काय प्रवीचारा आऐशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनः प्रवीचाराः ॥ ८ ॥ परेऽप्रवीचाराः ॥९॥ भवन वासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधि द्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराकिन्नरकिम्पुरुषमहोरगगंधर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह नक्षत्रप्रकीर्णक तारकाश्च ॥ १२ ॥ मेरु प्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालविभागः ॥ १४ ॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥ कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥ १७ ॥ उपर्युपरि ॥ १८ ॥ सौधर्मैशान सनत्कुमारमाहेन्द्र ब्रह्म ब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक्रमहाशुक्रशतारसहस्रारेष्वान-

नप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्त-जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभा-वसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोधिकाः ॥२०॥ गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतोहीनाः ॥ २१ ॥ पीतपद्म-शुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादित्य-वन्ह्यरुणगर्द्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ॥ २५ ॥ विज-यादिषु द्विचरमाः ॥ २६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषा-स्तिर्य्यग्योनयः ॥ २७ ॥ स्थितिरसुरनाग सुपर्णद्वीपशे-षाणां सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धं हीनमिताः ॥ २८ ॥ सौ-धर्मैशानयोः सागरोपमेधिके ॥२९॥ सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥३०॥ त्रिसप्त नवैकादशत्रयोदश पञ्चदशभिरधिकानितु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसुग्रैवेयकेषु विजया-दिषु सर्व्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरापल्योपममधिकं ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥३४॥ नारकाणां च ॥३५॥ द्वितीयादिषु ॥३६॥ दशवर्ष सहस्राणि प्रथमायाम् ॥३७॥ भवनेषु च ॥३८॥ व्यन्तराणां च ॥३९॥ परापल्योपममधिकम् ॥४०॥ ज्योतिष्काणां च ॥४१॥ तदष्टभागोपरा ॥ ६२ ॥ लौकान्तिकानामष्टौसागरोपमाणि सर्व्वेषाम् ॥ ६३ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रपञ्चमाध्यायः ।

अजीवकाया धर्म्माधर्माकाशपुद्गलाः॥१॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥ जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिणः पुद्गलाः ॥ ५॥ आ आकाशादेक द्रव्याणि ॥६॥ निःक्रियाणिच ॥ ७ ॥ असंख्येयाः प्रदेशाधर्म्माधर्म्मैक जीवानाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्यानंताः ॥ ९ ॥ संख्येया-संख्येयाश्चपुद्गलानां ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥ लोकाकाशेवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एक-प्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असंख्येयभा-गादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहारविसर्पभ्याम्प्र-दीपवत् ॥ १६ ॥ गतिस्थित्युपग्रहो धर्मा धर्मयोरुपका-रः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥ शरीरवाङ्मनः प्राणापाना पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुखदुःखजीवितमर-णोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परोपग्रहोजीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्तनापरिणामक्रियापरत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्शरसगंधवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥ २३॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्य-स्थौल्य संस्थानभेदतमश्छाया तपोद्योतवन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवस्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेदसंघातेभ्यः उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥ भेद संघाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥ स-द्द्रव्य लक्षणं ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१॥ अर्पितानर्पितसिद्धेः ॥३२॥

स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३॥ न जघन्य गुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादिगुणानांतु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौपारिणामिकौच ॥ ३७ ॥ गुणपर्य्ययवद्द्रव्यं ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९॥ सोऽनंतसमयः ॥४०॥ द्रव्याश्रया निर्गुणागुणाः ॥४१॥ तद्भावः परिणामः ॥४२॥ इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रषष्ठोऽध्यायः ।

कायवाङ्मनः कर्मयोगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकाषायाकषाययोः साम्परायिकेर्य्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रिय कषाया व्रतक्रियाः पञ्च चतुः पञ्चपञ्चविंशतिः संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥५॥ तीव्रमन्द ज्ञाताज्ञात भावाधिकरण वीर्य विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतिकषायविशेषस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्त्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गाद्द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परं ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिन्हव मात्सर्यान्त रायासादनोपघाताज्ञानदर्शनावरणयोः ।१०। दुःख शोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूत वृत्यनुकम्पादानसराग संयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलि श्रुत संघ धर्म देवावर्णवादो दर्शन मोहस्य

॥ १३ ॥ कषायोदयात् तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥ मायातैर्य्यग्योनस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भ परिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥ स्वभाव मार्द्दवंच ॥ १८ ॥ निश्शीलव्रतत्वं च सर्वेषां ॥ १९। सराग संयम संयमासंयमाकामनिर्ज्जराबालतपांसि दैवस्य ॥ २० ॥ सम्यक्त्वंच ॥ २१॥ योगवक्रताविसंवादनंचाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥२३॥ दर्शन विशुद्धिविनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग संवेगौशक्तिस्त्यागतपसी साधु समाधिर्वैयावृत्यकरण मर्हदाचार्य्ये बहुश्रुत प्रवचन भक्तिरावश्यकापरिहाणि मार्ग प्रभावनाप्रवचन वात्सल्यत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिंदा प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥२५॥ तद्विपर्य्ययोनीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य॥२६॥विघ्नकरणमन्तरायस्य॥२७॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथतत्वार्थसूत्रसप्तमाध्याय: ।

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्योविरतिर्व्रतम् ॥ १ ॥ देशसर्वतोणुमहती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादान निक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानिपंच ॥ ४ ॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्य नुवीचिभाषणं च पञ्च ॥५॥ शून्यागारविमो-

चिताबासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्मो विसंबादाः पंच ॥ ६ ॥ स्त्रीरागकथाश्रवण तन्मनोहरांग निरीक्षण पूर्व रतानुस्मरण वृष्येष्ट रसस्वशरीर संस्कार परित्यागाः पंच ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय विषय रागद्वेषविवर्जनानि पंच ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहा मुत्रा-पायावद्यदर्शनं ॥ ९ ॥ दुःखमेववा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोद कारुण्यमाध्यस्थानि च सत्वगुणाधिक्यक्लिश्यमाना विनयेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ वासंवेग वैराग्यार्थं ॥१२॥ प्रमत्तयोगात्प्राणाव्यपरोपणंहिंसा ॥ १३ ॥ असदभिधान मनृतं ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्छा परग्रहः ॥१७॥ निश्शल्यो व्रती ॥१८॥ आगार्य्यनगारश्च ॥१९॥ अणुव्रतोगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदंड-विरति सामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणांतिकीस-ल्लेखनायोषिता ॥ २२ ॥ शंकाकांक्षाविचिकित्सान्यदृष्टि प्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥ २३ ॥ व्रतशीलेषु पंच पंच यथाक्रमम् ॥ २४ ॥ बन्धवधछेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यान-कूटलेख क्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥ स्तेनप्रयोगस्तदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाह करणे

त्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीता गमनानंगक्रीड़ा काम ती-
व्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्र वास्तु हिरण्यसुवर्णधनधान्यदा-
सीदास कुप्यभांड प्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वा धस्तिर्यं-
ग्व्यतिक्रम क्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥ ३० ॥ आनयन
प्रेष्यप्रयोगशव्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपः ॥ ३१ ॥ कन्दर्पकौ
त्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्या-
नि ॥३२॥ योगदुःप्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥
अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादर-
स्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्त सम्बन्धसन्मिश्राभिषव-
दुःपक्काहाराः ॥३५॥ सचित्तनिक्षेपा पिधानपरव्यपदेशाकर-
णमात्सर्य्ये कालातिक्रमाः ॥३६॥ जीवितमरणाशंसामित्रा
नुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं स्वस्याति-
सर्गोदानं ॥३८॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥३९॥
इति तत्वार्थाधिगमे मोक्ष शास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ तत्वार्थसूत्र अष्टमाध्यायः ॥

मिथ्यादर्शनाविरति प्रमादकषाययोगाः बंध हेतवः
॥ १ ॥ सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानां
दत्ते सबन्धः ॥२॥ प्रकृतिस्थित्यनुभाग प्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥
आद्योज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नाम गोत्रा-
न्तरायाः ॥ ४ ॥ पंच नवद्व्यष्टाविंशतिश्चतुर्द्विचत्वा
रिंशद्द्वि पंच भेदायथाक्रमम् ॥ ५ ॥ मतिश्रुतावधिमनः

पर्य्ययकेवलानाम् ॥६॥ चक्षुरवधिकेवलानां निद्रा निद्रा निद्रा प्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यान गृद्धयश्च ॥ ७ ॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥ दर्शनचारित्र मोहनीयाकषाया कषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्विनवषोडशभेदाः ॥९॥ सम्यक्त्व मिथ्यात्वतदुभयान्यकषाया कषायौ हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सा स्त्रीपुंनपुन्सक वेदानन्तानुवन्ध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोध मान मायालोभाः ॥ १० ॥ नारकतैर्य्यग्योनिमानुष्यदैवानि ॥११॥ गतिजाति शरीरांगोपांगनिर्माण वन्धन संघातसंस्थान संहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यगुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वास विहायोगतयः प्रत्येक शरीरत्रस सुभग सुस्वर शुभ सूक्ष्म पर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थंकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चै र्नीचैश्च ॥ १२ ॥ दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥ आदितस्तिसृणामंतरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटी कोट्यः परास्थितिः ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नाम गोत्रयोः ॥ १६ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमान्यायुषः ॥ १७ ॥ अपरा द्वादश मुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नाम गोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ताः ॥ २० ॥ विपाकोनुभवः ॥ २१ ॥ सय थानाम् ॥ २२ ॥ ततश्च निर्ज्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययो सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिता, सर्वात्मप्र-

देशेष्व नन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे अष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥

अथ तत्वार्थसूत्र नवमाध्यायः ॥

आस्रव निरोधः संवरः ॥ १ ॥ सगुप्तिसमितिधर्म्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा निर्जराच ॥३ ॥ सम्यग्योगनिग्रहोगुप्तिः ॥ ४ ॥ ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः ॥ ५ ॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौच संयमतपस्त्यागाकिञ्चनब्रह्मचर्याणि धर्माः ॥ ६ ॥ अनित्या शरण संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्या तत्वानुचिंतनमनु प्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवन निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्या रतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशवधवन्धनयाचना लाभरोग तृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥ सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥ एकादश जिने ॥ ११ ॥ बादर साम्पराये सर्वे ॥ १२ ॥ ज्ञानावरणेप्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ ॥ १४ ॥ चारित्र मोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याशय्याक्रोश याचना सत्कार पुरस्काराः ॥ १५ ॥ वेदनीये शेषाः ॥१६॥ एकादयोभाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशतिः ॥ १७ ॥ सा

सामायिकच्छेदोपस्थापनपरिहार विशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराय यथाख्यातमिति चारित्रम् ॥ १८॥ अनशनावमौदर्य वृत्ति परिसंख्यान रस परित्याग विविक्तशय्यासनकायक्लेशबाह्यन्तपः ॥ १९ ॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्तस्वाध्यायव्युत्सर्गे ध्यानान्यन्तरम् ॥ २० ॥ नव चतुर्दश पंचद्विभेदाः यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ॥२१॥ आलोचन प्रति क्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गे तपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्योपाध्यायतपस्वी शैक्ष ग्लानगण कुलसंगसाधु मनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥ वाचना प्रच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्यो ॥ २६ ॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्ता निरोधोध्यानमन्तर्मुहूर्तात् ॥ २७ ॥ आर्तरौद्रधर्मशुक्लानि ॥२८॥ परे मोक्षहेतुः ॥ २९ ॥ आर्तममनोज्ञस्य ॥ सम्प्रयोगेतद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥ निदानं च ॥ ३३ ॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्त संयतानाम् ॥ ३४ ॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाक संस्थानविचयाय धर्म्मम् ॥३६॥ शुक्ले चाद्य पूर्वविदः ॥३७॥ परे केवलिनः ८६ पृथक्त्वैकत्व वितर्क्क सूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥ त्र्येकयोगकाय योगा योगानाम् ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवित-

कविचारे पूर्वे ॥४१॥ अविचारं द्वितीयम् ॥४२॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥ वीचारोर्थव्यञ्जनयोग संक्रान्तिः ॥ ४४ ॥

सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः ॥ क्रमशो संख्येय गुण निर्ज्जरः ॥ ४५ ॥ पुलाक वकुश कुशील निर्ग्रंथाः ॥४६॥ संयमश्रुत प्रति सेवना तीर्थलिंग लेश्योपपादस्थान विकल्पतः साध्याः ॥ ४७ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोऽध्यायः ॥९ ॥

अथ तत्वार्थसूत्रदशमोऽध्यायः ॥

मोह क्षयात्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्चकेवलम् ॥१॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यांकृत्स्न कर्म विप्रमोक्षोमोक्षः ॥२॥ औपशमिकादि भव्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवल सम्यक्त्व ज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्व प्रयोगादसंगत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥६॥ आविद्ध कुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकायाभावात् ॥८॥ क्षेत्रकालगतिलिंगतीर्थ चारित्रप्रत्येकबुद्धबोधित ज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतःसाध्याः ॥ ९ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

॥ इति जैनार्णव समाप्तम् ॥